कुमुदिनी

श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर

अनुवादक

धन्यकुमार जैन

"विशाल-भारत" पुस्तकालय,
१२०।२, अपर सरकुलर रोड, कलकत्ता

[१]

आज असाढ़ वदी सप्तमी—अविनाश घोषालका जन्म-दिन है। आज वे पूरे बत्तीस वर्षके हो गये। सवेरेसे बधाईके तारों और फूलोंके गुलदस्तोंका तांता बँध गया है।

कहानीका यही आरम्भ है, पर आरम्भके पहले भी प्रारम्भ है। दीया जलाते हैं शामको, पर उससे पहले सवेरे ही लोग बत्ती बटकर रख लेते हैं।

इस कहानीके पौराणिक युगकी खोज करनेसे मालूम होता है कि घोषालवंश किसी समय सुन्दरवनकी तरफ निवास करता था, उसके बाद हुगली जिलेके [illegible] आया। ये लोग पहले [illegible] पुराणोंके [illegible] आये या [illegible], इसका ठीक मालूम नहीं। जो लोग [illegible]

सकते है, शीघ्रतासे नये घर बनानेकी शक्ति भी उनमे पाई जाती है। घोपालवंशके ऐतिहासिक युगके प्रारम्भमे, उनके यहाँ काफी जमीन-जायदाद, गाय-बछडे, नौकर-चाकर, पर्व-त्यौहार, ब्याह-गौने दिखाई देते है। अब भी उनके पुराने गाँव सियाकुलीमे कम-से-कम दस बीघेमे फैला हुआ 'घोपाल-ताल' अपने काईके घूँघटके भीतरसे पक-रुद्धकण्ठसे उनके अतीत गौरवकी साक्षी दे रहा है। आज उस तालमे बस नाम ही उनका रह गया है, पानी चटर्जी जमींदारोका है। आखिर, एक दिन कैसे उन्हे अपनी पैतृक महिमाको तिलाजलि देनी पडी, यह जान लेना भी आवश्यक है।

इनके इतिहासके बीचके परिच्छेदोंमे देखते हैं कि चटर्जी जमींदारोसे इनकी रार छिडी है। अबकी झगडा जमीन-जायदादपर नहीं, बल्कि देवीकी पूजापर ही चल पडा था। घोपाल-परिवारने स्पर्धासे चटर्जियोसे दो हाथ ऊँची प्रतिमा बनवाई थी। चटर्जी-वंशने भी इसका जवाब दिया। रात-ही-रातमे विसर्जनकी सडकपर बीच-बीचमे कई ऐसे नापके तोरण खडे करवा दिये कि जिनमे घोपालोकी प्रतिमाका सिर ही अटक जाय। ऊँची प्रतिमा-वाले तोरण तोडने निकले, नीची प्रतिमा-वाले उनके सिर फोडने दौडे। फल यह हुआ कि देवीने अबकी बार और वर्षोंकी अपेक्षा बहुत ज्यादा रक्त वसूल किया। खून-खराबी हुई, मामला चला। उस मामलेका अन्त हुआ तब, जब घोपाल-परिवार सत्यानासके किनारे तक पहुच चुका था।

आग बुझ गई, ईंधन भी न रहा, सब-कुछ जलकर भस्म हो गया। चटर्जी-कुलकी गृहलक्ष्मीका मुँह फीका पड गया। मजबूरी हालतमे

सन्धि हो सकती है, पर उससे शान्ति नहीं होती। एक खडा है और एक पराजित होकर नीचे पडा है—लेकिन धधक दोनोके भीतर रही है। चटर्जी-कुलने घोषालोपर अन्तिम वार किया सामाजिक खंजरसे। अफवाह फैला दी कि 'असलमे थे ये भगज-ब्राह्मण, यहां आकर बात दबा-दुबू दी है, केंचुवा बन गया है सर्प!' जिन्होने आवाज उठाई, उनके गलेमे जोर था रुपयोका। स्मृतिरत्न पण्डितोंके मुहल्लेमे भी उनके अपकीर्तनके लिए अनुस्वार-विसर्गवाले ढोल-पीटनेवाले जुट गये। कलक-भजनके लिये उपयुक्त प्रमाण अथव दक्षिणा देना उस समय घोषालोकी शक्तिके बाहरकी बात थी। क्या करते, चण्डीमण्डप-विहारी पण्डित-समाजके उपद्रवसे बेचारोंको दूसरी बार फिर घर-द्वार छोडना पडा। रजबपुरमे मामूली झोंपडी बनाकर रहने लगे।

जो मारते है, वे भूल जाते हैं, पर जो मार खाते हैं, वे सहजमे नहीं भूल सकते। हाथकी लाठी गिर जानेपर वे मनकी लाठी घुमाते रहते है। बहुत दिनोंसे हाथ उनके काम नहीं देते, इसीलिए मानसिक लाठी उनकी वंश-परम्परासे चलती आ रही है। बीच-बीचमे उन्होंने चटर्जियोके किस तरह होश ठिकाने किये थे, झूठ-सच मिलाकर उसके किस्से अब भी उनके घरमें काफी भरे पडे है। फूँसकी झोपडीमे बैठकर बरसातकी रातोंमे लडके-बाले अब भी उन्हे मुँह-बाये सुना करते है। चटर्जियोंका नामी दारू सरदार रातको जब सो रहा था, तब बीस-पचीस लठैत जाकर उसे कैसे पकड लाये और घोषालोंकी कचहरीमे ले जाकर घरसे उसे रावन

कर दिया, इसका किस्सा आज लगभग सौ वर्षसे घोपालोंके परिवारमें चला आ रहा है। पुलिस जब खानातलाशी लेने आई, तब नायब भुवनमोहनने झट कह दिया—'हां, वह आया तो था कचहरीमें, अपने कामसे, काबूमें पाकर सालेकी कुछ बेइज्जती भी की गई थी। सुनते हैं, इसी रंजसे बैरागी होकर घरसे चल दिया है।' हाकिमको कुछ सन्देह नहीं हुआ। भुवनने कहा—'हुजूर, इसी सालके अन्दर अगर मैंने उसे न ढूँढ निकाला, तो मेरा नाम भुवनमोहन ही नहीं।' न मालूम कहांसे एक दासूके कदका गुण्डा खोज निकाला,—भेज दिया उसे सीधा ढाकाको। उसने चुराया था एक लोटा, थानेमें नाम लिखाया दासू मण्डल। हुई महीने-भरकी जेल। जिस दिन जेलसे छूटा, भुवनने उसी दिन मजिस्ट्रेटीमें खबर दी कि दासू सरदार ढाकाकी जेलमें है। तलाश करनेपर पता लगा कि दासू जेलमें था तो सही, पर अपनी दुलाई जेलके बाहरके मैदानमें फेंककर चला गया है। साबित हुआ कि वह दुलाई दासू सरदारकी ही है। उसके बाद वह कहां गया, यह बतलानेकी जिम्मेदारी भुवनपर तो थी नहीं।

ये कहानियाँ दिवालिये वर्तमानकी पुराने जमानेकी 'चेक' हैं। गौरवके दिन बीत चुके हैं, इसीलिये गौरवका पुरातत्त्व बिलकुल पोला होनेसे इतना ज्यादा बजता है।

कुछ भी हो, जैसे तेल निबटता है, वैसे ही दीपक बुझता है, वैसे ही किसी समय रात भी बीत जाती है। घोपाल-परिवारमें सूर्योदय दिखलाई दिया अविनाशके बाप मधुसूदनकी जबरदस्त तक़दीरसे।

[२]

मधुसूदनके बाप आनन्द घोषाल रजबपुरके आढ़तियाके यहाँ मुनीम थे। मोटा खाना, मोटा पहनना, इसीमें गुजर करते थे। घरकी स्त्रियोंके हाथोंमें थे मामूली कड़े, और पुरुषोंके गलेमे रक्षामन्त्रके पीतलके तावीज और बेलके गोंदसे मँजे हुए खूब मोटे-मोटे जनेऊ। ब्राह्मणकी मान-मर्यादाका प्रमाण क्षीण हो जानेसे जनेऊ ही ब्राह्मणत्वका प्रमाण रह गया था।

गाँवके स्कूलमें मधुसूदनने प्राथमिक शिक्षा पाई। साथ-साथ नि शुल्क शिक्षा पाई नदीके किनारे, आढ़तके सामनेवाले चौकमे और सनकी गाँठोपर बैठकर। गाँवके किसान, व्यापारी, खरीददार और गाड़ीवानोकी भीड़मे ही वह छुट्टी मनाता था,—बाजारमे जहा टीनके छप्परोंमे सची हुई गुड़की गागरें, तम्बाकूकी गाँठें, मट्टीके तेलके कनस्तर, सरसोंके ढेर, चना-मटरके बोरे, बड़े बड़े तौलनेके काँटे और बाँट रखे रहते हैं, वहीं घूम-फिरकर उसे बगीचेमे टहलनेका आनन्द मिलता था।

बापने सोचा कि लड़का आगे चलकर कुछ बनेगा ज़रूर। ठल-ठालकर दो-चार परीक्षा पास करा देनेसे, स्कूल-मास्टरीसे लेकर मुहर्रिंगी या वकालत तक भले-आदमियोंके जो कुछ मोक्ष-तीर्थ हैं, उनमेंसे किसी-न-किसीमे मधु भिड़ ही जायगा। अन्य तीन लड़कोंका भाग्यरेखा गुमाश्तागीरीमे ही ठकड़ा गाडीकी तरह अटककर रह

गई। उनमेसे कोई तो आढतियेकी गद्दीमे जा डटा, और कोई ताल्लुकेदारके दफ्तरमे कानमे कलम खोंसकर उम्मेदवारीमे बैठ गया। आनन्द घोपालके क्षीण 'सर्वस्व' के भरोसे मधुसूदनने कमरा लिया कलकत्तेकी एक मेसमे।

अध्यापकोंको आशा थी कि परीक्षामे पास होकर यह लडका कालेजका नाम रखेगा। इतनेमे बाप गये मर। पढ़नेकी किताबें, मय नोटबुकोंके, वेचकर मधुने प्रतिज्ञा कर ली कि अब वह रोजगार ही करेगा। छात्रोंमे सेकेन्ड-हैन्ड किताबें वेचकर रोजगार शुरू हुआ। माँ रोती थी—उसे बडा भरोसा था, परीक्षा पासके रास्तेसे लडका घुसेगा 'भद्र'श्रेणीके व्यूहमे, और उसके बाद घोपाल-वशवडकी चोटीपर उडेगी क्लार्की-वृत्तिकी जयपताका।

बचपनसे ही, मधुसूदन जैसे माल जाँचनेमे पक्का था, अपने साथी मित्र छाँट लेनेमे भी वह उतना ही होशियार था। कभी धोखेमे नहीं आया, और न ठगा गया। उसका प्रधान सहाध्यायी मित्र था कन्हैयालाल गुम। उसके पुरखा वडे-वडे सौदागरोंके यहा गुमाश्तागीरी करते आये हैं। बाप नामी केरोसिन-कम्पनीके आफिसमे उच्च पदपर काम करते हैं।

भाग्यसे उन्हींकी लडकीका विवाह था। मधुसूदन कमरसे दुपट्टा बाँधकर काममे जुट गया। छप्पर छवाना, फूल-पत्तियोंसे मण्डप सजाना, छापेखानेमे खडे रहकर सुनहली स्याहीमे चिट्ठिया छपाना, चौकी कार्पेट वगैरह भाडेपर लाना, द्वारपर रहकर स्वागत करना, परोसना वगैरह, कोई भी काम बाकी न छोडा। इस मौकेपर

उसने ऐसी बुद्धिमानी और तजुरबेका परिचय दिया कि रजनी बाबू बहुत ही खुश हुए। वे कामके आदमीको पहचानते थे, समझ गये कि यह लड़का तरक्की करेगा। अपनी गाँठसे रुपये डिपोजिट कराके मधुको रजनपुरमें कैरोसिन तेलकी एजेन्सी दिलवा दी।

सौभाग्यकी दौड़ शुरू हुई, इस दौड़में कैरोसिनका डिपो बेचारा न जाने कहाँ पीछे छूट गया। जमाके खानेकी मोटी-मोटी रकमोंपर पैर फकता हुआ व्यापार सन्नाता हुआ आगे बढ़ा—गलीसे बड़ी सड़कपर, खुदरासे थोकमें, दूकानसे आफिसमें, उद्योगपर्वसे स्वर्गारोहणमें। सबने कहा—"तकदीर इसीका नाम है।" अर्थात्, पूर्वजन्मकी स्टीमसे ही इस जन्मकी गाड़ी चल रही है। मधुसूदन खुद समझता था कि उसे ठगनेमें भाग्यने कुछ कोर-कसर न रखी थी, सिर्फ हिसाबमें वह भूला नहीं, इसी वजहसे जीवनके परीक्षाफलमें परीक्षकका 'क्रास-मार्क' (फेलका निशान) नहीं पड़ा,—हिसाबकी कमजोरीसे जो फेल होनेमें मजबूत हैं, परीक्षकके पक्षपातपर वे ही कटाक्ष किया करते हैं।

मधुसूदनको गरूर है। अपनी अवस्थाके बारेमें वह किसीसे बातचीत नहीं करता, पर अन्दाजसे इतना तो मालूम होता है कि सूखी नदीमें बाढ़ आई है। बंगालमें, ऐसी हालतमें लोग सहज ही व्याहकी चिन्ता करते हैं, अपने इस जीवनकी सम्पत्तिके भोगको वंशावलीके मार्गसे मृत्युके बादके भविष्यमें प्रसारित करनेकी इच्छा उनके हृदयमें प्रबल होती है। कन्यापक्ष-वाले मधुको उत्साह देनेमें कसर नहीं रखते थे। मधुसूदन कहता—'पहले एक पेट तो पूरा भर जाने दो, फिर दूसरे पेटका भार सिरपर लिया जा सकता है।' इससे मालूम

होता है, मधुसूदनका हृदय चाहे जैसा हो, पर पेट छोटा नहीं है।

इसी समय मधुसूदनकी होशियारीसे रजबपुरके सनने अपना नाम पैदा कर लिया। सहसा मधुसूदनने नदीके किनारेकी बहुतसी जमीन खरीद ली, तब जमीन सस्ती थी। बीसियो ईंटके पजाये जलवाये गये, नेपालसे बड़ी-बड़ी साखूकी लकडियाँ मँगाई गईं, सिलहटसे चूना आया और कलकत्तेसे मालगाडीमे लदकर करकेटकी टीनें। बाजारवाले दग रह गये। कहने लगे—"लो भला। पासमे अब तरी हो गई है, वह जाय कहा! अब बदहजमीकी पारी है, कारोबारका यहीं खातमा समझो।"

इस बार भी मधुसूदनके हिसाबमे गलती नहीं हुई। देखते-देखते रजबपुर व्यापारका एक भँवर (केन्द्र) बन गया। उसके चक्करमे दलाल भी आ जुटे, आ पहुचा मारवाडियोका झुण्ड, कुली-मजदूरोकी आमद हुई, मिल बन गई, और चिमनीसे निकले हुए कुण्डलायित धूमकेतुने आकाशमें कालिमाका विस्तार किया।

हिसाबकी बही देखे बिना ही मधुसूदनकी महिमा अब दूरसे ही बिना चश्मेके मालूम देने लगी। अकेला सारे गजका मालिक है, चहारदीवारीसे घिरी हुई दुमंजली इमारत है, गेटपर पत्थर जडा हुआ है—लिखा है "मधुचक्र"। यह नाम उसके कालेजके भूतपूर्व सस्कृत अध्यापकका रचा हुआ है। मधुसूदनपर अब वे यकायक पहलेसे कहीं ज्यादा स्नेह करने लगे हैं।

अब विधवा माँने आकर डरते-डरते कहा—"बेटा, भगवान् न जाने कब मिट्टी समेट ले, बहूका मुँह तो देख जाती?"

मधुने चेहरा गम्भीर बनाकर सक्षेपमे उत्तर दिया—"विवाह करनेमे भी समय नष्ट होता है, और ब्याहके बाद भी। मुझे इतनी फुरसत कहाँ है?"

ज्यादा कहा-सुनी करनेकी हिम्मत उसकी माँको भी नहीं, क्योंकि समयका भी बजार-भाव है। सभी जानते हैं कि मधुसूदनकी जवान एक है, जो कह दिया सो कह दिया।

और भी कुछ दिन बीते। उन्नतिके ज्वारमे कारोबारका दफ्तर गाँवसे बहकर कलकत्ते चला आया। नाती-नातनियोंके दर्शन-सुख-सम्बन्धी आशाको छोडकर माँ इस दुनियासे चल दी। घोषाल-कम्पनीका नाम आज देश-विदेशोंमे फैला हुआ है। उनका व्यापार अब पक्की दुनियादकी पुरानी विलायती कम्पनीके मुकाबलेमे चलता है, हर विभागमे अगरेज मेनेजर है।

मधुसूदनने अबकी स्वय ही कहा—"ब्याहकी फुरसत अब मिली।" कन्याके बाजारमे उसकी क्रेडिट सबसे ऊँची है। बहुत बडे अभिमानी खानदानोंके मान-भजन करनेकी भी शक्ति उसमे आ गई है। चारों तरफसे अनेकों कुलवती, रूपवती, गुणवती, धनवती, विद्यावती कुमारियोंकी खबरें आने लगीं। मधुसूदनने आँखें चढाकर कहा—"उन्हीं चटर्जियोंके घरकी लडकी चाहिये।"

चोट खाया-हुआ वश चोट खाये-हुए बाघकी तरह भयकर

[३]

अब कन्या-पक्षका हाल सुनो।

नूरनगरके चटर्जियोंकी अवस्था अब अच्छी नहीं है। ऐश्वर्य्यका बाँध टूट चला है। छ आनेके साझीदार जायदादका बटवारा कराके अलग हो गये, अब वे बाहरसे लाठी लिये दस-आनेवालोंकी सीमा हड़पते फिरते हैं। इसके सिवा, राधाकान्तजीकी सेवाके अधिकारको लेकर दस और छहमें जितनी ही सूक्ष्मरूपसे बटवारेकी कोशिश चली, उतनी ही उसकी सम्पत्ति स्थूलरूपसे वकील और मुख्तारोंके आँगनमें तीन-तेरह होकर बिखर गई, मुहर्रिर भी उससे वञ्चित न रहे। नूरनगरका वह प्रताप नहीं रहा, न आमद ही रही, पर खर्च बढ़ गया है चौगुना। नौ रुपये सैकड़ेकी व्याजकी नौ-पाँववाली मकड़ीने जमींदारीके चारों ओर अपना जाल बिछा दिया है।

चटर्जियोंके परिवारमें दो भाई हैं, और पाँच बहन। कन्याधिक्य अपराधका जुर्माना अब भी पटा नहीं है। चार बहनोंका व्याह कुलीनोंके घर बापके सामने ही हो गया था। इनकी दौलतकी सूरत तो है इस जमानेकी, और ख्याति है पुराने जमानेकी। दामादोंको दहेज देना पड़ा कुलीनताकी मोटी रकमोंसे और पोली ख्यातिके लम्बे नापसे। इसी वजहसे नौ-पर-सेन्टके डोरेमें गुँथे हुए कर्जके फन्देमें बारह-पर-सेन्टकी गाँठ पड़ गई। छोटा भाई कमर कसकर उठा, बोला—"विलायत जाकर बैरिस्टर हो जाऊँ, रोजगार किये बिना

बनेगी नहीं।" वह तो गया विलायत, बड़े भाई विप्रदासके सिरपर गृहस्थीका भार आ पड़ा।

इसी बीचमे घोपाल और चटर्जियोके भाग्यकी पतगमे परस्परकी खींचातानीसे फिरसे पेच पड गया। इतिहास भी सुन लो।

बडेबाजारके तनसुखदास हलवाईका इनपर था भारी कर्ज। बराबर ब्याज दे रहे थे, कोई बात नहीं। इतनेमे पूजाकी छुट्टियोमे विप्रदासका सहपाठी अमूल्यधन आ धमका, आत्मीयता दिखानेके लिए। वह था बडे अटर्नी-आफिसका आर्टिकिल्ड-हेडक्लार्क। इस चश्मेबाज युवकने नूरनगरकी हालत खूब अच्छी तरहसे देख ली। उसका कलकत्ता लौटना हुआ और तनसुखदासका रुपया मागना। बोला—'चीनीका नया काम खोला है, रुपयेकी सख्त जरूरत है।'

विप्रदास तकदीर ठोककर बैठ गये।

इस सकटके समयमे ही चटर्जी और घोपाल इन दोनों नामोमे दूसरी बार द्वन्द्वसमास हो गया। उसके पहले ही सरकार-बहादुरसे मधुसूदनको 'राजा'का खिताब मिल चुका था। छात्रबन्धु अमूल्यधनने आकर कहा—"नये राजा इस समय खुशमिजाज हैं, इस मौकेपर उनसे चाहे जितना कर्ज मिल सकता है।" सो ही मिला,—चटर्जियोका तमाम फुटकर कर्ज इकट्ठा करके ग्यारह लाख रुपया, सात-पर-सेन्टकी ब्याजपर। विप्रदासके जीमे जी आ गया।

कुमुदिनी उनकी अन्तिम और अवशिष्ट बहन है, वैसी ही उनकी पूँजीकी आज अन्तिम और अवशिष्ट दशा है। दहेज जुटाने और ढूँढनेकी बात सोचते ही आतक छा जाता है। देखनेमे वह सुन्दरी

है, लम्बी छरछरे वदनकी, जैसे रजनीगन्धाका पुष्पदण्ड हो, आँखें बड़ी-बड़ी न होनेपर भी घोर काली हैं, और नाक ऐसी मानो फूलकी पँखड़ियोंसे बनी हो। रंग है शंखकी तरह चिकना गोरा, सुन्दर सुडौल हाथ हैं, उन हाथोंकी सेवाका पाना कमलाका वरदान है, कृतज्ञ हो कर ग्रहण करना चाहिए। सारे मुँहपर एक वेदनामय सकरुण धैर्यका भाव है।

कुमुदिनी अपने लिए आप सकुचित है। उसकी धारणा है कि वह अभागिन है। वह जानती है कि पुरुष लोग गृहस्थी चलाते हैं अपनी शक्तिसे, और स्त्रियाँ लक्ष्मीको घरमें लाती हैं अपने भाग्यके जोरसे। उससे यह हो न सका। जबसे उसकी समझनेकी उमर हुई है, तभीसे वह चारों तरफ दुर्भाग्यकी पापदृष्टि ही देख रही है। और परिवारपर सवार है उसके कुँआरपनका भारी पत्थर, उसका जितना बड़ा दु ख है, उतना ही बड़ा अपमान। तकदीरपर हाथ दे मारनेके सिवा कुछ कर भी नहीं सकती। तदबीरका मार्ग विधाताने लड़कियोंको दिखाया ही नहीं, दी है सिर्फ एक व्यथा सहनेकी शक्ति। क्या कोई असम्भव बात सम्भव नहीं हो सकती ? किसी देवताका वर, किसी यक्षका धन, पूर्वजन्ममें दिये-हुए किसी एक बचे-खुचे कर्जकी वसूली ? कुछ भी तो मिले।

किसी-किसी दिन रातको बिछौनेसे उठकर, बगीचेके हिलते हुए झाऊके पेड़ोंकी चोटीकी तरफ ताकती रहती है। मन-ही-मन कहती, 'कहाँ हो मेरे राजपुत्र। कहाँ है तुम्हारा सात राजाओंका धन ? आकर बचाओ मेरे भाइयोंको, मैं सदा तुम्हारी दासी बनकर रहूँगी।'

वशकी दुर्गतिके लिए अपनेको वह जितनी ही अपराधिनी बनाती है, उतना ही हृदयके सुधापात्रको उँडेलकर भाइयोको अपना स्नेह देती है,—कठोर दु खसे निचोडा-हुआ उसका यह स्नेह है। कुमुदके प्रति अपना कर्तव्य न पाल सकनेके कारण भाइयोने भी उसे बडी व्यथाके साथ प्रेमसे बाँध रखा है। इस पितृ-मातृहीन बालिकाको भगवानने जिस स्नेहकी प्राप्तिसे वचित रखा है, भाई उसकी पूर्तिके लिये सदा उत्सुक रहते है। वह तो चाँदकी चाँदनीका टुकडा है, दैन्यके अन्धकारको उस अकेलीने मधुर कर रखा है, कभी-कभी जब वह अपनेको दुर्भाग्यका वाहन समझकर धिक्कारती है, भाई विप्रदास हसकर कहता है—"कुमू, तू खुद ही हम लोगोका सौभाग्य है, तुझे पाये बिना घरमे लक्ष्मी रहती कहाँ ?"

कुमुदिनीने घरही में पढना-लिखना सीखा है। वाहरका वह कुछ जानती ही नहीं। पुराने-नये दोनो समयके उजेले-अँधेरेमे उसका निवास है। उसकी दुनिया अस्पष्ट है—वहाँ राज्य करती हैं सिद्धेश्वरी, गन्धेश्वरी, घँटू और षष्ठीदेवी, किसी विशेष दिनमें वहाँ चन्द्रमा देखना मना है, शख बजाकर वहाँ ग्रहणकी कुदृष्टि भगाई जाती है, अम्बुवाचीके दिन दूध पीनेसे वहाँ सर्पका भय दूर होता है, मन्त्र पढकर, बकराकी मन्नत मानकर, सुपारी अरवा-चावल और पाँच पैसेकी सिन्नी देकर, गडा और तावीज बाँधकर उस दुनियाका शुभ-अशुभके साथ कारोवार होता है, स्वस्त्ययनके जोरसे भाग्य-सशोधनकी आशा—वह आशा हजार बार व्यर्थ होती है। प्रत्यक्ष देखनेमे तो यह आता है कि बहुधा शुभलग्नकी शाखामे शुभफल नहीं

लगते, तो भी वास्तविकतामें इतनी शक्ति नहीं कि प्रमाणों द्वारा वह स्वप्नका मोह दूर कर सके। स्वप्नकी दुनियामें विचार नहीं चलता, सिर्फ चलना है उसे मानकर चलना। इस दुनियामें दैवके क्षेत्रमें युक्तिकी सुसंगति, बुद्धिका कर्तृत्व और अच्छे-बुरेका निरयत्त्व न होनेसे ही कुमुदिनीके मुँहपर ऐसी करुणा है। वह समझती है, बिना अपराधके ही वह लाञ्छित है। आठ वर्ष हुए, उस लाञ्छनाको उसने बिलकुल अपनी ही समझकर अपनाया था—वह थी उसके पिताकी मृत्युकी दुर्घटना।

[४]

पुराने धनिकोंके घरमें पुरातन काल जिस किलेमें वास करता है, उसकी पक्की चिनाई होती है। बहुतसी ड्योढ़ियाँ पार करके तब कहीं नवीन काल वहाँ धँसने पाता है। जो लोग वहाँ रहते हैं, नये युग तक आ पहुँचनेमें वे बहुत 'लेट' (देर) हो जाते हैं। विप्रदासके बाप मुकुन्दलाल भी सरपट दौड़ते हुए नवीन युगको नहीं पकड़ सके।

उनका लम्बा गोरा शरीर है, घुँघराले बाल हैं, बड़ी बड़ी खिंची हुई आँखोंमें अप्रतिहत प्रभुत्वकी दृष्टि है। भारी आवाजसे जब किसीको पुकारते हैं, तो नौकर-चाकरोंकी छाती धड़कने लगती है। यद्यपि पहलवान रखकर नियमसे कुश्ती लड़नेका उन्हें अभ्यास है, देहमें ताकत भी कम नहीं, पर फिर भी उनके सुकुमार शरीरमें श्रमका चिह्न तक नहीं है। पहनावमें चुन्नटदार महीन तनजेबका

कुरता है, ढाकेकी धोती है जिसकी बड़े यत्नसे चुनी-हुई लाँग ज़मीनसे लग रही है, इस्ताम्बूल इत्रसे सुगन्धित वायु उनके आसन्न आगमनकी खबर पहले ही से देती है। सोनेका पनबट्टा हाथमें लिये खानसामा पीछे-पीछे है, दरवाज़ेके पास हरवक्त हाजिर तग़मा लगाये और चपरास डाले अरदली है। ड्योढीपर वृद्ध चन्द्रभान जमादार तम्बाकू बनाने और भाँग छाननेकी छुट्टीमें बेञ्चपर बैठा हुआ अपनी लम्बी दाढीको दो भागोंमें विभक्त कर बार-बार उसपर हाथ फेरकर कानोंसे बाँधता रहता है, और उसके नीचेके दरवान तलवार हाथमें लिये पहरा देते हैं। ड्योढीकी दीवालपर अनेक तरहकी ढालें, बाँकी तलवारें, बहुत दिनोंकी पुरानी बन्दूकें, बल्लम और बरछे लटक रहे हैं। बैठकमें मुकुन्दलाल बैठते हैं गद्दीपर, पीठके पास रहता है मसनद। पारिषद और मुसाहिब लोग नीचे बैठते हैं—सामने ही, दाएँ-बाएँ दोनों तरफ। हुक्का-बरदार इस बातसे वाकिफ़ है कि उनमें किनका सम्मान कौनसे हुक्केसे अक्षुण्ण रहता है—अडैमा, गैरजडैमा या सादेसे। मालिक साहबके लिए बड़ा-भारी नलीदार अलबेला है—गुलाबजलकी सुगन्धसे सुगन्धित।

मकानके और एक हिस्सेमें विलायती बैठक है, वहाँ अठारहवीं सदीके विलायती असबाब हैं। सामने ही बड़ा-भारी एक आईना है, जिसके काँचमें काला दाग पड गया है, उसके गिल्टी किये हुए फ्रेमके दोनों तरफ दो परवाली परियोंकी मूर्तियाँ हैं, जिनके हाथोंमें बत्तीदान लगा हुआ है। उसके नीचे टेबुलपर सोनेके पानीमें चित्रित काले पत्थरकी घडी और कितने ही विलायती काँचके खिलौने रखे हैं।

[५]

रासके समय खूब धूम मची। कुछ कलकत्तेसे और कुछ ढाकेसे आमोदका सरजाम आया। मकानके आँगनमे किसी दिन कृष्ण-लीला होती, तो किसी रोज़ कीर्तन। यहा औरतों और साधारण पाड-पडोसियोका जमघट होता। और बार तो तामसिक आयोजन होता था बैठकमे, अन्तःपुरवासिनियाँ—रातको उन्हे नींद नहीं, कलेजेमे काँटा-सा चुभता रहता—दरवाजेकी संधमेसे कुछ-कुछ उसका आभास ले जा सकती थीं। अबकी बार हुक्म हुआ, तवायफका नाच बजरेमे होगा—नदीके बहावमे।

'क्या हो रहा है'—देखनेका कोई उपाय न होनेसे नन्दरानीका मन रुद्ध-वाणीके अन्धकारमे पछाड खा-खाकर रोने लगा। घरका काम-काज, लोगोको खिलाना-पिलाना और देखा-भाली, सब-कुछ प्रसन्नमुखसे ही करना पडता है। जिगरमे वह काँटा हिलते-डुलनेमे छिन-छिनमे चुभता है, जी हाँपने लगता है, पर किसीको मालूम तक नहीं पडती। उधर रह-रहकर तृप्त-कण्ठसे शब्द निकलता है—'जय हो रानी माताकी।'

आखिर रासोत्सवकी मियाद खतम हुई, मकान खाली हो गया। सिर्फ झूठी पत्तलों और सकोरोके भग्नावशेषपर कौओ-कुत्तोंके काँव-काँव भाँव-भाँवका उत्तरकाण्ड चल रहा है। नौकरोंने नसैनी लगाकर बत्तियाँ उतार लीं, चँदोए खोल लिये। झाड़ोंकी अध-जली

बत्ती और सोलाके फूलोंकी झालरोके लिए मुहल्लेके लडकोने छीना-झपटी मचा दी। इस भीडमेसे बीच-बीचमे तमाचोंकी आवाज और रोना-चिल्लाना मानो आतिशबाजीके 'बान'की तरह आसमान फाड रहा था। अन्तःपुरके आँगनसे निकलकर उच्छिष्ट भात-तरकारीकी गन्धने पवनको अम्लगन्धी बना दिया था, वहाँ सर्वत्र ही क्लान्ति, अवसाद और मलिनता थी। यह शून्यता असह्य हो उठी जब मुकुन्दलाल आज भी वापस न आये। वहाँ तक पहुचनेका कोई उपाय न देख नन्दरानीके धैर्यका बाँध अचानक टूटकर मिट्टीमे मिल गया।

दीवानजीको बुलाकर परदेकी ओट मे से कहा—"उनसे कह दीजियेगा, वृन्दावनमे माके पास मुझे जाना पड रहा है। उनकी तबीयत ठीक नहीं है।"

दीवानजीने कुछ देर तक सिरपर हाथ फेरकर मृदुस्वरसे कहा—"मालिक साहबसे कहकर जाना ही ठीक होता, मालिक साहब आज-कलमे आ जायँगे, खबर आ गई है।"

"नहीं, अब देरी न कर सकूँगी।"

नन्दरानीको भी खबर लग गई थी, आज-कलमे आनेवाले है, इसीलिए तो जानेकी इतनी उतावली है। उन्हे निश्चय है कि जरासा रोने-धोने और फिर मना लेनेसे ही सब माफ हो जायगा। हर दफे ही ऐसा हुआ है। उपयुक्त दण्ड अपूर्ण ही रह जाता है। अबकी बार ऐसा हरगिज न होगा, इसीलिए दण्डकी व्यवस्था करके तुरन्त ही दण्डदाताको भागना पड रहा है। विदा होनेके ठीक

क्षण-भर पहले—पैर उठना नहीं चाहते—वह पलगपर औंधी पडकर फूट-फूटकर रोने लगीं, परन्तु जाना न रुका।

कातिकका महीना है। दिनके दो बजे हैं। धूपसे हवा गरम हो गई है। सडकके किनारेके सीसमके पेडोंकी मरमराहटके साथ कभी-कभी किसी स्वरभग कोयलकी कुहू-कुहू सुनाई पड जाती है। जिस सडकसे पालकी जा रही थी, वहाँसे कच्चे धानके खेतोंके उस पार नदी दिखाई देती थी। नन्दरानीसे रहा न गया, पालकीका दरवाजा खिसकाकर उस तरफ देखा, तो उस पार बजरा बँधा दीखा। मस्तूलपर पताका फहरा रही है। दूरसे मालूम हुआ, बजरेकी छतपर चिरपरिचित गोपी हरकारा बैठा है, उसकी पगडीका तमगा सूरजकी रोशनीसे चमचमा रहा है। जोरसे पालकीका दरवाजा बन्द कर दिया, कलेजेमें पत्थर-सा बैठ गया।

[६]

मुकुन्दलाल मानो मस्तूल-टूटे, पाल-फटे, दचोका-खाये, तूफ़ानसे टकराये जहाज थे, बडे सकोचमें बन्दरगाहमें आकर लगे। कसूरके बोझसे कलेजा भारी हो गया है। आमोद-प्रमोदकी स्मृतिने मानो अति-भोजनके बादकी जूठनकी तरह मनको अरुचिसे भर दिया है। उनके इस आमोदके जो उत्साहदाता और उद्योगकर्ता थे, वे यदि इस समय उनके सामने होते, तो मारे चाबुकोंके वे उनके होश ठिकाने ला सकते थे। मन-ही-मन प्रण किया—अब कभी भी ऐसा

न होने देंगे। उनके बिखरे हुए रूखे बाल, लाल-लाल आँखें और मुँहके अत्यन्त शुष्क भावको देखकर किसीकी हिम्मत ही न हुई, जो मालिकिनके चले जानेकी खबर देता। मुकुन्दलाल डरते-डरते भीतर पहुंचे। "बड़ी बहू, माफ करो, कसूर हो गया है, अब कभी ऐसा न होगा"—यह बात मन-ही-मन कहते हुए सोनेके कमरेके दरवाजेके पास जाकर ठिठक गये, फिर धीरे-धीरे भीतर धँसे। मन-ही-मन निश्चय किया था कि अभिमानिनी बिछौनेपर पड़ी होगी। बिलकुल पैरोंके पास जा बैठेंगे, ऐसा सोचकर कमरेमें घुसते ही देखा—कमरा सूना है। छाती धड़क उठी। सोनेके कमरेमें बिछौनेपर नन्दरानीको अगर देखते, तो समझ लेते कि कसूर माफ करनेके लिये मानिनी आधा रास्ता आगे बढ़ आई है, परन्तु जब देखा कि बड़ी बहू सोनेके कमरेमें नहीं हैं, तो मुकुन्दलाल समझ गये कि आजका प्रायश्चित्त लम्बा होगा और कठिन भी। या तो आज रात तक बाट जोहनी पड़ेगी, या फिर और भी देर होगी। परन्तु इतनी देर तक धैर्य रखना उनके लिए असम्भव है। निश्चय किया कि पूरा दण्ड अभी सिर-माथे चढ़ाकर क्षमा वसूल किये लेते हैं, नहीं तो अन्न-जल ग्रहण नहीं करेंगे। बहुत अबेर हो गई है, अभी तक नहाना-खाना नहीं हुआ है, ऐसी दशामें सती-साध्वीसे कैसे रहा जायगा? कमरेसे बाहर निकलकर देखा कि प्यारी महरी बरामदेके एक कोनेमें घूँघट खींचे खड़ी है। पूछा—"तेरी बड़ी-बहूजी कहाँ हैं?"

उसने कहा—"वे अपनी माको देखने वृन्दावन गई हैं, खसो।"

मानो अच्छी तरह समझ न सके, गला रुँध-सा आया, फिर पूछा—"कहाँ गई है ?"

"वृन्दावन। माजी बीमार हैं।"

मुकुन्दलाल पहले तो बरामदेकी रेलिंग थामकर खड़े हो गये, फिर तेजीसे बाहरकी बैठकमें अकेले जाकर बैठ गये। मुँहसे कुछ भी बोले नहीं। किसीको पास जानेकी हिम्मत भी न पड़ी।

दीवानजीने आकर डरते-डरते कहा—"तो मा-साहबाको बुलानेके लिए आदमी भेज दूँ ?"

कुछ उत्तर न दिया, सिर्फ उगली हिलाकर मना कर दिया। दीवानजीके चले जानेपर राधू खानसामाको बुलाकर कहा—"ब्रान्डी ले आ।"

सब दंग रह गये। भूकम्प जब पृथ्वीके गभीर गर्भसे सिर हिलाकर उठता है, तो जैसे उसे दबा रखनेकी कोशिश फिजूल है—निरुपाय होकर उसका उपद्रव सब सहना ही पड़ता है—यह भी वैसा ही है।

दिन-रात निर्जला ब्राण्डी उड़ने लगी। खाना-पीना तो करीब-करीब छूट ही गया। एक तो पहलेसे ही तबीयत खराब रहती थी, फिर चला यह जबर्दस्त अनियम। बस, विकारके साथ-साथ रक्त-वमन भी दिखाई दिया।

कलकत्तेसे डाक्टर आया,—रात-दिन सिरपर बरफ रखी जाने लगी।

किसीको देखते ही मुकुन्दलालको सनक सवार हो जाती,

उन्हें वहम हो गया है कि सारा घर उनके विरुद्ध कोई षड्यन्त्र-सा रच रहा है। भीतर-ही-भीतर एक शिकायत घुमड रही थी—"इन लोगोंने जाने क्यों दिया?"

अगर उस समय कोई उनके पास जा सकता था, तो वह एक कुमुदिनी ही। वह पास जाकर बैठती, मुकुन्दलाल उसके मुँहकी तरफ शून्यदृष्टिसे देखते रहते,—मानो उसकी आँखोंमें या अन्य किसी स्थानपर उन्हें उसकी माकी समानता नज़र आती हो। कभी-कभी उसके माथेको छातीसे लगाकर चुपचाप आँखें मीचकर पडे रहते, आँखोंके कोनोंसे पानी गिरने लगता, पर भूलकर भी कभी उससे माकी बात नहीं पूछते। इधर वृन्दावनको तार गया है। मा-साहबा कल ही आ जातीं, लेकिन सुना है कि रास्तेमें कहीं रेलकी पटरी टूट गई है।

[७]

उस दिन तृतीया थी, शामको जोरकी आँधी आई। बगीचेमें पेडोंकी डालियाँ तडतड् करके टूट-टूटकर गिरने लगीं। रह-रहकर मेहकी बौछार क्रुद्ध अधैर्यकी तरह झकझोरे दे रही है। ज्योनारके लिए जो छप्पर छाया गया था, उसकी करकेट-टीन उडकर तालमें जा गिरी। हवा, वाण-विद्ध व्याघ्रकी तरह गों-गों करके गुर्राती हुई सारे आकाशमें जोरोंसे पूँछ फटकारती फिरती है।

सहसा हवाके एक झकोरेसे खिडकियाँ और दरवाजे खडखडाकर काँप उठे। कुमुदिनीका हाथ मसककर मुकुन्दलालने कहा—"बेटी कुमू, तू क्यों डरती है, तूने तो कोई कसूर नहीं किया। वह देख दांत पीस रहे हैं, वे मुझे मारने आ रहे हैं।"

पिताके माथेपर बरफकी पोटली फेरते हुए कुमुदिनी कहती—"मारेंगे क्यों, बाबूजी? आँधी चल रही है, अभी थम जायगी।"

"वृन्दावन? वृन्दावन चन्द्र चक्रवर्ती। पिताजीके जमानेका पुरोहित—वह तो मर गया—भूत होकर गया है वृन्दावन। किसने कहा वह आयेगा?"

"बातें न करो, बाबूजी, जरा सो जाओ।"

"वह देख, किससे कह रहा है—खबरदार। खबरदार।"

"वह कुछ नहीं, हवाके झकोरे पेडोंको झकझोर रहे हैं।"

"क्यों, उसे इतना गुस्सा क्यों? ऐसा मैंने क्या कसूर किया है, तू ही बता बिटिया।"

"कुछ कसूर नहीं किया, बाबूजी। जरा सो जाओ।"

"वृन्दा दूती? वह तो मधु अधिकारी बनता था।"

झूठी करते क्यों निन्दा
अहो बिन्दा श्रीगोविन्दा—"*

आँखें मीचकर गुनगुनाने लगे।

---

* बगलामें है—"मिछे करो कैनो निन्दे,
ओगो बिन्दे श्रीगोविन्दे—"

"मुचर स्यामकी मधुर बाँसुरी
छीन कहू धरि देहु।
कै छाँडौं हौं ही वृन्दावन
अनत बसेरो लेंहु। *

माधू, ब्रान्डी ले आ।"

कुमुदिनी पिताके मुँहकी ओर झुककर बोली—"बाबूजी, यह क्या कह रहे हो?"

मुकुन्दलालने आँखें खोलकर देखा, देखते ही दाँतो तले जीभ दबाकर रह गये। हालाँ कि बुद्धिने बिलकुल जवाब दे दिया था, लेकिन फिर भी यह बात वे न भूले कि कुमुदिनीके सामने शराब नहीं चल सकती।

जरा ठहरकर फिर गाना शुरू किया।

"वृन्दावनमे कौन निठुर है, मुरली क्यो बजाय?
कहा करूँ मैं हाय सखी री, घरमे रह्यो न जाय? †

इन बिखरे हुए गानोंके टुकड़ोको सुनकर कुमुदकी छाती फटती है,—बापर गुस्सा आता है, पिताके पैरोंके नीचे सिर रखकर मानो माकी ओरसे वह माफी माँगना चाहती है।

मुकुन्दलाल सहसा बोल उठे—"दीवानजी!"

---

* बगलामें है —"कार बाँशी श्रोइ बाजे वृन्दावोने?
सोई लो, मोई
घरे आमि रइनो कैमोने?"

† बगलामें है —"श्यामेर बाशी काड़ते होबे
नोइले आमार ए वृन्दावन छाड़ते होबे।"

दीवानजीके आनेपर उनसे कहा—"वह देखो, ठक्-ठक् सुनाई दे रहा है।"

दीवानजीने कहा—"हवासे दरवाजे हिल रहे हैं।"

"बुड्ढा आया है, वही वृन्दावनचन्द्र—राजी चाँदका, हाथमें लकड़ी लिये, रेशमी चद्दर गलेमें डाले। देख तो आओ। तबसे बराबर ठक्-ठक् ठक्-ठक् कर रहा है। लकड़ी है, या खड़ाऊँ ?"

रक्त-वमन कुछ देरसे शान्त था। रातके तीन बजेसे फिर शुरू हो गया। मुकुन्दलाल, बिछौनेपर चारों तरफ हाथ फेरकर, लिभड़ी हुई जबानसे बोले—"बड़ी-बहू, घरमें बड़ा अन्धकार है ! अब भी दिआ नहीं जलाओगी ?"

बजरेसे वापस आनेके बाद मुकुन्दलालने स्त्रीके लिए यही प्रथम सम्भाषण किया और यही अन्तिम।

× × × ×

वृन्दावनसे लौटकर नन्दरानी घरके दरवाजेके पास आते ही मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं। उन्हें उठाकर बिस्तरपर लिटाया गया। गिरस्तीमें अब उन्हें कुछ भी अच्छा न लगा। आँखोंमें आँसू बिलकुल सूख गये। लड़के-लड़कियोंमें भी सान्त्वना नहीं मिली। गुरुजीने आकर शास्त्रके श्लोक सुनाये,—मुँह फेर लिया। हाथका लोहा* भी न खोला। बोलीं—"मेरा हाथ देखकर कहा था—मेरा सुहाग कभी न मिटेगा। सो क्या झूठ हो सकता है ?"

* लोहेकी एक तरहकी पतली चूड़ी, जो बंगालमें सुहागकी निशानी समझी जाती है। —अ०

क्षेमा दूरके रिश्तेमें ननद लगती थी, आँचलसे आँसू पोछती हुई बोली—"जो होना था सो हो चुका, अब घरकी तरफ देखो। वे तो जाते वक्त कह गये हैं,—बडी-बहू, घरमे क्या दिआ न जलाओगी ?"

नन्दरानी बिस्तरेसे उठकर बैठ गईं, दूरकी तरफ देखकर बोलीं—"जाऊँगी, दिआ जलाने जाऊँगी। अबकी बार देर न होगी।" कहते-कहते उनका पाण्डुवर्ण शीर्ण मुख उज्ज्वल हो उठा, मानो हाथमे दिआ लिये अभी ही जा रही हो।

सूर्य उत्तरायणको चले गये, माघका महीना आ गया। शुक्ल चतुर्दशीका दिन है। नन्दरानीने माथेपर मोटा करके सिन्दूर लगाया, लाल बनारसी साडी पहनी। गिरस्तीकी तरफ बिना देखे—मुँहपर हसी लिये—चली गईं।

[८]

पिताकी मृत्युके बाद विप्रदासने देखा कि जिस पेडपर उनका आश्रय है, उसकी जड कीड़े खा गये हैं। धन-दौलत और जमीन-जायदाद कर्जके दलदलपर खडी-खडी—थोडी-थोडी—नीचेको धसक रही है। क्रिया-कर्मको संक्षिप्त और रहन-सहनको संकुचित बिना किये कोई उपाय नहीं। कुमुदके विवाहके बारेमे भी हर घडी प्रश्न उठा करता है, जिसका उत्तर देते हुए जबान अटकती है। आखिरकार नूरनगरसे घर-द्वार उठाना ही पडा। कलकत्तेमें आकर बागबाजारकी तरफ एक मकानमे रहने लगे।

पुराने घरमे कुमुदिनीका एक सजीव वायुमण्डल था। चारों तरफ फल-फूल, पूजा-घर, अनाजके खेत, गायका थान, घरके आदमी, नौकर-चाकर थे। अन्तःपुरके बगीचेमे उसने फूल चुने है, डालियॉं भरी हैं, नमक, मिर्च, धनिया, पोदीनाके साथ कच्चे बेर मिलाकर कुपथ्य बनाया है, चालता* तोडे हैं, बैसाख-जेठकी ऑंधीमे आमके बागमे आम बीने है। बगीचेके पूरबकी तरफ धान कूटनेकी 'ढेंकीशाल'† थी, वहॉं तिलके लड्डू कूटने आदिके मौकोपर औरतोंका जो शोर-गुल होता था, उसमे उसका भी कुछ हिस्सा रहा है। काईसे सब्ज चहारदीवारीसे घिरा हुआ घनी छायासे शीतल ताल कोयल, पिडुकी, दहियल और श्याम-चिरैयाकी बोलियोंसे मुखरित रहता था। वहॉं वह प्रतिदिन तालमे तैरी है, लाल फूल चुने है, घाटपर बैठकर मधुर कल्पनाएँ की है, अकेले अनमने बैठकर ऊनके गुलूबन्द बुने है। ऋतु-ऋतुमे, मास-मासमे प्रकृतिके उत्सवके साथ साथ मनुष्यका एक-एक पर्व बॅधा हुआ है, अखतीजसे लेकर होली या वसन्तोत्सव तक न जाने कितने उत्सव है। मनुष्य और प्रकृति दोनोने मिल-जुलकर सारे वर्षको मानो तरह-तरहके नक्कासीके कामसे बुन दिया है। सभी सुन्दर हो, सभी सुखकर हो, सो नहीं। मछलीका हिस्सा, पूजाकी बखशीश, मालिकिन साहबाका पक्षपात, लडकोंके झगडेमे अपने-अपने लडकेकी ओर लेना, इत्यादि

---

* एक प्रकारका खट्टा-मीठा फल।

† बंगालमें धानकूटनेका काम 'ढेंकी'से लिया जाता है।

वातोंपर भीतर-ही-भीतर ईर्ष्या या शोर-गुलके साथ अभियोग और कानाफूँसीमें दूसरेकी निन्दा या मुक्तकण्ठसे अपवाद-घोषणा, इन सबोंकी काफी प्रचुरता है,—सबसे ज्यादा है नित्य-नैमित्तिक कार्योंकी व्यस्तताके भीतर-ही-भीतर एक उद्वेग—मालिक साहब कब क्या कर बैठें, उनकी बैठकमें न जाने कब कौनसी दुर्घटना प्रारम्भ, हो जाय। यदि शुरू हो गई, तो अशान्ति दिनों-दिन बढती ही जायगी। कुमुदिनीकी छाती धडकने लगती, कोठेमें दुबककर 'मा रोतीं, लडकोंके मुँह सूख जाते। इन्हीं सब शुभ और अशुभमें, सुख और दुःखमें गिरस्तीकी लम्बी यात्रा सर्वदा इधरसे उधर आन्दोलित होती रहती।

इसीके भीतरसे निकलकर कुमुदिनी कलकत्ते आई है। मानो यह एक भारी समुद्र है, पर कहाँ है प्यास बुझानेके लिए एक बूँद पानी? देशमें आकाशकी हवामें भी पहचाना हुआ चेहरा था। ग्रामके दिगन्तमें कहीं था घना जगल, कहीं था रेतीका टापू, नदीके पानीकी धारा, मन्दिरकी शिखर, सूना विस्तृत मैदान, जगली झाडओंके झुंड, नदीके किनारेकी पगडडी—इन सबने विभिन्न रेखाओं और तरह-तरहके रगोंसे विचित्र घेरा डालकर आकाशको एक विशेष आकाश बना डाला था। वह था कुमुदिनीका अपना आकाश। सूर्यका प्रकाश भी वैसा ही एक प्रकारका विशेष प्रकाश था। तालमें, खेतोंमें, बेंतकी झाडियोंमें धीवरोंकी नावके कत्थई पालोंमें, बाँसकी कोमल पत्तियोंमें, कटहलके पेडकी चिकनी-घनी हरियालीमें, उस पारकी रेतीके किनारेके फीके पीलेपनमें—सबके साथ तरह-तरहसे मिलकर इस प्रकाशने एक चिर-परिचित रूप पाया था। कलकत्तेमें इन

सब अपरिचित मकानोंकी छतों और दीवालोंपर कठिन रेखाओंकी चोटसे तितर-वितर होकर वही हमेशाका आकाश और प्रकाश अब उसे किसी आदमीकी तरह कड़ी निगाहसे देखता है। यहाँके देवताओंने भी उसे बहिष्कृत कर रखा है।

विप्रदास उसको आराम-कुरसीके पास बुलाकर कहते—"क्यों कुमुद, जी नहीं लगता ?"

कुमुदिनी हँसकर कहती—"नहीं भइया, जी लगता तो है।"

"चलोगी बहन, अजायबघर देखने ?"

"हाँ, चलूँगी।"

यह बात उसने इतने अधिक उत्साहसे कही कि विप्रदास यदि पुरुष न होते, तो समझ सकते कि उसकी यह बात स्वाभाविक नहीं थी। अजायबघर न जाना पड़े तो उसकी जान बचे। बाहरके आदमियोंकी भीड़में निकलनेका अभ्यास न होनेसे भीड़-भम्भड़में जानेमें उसके सकोचका अन्त नहीं। हाथ-पैर ठडे हो जाते हैं, आँखें उठाकर अच्छी तरह देख भी नहीं सकती।

विप्रदासने उसे शतरज खेलना सिखाया। खुद बड़े अच्छे खिलाडी थे। कुमुदके नये-सीखे खेलमें उन्हें बड़ा आनन्द आने लगा। अन्तमें नियमित रूपसे खेलते-खेलते कुमुदको ऐसा अच्छा अभ्यास हो गया कि विप्रदासको और उसके साथ होशियारीसे खेलना पड़ता है। कलकत्तेमें कुमुदकी बराबरीकी कोई सखी-सहेली न होनेसे, ये दो भाई-बहन ही मानो दो भाइयोंकी तरह हो गये हैं। सस्कृत-साहित्यसे विप्रदासको बहुत प्रेम है। कुमुदने मन लगाकर उनसे व्याकरण पढ़ा है।

जबसे उसने 'कुमार-सम्भव' पढ़ा, तबसे वह शिव-पूजामें शिवजीको देखने लगी—उन्हीं महातपस्वीको, जो तपस्विनी उमाकी परम तपस्याके धन थे। कुमारीके ध्यानमें उसके भावी पति पवित्रताकी दैव-ज्योतिके रूपमें प्रकाशित हो कर दिखाई दिये।

विप्रदासको फोटो लेनेका शौक था। कुमुदने भी यह सीख लिया। उनमेंसे एक तसवीर उतारता, तो दूसरा उसे तय्यार करता। बन्दूक चलानेमें विप्रदास सिद्धहस्त हैं। किसी उत्सवके अवसरपर, जब देश जाते, तो पीछेके तालाबमें नारियल, बेलके खोपटे, अखरोट आदि बहाकर उनपर बन्दूकका निशाना लगाते, कुमुदको बुलाते—"आ न कुमुद, देख तो सही कोशिश करके।"

जिस-किसी भी विषयमें उसके भइयाकी रुचि है, उसे बड़े जतनसे कुमुदने अपना लिया है। भइयासे 'इसराज' सीखकर अन्तको उसका हाथ ऐसा सधा कि भइया कहने लगे—मैंने हार मान ली।

इस तरह, बचपनसे ही जिन भाईसे वह सबसे ज्यादा प्रेम करती आई है, कलकत्तेमें आकर उन्हें ही उनसे सबसे ज्यादा निकट पाया। कलकत्ता आना सार्थक हुआ। कुमुद स्वभावसे ही मनमें अकेली है। पर्वतवासिनी उमाके समान ही मानो वह किसी मानस-सरोवरके किनारे कल्प-तपोवनमें निवास करती है। इस तरहके जनम-अकेले आदमीके लिए जरूरत है मुक्त आकाशकी, विस्तृत निर्जनताकी, और उसीमेंसे ऐसी किसी एक आत्माकी, जिसे वह अपने सम्पूर्ण मन-प्राणसे प्रेम कर सकता हो। पासकी गिरस्तीसे इस तरह दूर रहना स्त्रियोंके लिए स्वभावसिद्ध न होनेके कारण, वे इसे बिल्कुल ही पसन्द नहीं करतीं।

सब अपरिचित मकानोंकी छतों और दीवालोंपर कठिन रेखाओंकी चोटसे तितर-बितर होकर वही हमेशाका आकाश और प्रकाश अब उसे किसी आदमीकी तरह कड़ी निगाहसे देखता है। यहाँके देवताओंने भी उसे बहिष्कृत कर रखा है।

विप्रदास उसको आराम-कुर्सीके पास बुलाकर कहते—"क्यों कुमुद, जी नहीं लगता ?"

कुमुदिनी हँसकर कहती—"नहीं भइया, जी लगता तो है।"

"चलोगी बहन, अजायबघर देखने ?"

"हाँ, चलूँगी।"

यह बात उसने इतने अधिक उत्साहसे कही कि विप्रदास यदि पुरुष न होते, तो समझ सकते कि उसकी यह बात स्वाभाविक नहीं थी। अजायबघर न जाना पड़े तो उसकी जान बचे। बाहरके आदमियोंकी भीड़में निकलनेका अभ्यास न होनेसे भीड़-भम्भड़में जानेमें उसके संकोचका अन्त नहीं। हाथ-पैर ठंडे हो जाते हैं, आँखें उठाकर अच्छी तरह देख भी नहीं सकती।

विप्रदासने उसे शतरंज खेलना सिखाया। खुद बड़े अच्छे खिलाड़ी थे। कुमुदके नये-सीखे खेलमें उन्हें बड़ा आनन्द आने लगा। अन्तमें नियमित रूपसे खेलते-खेलते कुमुदको ऐसा अच्छा अभ्यास हो गया कि विप्रदासको अब उसके साथ होशियारीसे खेलना पड़ता है। कलकत्तेमें कुमुदकी बराबरीकी कोई सखी-सहेली न होनेसे, ये दो भाई-बहन ही मानो दो भाइयोंकी तरह हो गये हैं। संस्कृत-साहित्यसे विप्रदासको बहुत प्रेम है। कुमुदने मन लगाकर उनसे व्याकरण पढ़ा है।

जबसे उसने 'कुमार-सम्भव' पढा, तबसे वह शिव-पूजामे शिवजीको देखने लगी—उन्हीं महातपस्वीको, जो तपस्विनी उमाकी परम तपस्याके धन थे। कुमारीके ध्यानमे उसके भावी पति पवित्रताकी देव-ज्योतिके रूपमे प्रकाशित हो कर दिखाई दिये।

विप्रदासको फोटो लेनेका शौक था। कुमुदने भी यह सीख लिया। उनमेसे एक तसवीर उतारता, तो दूसरा उसे तय्यार करता। बन्दूक चलानेमे विप्रदास सिद्धहस्त है। किसी उत्सवके अवसरपर, जब देश जाते, तो पीछेके तालाबमे नारियल, बेलके खोपटे, अखरोट आदि बहाकर उनपर बन्दूकका निशाना लगाते, कुमुदको बुलाते—"आ न कुमुद, देख तो सही कोशिश करके।"

जिस-किसी भी विषयमे उसके भइयाकी रुचि है, उसे बडे जतनसे कुमुदने अपना लिया है। भइयासे 'इसराज' सीखकर अन्तको उसका हाथ ऐसा सधा कि भइया कहने लगे—मैंने हार मान ली।

इस तरह, बचपनसे ही जिन भाईसे वह सबसे ज्यादा प्रेम करती आई है, कलकत्तेमे आकर उन्हे ही उनसे सबसे ज्यादा निकट पाया। कलकत्ता आना सार्थक हुआ। कुमुद स्वभावसे ही मनमे अकेली है। पर्वतवासिनी उमाके समान ही मानो वह किसी मानस-सरोवरके किनारे कल्प-तपोवनमे निवास करती है। इस तरहके जनम-अकेले आदमीके लिए जरूरत है मुक्त आकाशकी, विस्तृत निर्जनताकी, और उसीमेसे ऐसी किसी एक आत्माकी, जिसे वह अपने सम्पूर्ण मन-प्राणसे प्रेम कर सकता हो। पासकी गिरस्तीसे इस तरह दूर रहना स्त्रियोंके लिए स्वभावसिद्ध न होनेके कारण, वे इसे बिलकुल ही पसन्द नहीं करतीं।

थे या तो इसे अहङ्कार समझती हैं या हृदयहीनता। इसीलिए देशमें रहते हुए भी सहेलियोंके साथ कुमुदिनीकी मित्रता न हो पाई।

पिताके सामने ही विप्रदासका विवाह करीब-करीब ठीक हो गया था। इसी समय—तेल-ताईके दो दिन पहले ही—कन्या ज्वरकी पीडासे मर गई। तब भाटपाडेमें* विप्रदासकी जन्मपत्रीकी गणनामें निकला—'विवाह-स्थानीय दुर्ग्रहका भोग क्षय होनेमें अभी देर है।' विवाह स्थगित रहा। इसी बीचमें हो गई पिताकी मृत्यु। उसके बाद फिर विप्रदासके घर विवाह-सम्बन्धी चर्चा चलानेका अनुकूल समय न आया। घटक (सगाई ठीक करनेवाले) ने एक दिन मोटे दहेजकी आशा दिलाई। उसका नतीजा उलटा हुआ। काँपते हुए हाथोंसे हुक्केको दीवालके सहारे रखकर घटकजीको उस दिन बडी जल्दीके साथ घरकी राह लेनी पडी।

[६]

कुमुबोधकी चिट्ठी विलायतसे पहले बराबर समयपर आती थी। अब बीच-बीचमें नागा भी हो जाता है। कुमुद डाकके लिए व्यग्र होकर प्रतीक्षा करती रहती है। नौकरने अबकी चिट्ठी लाकर उसीके हाथमें दी। विप्रदास आईनेके सामने खडे-खडे दाढी बना रहे थे कुमुद दौडी गई, बोली—"भइया, छोटे भइयाकी चिट्ठी।"

---

* बंगालमें, संस्कृतके दिग्गज विद्वानोंकी निवास-भूमि।

दाढी बना चुकनेपर आरामकुरसीपर बैठकर विप्रदासने ज़रा-कुछ डरते-डरते चिट्ठी खोली। पढ लेनेके बाद चिट्ठीको दोनो हथेलियोंके बीच रखकर ऐसे ढगसे दबाया जैसे उन्हे कोई तीव्र व्यथा हुई हो।

कुमुदिनीका जी दहल गया, पूछने लगी—"छोटे भइयाकी तबीयत खराब तो नहीं है?"

"नहीं, वह अच्छी तरहसे है।"

"चिट्ठीमे क्या लिखा है? बता दो भइया?"

"वही पढने-लिखनेकी बात।"

कुछ दिनोंसे विप्रदास कुमुदको सुबोधकी चिट्ठी नहीं दिखाते। कुछ-कुछ अश पढकर सुना देते हैं। अबकी बार सो भी नहीं। कुमुदको चिट्ठी माग लेनेकी हिम्मत न पडी, उसका जी तडपने लगा।

सुबोध पहले-पहल हिसाबसे खर्च करता था। घरकी तगीकी बात तब तक मनमे ताजी थी, अब ज्यो-ज्यो वह छायाकी तरह अस्पष्ट होती जाती है, खर्च भी उतना ही बढता जाता है। कहता है, ऊँची स्टाइलसे बिना रहे, वहाँके उच्च सामाजिक वायुमण्डलमे नहीं पहुचा जा सकता, और वहा तक न पहुचे, तो विलायत आना ही व्यर्थ होता है।

विप्रदासको दो-एक बार लाचार होकर ज़रूरतसे ज्यादा रुपये भेजने पडे हैं—वह भी तारसे। अबकी फरमाइश आई है डेड-सौ पोण्डकी—जरूरी काम है।

विप्रदासने माथेपर हाथ रखकर कहा—"कहाँसे लाऊँ? देहका खून पानी करके कुमुदके व्याहके लिए रुपया इकट्ठा कर रहा हू।

अन्तमे क्या उन्हीं रुपयोंपर चोट पडेगी ? क्या होगा सुबोधके बैरिस्टर होनेसे कुमुदके भविष्यको स्वाहा करके यदि उसकी कीमत चुकानी पडे ?

उस दिन रातको विप्रदास बरामदेमे टहल रहे थे। उन्हें मालूम नहीं कि कुमुदिनीकी भी आँखोमे नींद नहीं। जब बहुत ही असह्य हो उठा, तो कुमुद दौडी आई, विप्रदासका हाथ पकडकर कहने लगी—"सच्ची-सच्ची बताओ भइया, छोटे भइयाको क्या हुआ है ? तुम्हारे पैरो पडती हू भइया, मुझसे न छिपाओ।"

विप्रदासने समझा कि छिपानेसे कुमुदिनीकी आशंका और भी बढ जायगी। जरा चुप रहकर बोले—"सुबोधने रुपये मँगाये है, इतने रुपये देनेकी शक्ति मुझमे नहीं है।"

कुमुदने विप्रदासका हाथ थामकर कहा—"भइया, एक बात कहती हू, गुस्सा तो न होगे, बोलो ?"

"गुस्सा होनेकी बात होगी, तो बिना गुस्सा हुए कैसे रहूगा, बता ?"

"ना भइया, हँसीकी बात नहीं, मेरी बात सुनो,—माके गहने तो मेरे लिए हैं,—उन्हींको लेकर—"

"चुप, चुप, तेरे गहनोंमे क्या हम लोग हाथ लगा सकते हैं।"

"मैं तो लगा सकती हू।"

"नहीं, तू भी नहीं लगा सकती। रहने दे यह सब बात, जा अब सोने जा।"

कलकत्ते शहरका सवेरा है। कौओकी काँव-काँव और झूडा

ढोनेवाली गाडियोंकी घड़घड़ाहटमें गत बीती। दूरपर कभी स्टीमरोंकी और कभी तेलकी मिलोंकी सीटी बज रही है। मकानके सामनेकी सड़कसे एक आदमी नसैनी कंधेपर रखे "ज्वरादि बटिका" का विज्ञापन चुपकाता चला जाता है, रीती बैलगाडीके दोनो बैल गाडीवानके दोनो हाथोंकी प्रबल ताडनासे गाडी लेकर भागे जा रहे हैं, नलपर पहले पानी भरनेकी होडा-होडीमें एक कहारकी लडकीके साथ उड़िया ब्राह्मणका धक्कमधक्का और बकझक चल रही है। विप्रदास बरामदेमें बैठे हैं, हुक्काकी नली हाथमें है, मेजपर बिना-पढा अखबार पड़ा हुआ है।

कुमुदने आकर कहा—"भइया, नाहीं मत करो।"

"मेरे मतकी स्वाधीनतापर हस्तक्षेप करेगी तू? तेरे शासनमें मुझे रातको दिन—ना-को हाँ कहना पडेगा?"

"नहीं, सुनो तो सही,—मेरे जेवरोंसे अपनी चिन्ता दूर करो।"

"इसीसे तो तेरा नाम लक्ष्मी रक्खा है मैंने। तेरे जेवरोंसे मेरी चिन्ता दूर होगी, यह तूने कैसे सोच लिया?"

"सो नहीं जानती, पर तुम्हारी यह फिकर मुझसे सही नहीं जाती।"

"फिकर करके ही फिकर दूर की जाती है बहन, उसे धोखेसे रोकनेकी कोशिश करनेसे उलटा नतीजा होता है। ज़रा धीरज धर, कोई तजवीज किये देता हू।"

विप्रदासने पत्रके उत्तरमें लिखा—"रुपये भेजनेके लिये कुमुदके दहेजके रुपयोंमें हाथ डालना पडेगा, और यह असम्भव है।"

यथासमय उत्तर आ गया। सुबोधने लिखा है—कुमुदके दहेजके रुपये उसे नहीं चाहिये। जायदादमेंसे उसका आधा हिस्सा बेचकर उसके लिये रुपये भेजे जायँ। साथ ही पावर-आव्-अटर्नी भी भेज दिया है।

यह पत्र विप्रदासके सीनेमे बाणकी तरह विंध गया। इतना कडा निष्ठुर पत्र सुबोधने लिखा कैसे ? उसी वक्त बूढे दीवानजीको बुला भेजा, पूछा—"भूषण राय करीमहट्टी ताल्लुका पट्टेपर लेना चाहता था न ? कितना देना चाहता है ?"

दीवानजीने कहा—"बीस हजार तक दे सकता है।"

"भूषण रायको बुला भेजो। मैं बातचीत करना चाहता हूं।"

विप्रदास अपने वंशके बडे लडके है। उनके जन्म समय उनके बाबा यह ताल्लुका उन्हें पृथक्रूपसे दे गये हैं। भूषण राय बडे भारी महाजन हैं, बीस-पचीस लाखकी तिजारत होती है। करीमहट्टी उनकी जन्म-भूमि है, इसलिए बहुत दिनोंसे वे अपने गाँवका पट्टा लेनेकी कोशिशमे है। अर्थ-संकटके कारण बीच-बीचमे विप्रदास राजी भी हो जाते, पर रैयत लोग रो देते, कहते—'उसको हम लोग किसी तरह भी जमींदार नहीं मान सकते।' इसीसे प्रस्ताव बार-बार रद्द हो जाता। इस बार विप्रदासने मनको खूब कठोर बना लिया। वे निश्चित-रूपसे यह जानते थे कि सुबोधके रुपयोंकी माँगका अन्त यहींपर नहीं है। मन-ही-मन बोले—'मेरे ताल्लुकेकी इस सलामीका रुपया रहा सुबोधके लिए, फिरकी फिर देखी जायगी।'

दीवानको विप्रदासके मुँहपर जवाब देनेकी हिम्मत न पड़ी। पीछे चुपकेसे कुमुदको जाकर कहा—"जीजी, बड़े बाबू तुम्हारी बात मानते हैं। उनसे मना कर दो, यह बे-इन्साफ हो रहा है।"

विप्रदासको घरके सभी कोई चाहते हैं। दूसरे किसीके लिये बड़े बाबू अपनी मिलकियत नष्ट करें, यह बात उनको अखरती है।

अबेर हो रही है। विप्रदास उसी ताल्लुकेके कागजात लेकर उलट रहे हैं। अभी तक नहाना-खाना नहीं हुआ। कुमुद बार-बार उन्हे बुला भेजती है। सूखा-सा मुँह लिये वे अन्दर पहुचे—जैसे बिजलीका मारा जले पत्तोंका ठूँठ हो। कुमुदकी छातीमें तीर-सा समा गया।

नहाना-खाना हो चुकनेके बाद जब विप्रदास हुक्केकी नली हाथमे लिये चारपाईके बिछौनेपर पैर फैलाकर तकियेके सहारे बैठे, तब कुमुदने उनके सिरहानेके पास बैठकर, धीरे-धीरे उनके बालोमे उँगलियाँ फेरते हुए, कहा—"भइया, तुम अपने ताल्लुकेका पट्टा नहीं देने पाओगे।"

"तेरे सिरपर नवाब सिराजउद्दौलाका भूत तो नहीं सवार हो गया? सभी बातोंमे जुल्म!"

"ना भइया, बातको दबाओ मत।"

तब विप्रदाससे न रहा गया, सीधे होकर उठकर बैठ गये। कुमुदको सिरहानेके पाससे हटाकर सामने बिठाया। रुँधे हुए गलेको साफ करनेके लिए जरा खाँसकर बोले—"सुबोधने क्या लिखा है, जानती है? यह देख।"

इतना कहकर कुरतेकी जेबमेंसे सुबोधकी चिट्ठी निकालकर उसके हाथपर रख दी। कुमुदने पूरी चिट्ठी पढ़कर दोनों हाथोंसे मुँ

ढककर कहा—"भइया री, छोटे भइयासे ऐसी चिट्ठी लिखी कैसे गई होगी ?"

विप्रदास बोले—"जब वह आज अपनी जायदादमें और मेरी जायदादमें भेद देख रहा है, तब मैं अपनी जायदाद क्या अलग रख सकता हू ? आज उसके बाप नहीं हैं, आफत-विपतके वक्त उसे मैं न दूँगा, तो और कौन देगा ?"

इसपर कुमुद कोई बात न कह सकी, नीरवतामें उसकी आँखोंसे आँसू गिरने लगे। विप्रदासने फिर तकियेका सहारा लेकर आँखें मींच लीं।

बहुत देर तक भइयाके पाँवपर हाथ फेरती हुई अन्तमें कुमुद बोली—"भइया, माका धन तो अभी तक माका ही है, उनका जेवर रहते हुए तुम क्यों—"

विप्रदास फिर चौंककर उठ बैठे, बोले—"कुमू, इतना भी तू न समझ सकी, तेरे गहने बेचकर सुबोध आज अगर विलायतमें थियेटर, कनसर्ट देखता फिरे, तो मैं क्या उसे कभी क्षमा कर सकूगा ?—या, वही फिर किसी रोज मुँह दिखाने लायक रहेगा ? उसे तू इतनी भारी सजा क्यों देना चाहती है ?"

यह सुनकर कुमुद चुप्पी साध गई, कोई भी उपाय उसे ढूँढे न मिला। तब, अनेकों बार जैसे पहले सोचा करती थी वैसे ही, सोचने लगी—क्या कोई असम्भव बात नहीं हो सकती ? आकाशका कोई ग्रह, कोई नक्षत्र क्षण-भरमें सारी बाधाएँ दूर नहीं कर सकता ? परन्तु शुभ लक्षण तो दिखाई दिये हैं, कुछ दिनसे बार-बार उसकी बाँई आँख

फडक रही है। इससे पहले जिन्दगीमे वहुत दफा वाईं आँख फडकी है, उसपर कुछ भी सोचने-विचारनेकी जरूरत नहीं हुई। इस वारका शुभ लक्षण स्वय ही उसकी समझमे आ गया। मानो उसकी वात उसे रखनी ही पडेगी—कहीं शुभ-लक्षणका सत्य-भग न हो जाय।

[१०]

बदलीका दिन है। विप्रदासकी तवीयत अच्छी नहीं है। फर्द ओढे अध-लेटी हालतमे अखवार पढ रहे है। कुमुदकी दुलारी विल्ली फर्दके एक फालतू हिस्सेपर कब्जा करके गोल-मटोल हुई सो रही है। विप्रदासका 'टेरियर' कुत्ता मजबूरीसे उसकी स्पर्धा सहकर मालिकके पैरोके पास सोता हुआ स्वप्नमे एक-एक दफा गो-गों करके गुर्रा उठता है।

इतनेमें एक घटकराज आ पहुचे।

"नमस्कार।"

"कौन हो तुम ?"

"जी, वडे मालिक साहव मुझे खूव ही पहचानते थे, (झूठी वात है) आप तव छोटेसे थे। मेरा नाम है नीलमणि घटक, स्वर्गीय गगामणि घटकका पुत्र हू मैं।"

"क्या काम है ?"

"अच्छा पात्र (वर) मिल रहा है। आपके ही घरके लायक है।"

भइयाने कहा—"नहीं तो।"

"चाय ठंडी तो नहीं हो गई ? तुम्हारे कमरेमे आदमी देखकर मैं आ नहीं सकी।"

विप्रदासने कुमुदके मुँहकी ओर ताककर एक गहरी साँस ली। भाग्यकी निष्ठुरता सबसे ज्यादा असह्य हो उठती है तब, जब वह सोनेका-सा रथ लाता है, जिसके पहिये बेकाम हों। भइयाके चेहरेपर इस दुविधाकी वेदनाको देखकर कुमुदिनी बडी व्यथित हुई। दैवके दानपर भइया क्यो इस तरह सन्देह करते है ? यह बात कुमुदिनीकी बुद्धिमे कभी नहीं आई कि विवाह-कार्यमे अपनी पसन्द भी कोई चीज होती है। बचपनसे एक-एक करके उसने अपनी चारों बहनोंके व्याह देखे हैं। कुलीनोंके घर व्याह है—कुलके सिवा और विशेष कुछ पसन्दकी बात हो, सो भी नहीं। बाल-बच्चोको लेकर फिर भी वे गिरस्ती करती हैं—दिन बीत जाते हैं। तकलीफ पानेपर भी विद्रोह नहीं करतीं, मनमे विचार भी नहीं करती कि इसके सिवा और भी कुछ हो सकता था। मा क्या लडकोमेसे लडकेको छेक लेती है ? लडका मान लेती है। कुपुत्र भी होता है, सुपुत्र भी। पति भी ऐसे ही समझो। विधाताने कुछ दूकान तो खोल ही नहीं रखी। भाग्यपर किसका वस चल सकता है ?

इतने दिन बाद कुमुदके बुरे भाग्यका लम्बा-चौडा मैदान पारकर राजपुत्र आया—पर छद्मवेशमे। रथके पहियोका शब्द कुमुद अपने हृदयके स्पन्दनमे सुन रही है। बाहरके छद्मवेशकी वह जाँच करना नहीं चाहती।

झटपट अपने कमरेमें जाकर पत्रा खोलकर उसने देखा—आज मनोरथ-द्वितीया है। घरके कमचारियोंमें जो कई आदमी ब्राह्मण थे, उन्हें शामको बुलवाकर फलाहार कराया, यथासाध्य दक्षिणा भी दी। सभीने आशीर्वाद दिया—'राजरानी होकर रहो, धन और पुत्रसे फलो-फूलो।'

दूसरी वार विप्रदासकी बैठकमे घटकराज पधारे। चुटकी बजाकर 'शिव-शिव' कहते हुए वृद्धने ऊँचे स्वरसे जम्हाई ली। इस वार असम्मति ज़ाहिर कर वातको वहीं खत्म कर देनेकी विप्रदासको हिम्मत न पडी। सोचा, इतना वडा दायित्व लूँ किस तरह? कैसे निश्चय करूं कि कुमुदके लिए यह सम्वन्ध सवसे अच्छा नहीं है? "परसो पक्का जवाव देंगे"—कहकर घटकको विदा किया।

[११]

सन्ध्याका अन्धकार मेघकी छाया और वर्षाके पानीसे घना हो रहा है। कुमुदिनीकी चीज-वस्त ऐसी कुछ ज्यादा नहीं है। एक तरफ छोटीसी खाट है, अरगनीपर दो चुनी-चुनाई साडी और चम्पई रगका अगौछा टँगा है। कोनेमे कटहरकी लकडीका एक सन्दूक है, उसमे उसके पहननेके कपडे हैं। खाटके नीचे हरे रगके टीनके डिव्वेमे पान लगानेका मसाला है, और एक डिव्वेमें जूडा बाँधनेका सामान। दीवालमें वनी हुई लकडीकी आलमारीमें कुछ किताबें, दावात-कलम, चिट्ठीके कागज, माके हाथके ऊनके वुने हुए थानजीके

'स्लीपर' रखे हुए हैं , खाटके सिरहाने राधा-कृष्णकी जुगल जोडीकी तसवीर टंगी है। दीवालके कोनेसे सटा हुआ एक 'इसराज' रखा है।

कुमुदने कमरेमे दिआ नहीं जलाया है। लकडीके सन्दूकपर बैठी हुई वह खिडकीके बाहरकी तरफ देख रही है। सामने ईंटका कलेवर-वाला कलकत्ता है। पुराने जमानेका कठिन कवच पहने किसी भीमकाय जन्तु जैसा लगता है, वर्षाकी जलधारामे धुँधला दिखाई दे रहा है। बीच-बीचमे कहीं-कहीं उसके शरीरपर आलोक-शिखाकी बूँदे हैं। कुमुदका मन उस समय अपने भाग्यमे लिखे भावी लोकमे है। वहांके मकान, महल, आदमी वगैरह सब उसके निजी आदर्शपर बने हुए हैं। उसीके बीचमें उसने सती लक्ष्मीके रूपमे अपनी प्रतिष्ठा की है। कितनी भक्ति है, कितनी पूजा है, कितनी सेवा है। उसकी अपनी माताके पुण्य-चरितमे एक जगह एक गहरी त्रुटि रह गई है। उन्होने पतिके अपराधपर कुछ समयके लिये धैर्य छोड दिया था। कुमुद ऐसी भूल कभी न करेगी।

विप्रदासके पैरोंकी आहट सुनकर कुमुद चौंक उठी। भइयाको देखकर बोली—"दिआ जला दूं भइया ?"

"नहीं कुमू, जरूरत नहीं"—कहकर विप्रदास सन्दूकपर कुमुदके बगलसे जा बैठे। कुमुद जल्दीसे उतरकर जमीनपर बैठ गई—धीरे-धीरे भइयाके पैरोपर हाथ फेरने लगी।

विप्रदासने मुलायम स्वरमे कहा—"बैठकमें आदमी आये हुए थे, इसीसे तुझे बुलाया नहीं। अब तक तू अकेली बैठी थी ?"

कुमुदने शरमाते हुए कहा—"नहीं तो, क्षेमा-बुआ बहुत देर तक

बैठो रही थीं।" बातको घुमा देनेके लिए कहा—"बैठकमे कौन आये थे, भइया ?"

"सो ही तो मैं तुझे कहने आया हू। इस वर्ष जेठके महीनेमे तू अठारहवीं साल पारकर उन्नीसवीं सालमे पडी है, क्यो ?"

"हाँ भइया, इसमे कोई दोष हुआ है ?"

"दोषकी बात नहीं। आज नीलमणि घटक आया था। बहन कैसी है, शरमाना मत। बाबूजी जब मौजूद थे, तेरी उमर दस सालकी थी—तब तेरा ब्याह पक्का हो गया था। अगर हो जाता, तो तेरी रायकी कोई परवाह नहीं करता, लेकिन अब तो मुझसे ऐसा नहीं हो सकता। राजा मधुसूदन घोपालका नाम तूँने सुना ही होगा। कुलके लिहाजसे भी वे अच्छे हैं, पर उमरमे तुझसे बहुत फर्क है। मैं तो राजी नहीं हो सका हू। अब, तेरे मुँहसे एक शब्द सुनना चाहता हू, फिर साफ-साफ कह दूंगा। शरम न करना, कुमुद।"

"नहीं, शरमाऊँगी नहीं।"—कहकर कुमुद कुछ देर तो चुप रही। फिर बोली—"जिनकी बात तुम कह रहे हो, उनके साथ तो मेरा सम्बन्ध ठीक हो ही चुका है।" यह उस घटककी बातकी प्रतिध्वनि थी—मालूम नहीं, कब, यह बात उसके मनकी गहराईमे हिलगी रह गई है।

निमदास बड़े अचम्भेमें पड गये, बोले—"कैसे कुमू, ठीक कैसे हो गया ?"

कुमुद चुपचाप बैठी रही।

निमदासने उसके माथेपर हाथ फेरकर कहा—"लडकपन मत कर कुमू।"

कुमुदिनी बोली—"तुम नहीं समझोगे भइया, मैं ज़रा भ
लड़कपन नहीं कर रही हू।"

भइयापर उसका असीम प्रेम है, परन्तु भइया तो दैव नहीं मानते
कुमुदिनी समझती है कि यहींपर भइयाकी दृष्टिकी कमज़ोरी है।

विप्रदासने कहा—"तैंने तो उन्हे देखा नहीं ?"

"न सही, पर मैंने तो ठीक जान लिया है।"

विप्रदास अच्छी तरह जानते हैं कि इसी जगह भाई-बहन
बड़ा-भारी भेद है। कुमुदके चित्तके इस अन्धकारमय महलमे,—उसप
भाईका तनिक भी अधिकार नहीं। तो भी विप्रदासने फिर एक बा
कहा—"देख कुमुद, ज़िन्दगी-भरकी बातको चटसे किसी कल्पना
आकर प्रतिज्ञा-रूपमे तय न कर बैठना।"

कुमुदने व्याकुल होकर कहा—"कल्पना नहीं है भइया, कल्पन
नहीं। मैं तुम्हारे पाँव छूकर कहती हू, और किसीसे ब्याह नहं
कर सकती।"

विप्रदास चौंक उठे। जहा कार्य-कारणका योगायोग नहीं है
वहा तर्क करें, तो क्या लेकर ? अमावस्याके साथ कुश्ती नहीं चल
सकती। विप्रदासने समझ लिया—किसी दैव-सकेतने कुमुदके मनमें
स्थान बना लिया है। बात सच है। आज ही सवेरे देवताके नामप
मन-ही-मन उसने कहा था—'इस ऊने गिनतीके फूलोमेसे एक-एव
जोड़ी अलग रखनेके बाद सबके पीछे जो फूल बच रहेगा, उसका रंग
अगर देवताके समान नीला हो, तो समझूंगी कि यह भगवानकी ह
इच्छा है।' सबके आखिरका फूल निकला नील अपराजिता—कोयल

रातको बिछौनेपर बैठकर प्रणाम करती है, सबेरे, उठनेके साथ ही फिर प्रणाम करती है। किसे करती है, यह स्पष्ट नहीं,—वह तो एक निरवलम्ब भक्तिका स्वतः निकला हुआ उच्छ्वास है।

परन्तु मन-गढन्त प्रतिमाके मन्दिरका द्वार हमेशा तो बन्द रह नहीं सकता। कानाफूँसीकी साँसोंकी गरमी और वेगने जब उस मूर्तिकी मनोहर सुन्दरतापर धक्का दिया, तब भला देवताका रूप कैसे टिक सकता था? भक्तके लिए यह बड़े दुःखकी घड़ी थी।

एक दिन तेलिनीपाड़ेकी बुढ़िया तीनकौड़िन कुमुदिनीके सामने ही कह बैठी—"हमारी कुमुदका नसीब तो देखो, कैसा राजा वर मिल गया है। सिंगी लगानेवाली कहा करती है न—

'एक रहा गीदड़के वनमें कुकुरमुतेका छाता,
उसको काट बनाया कैसा सिंहासन मन-भाता।'

सो यह भी उसी गीदड़के वनका राजा है। अरे, रजनपुरके आनन्दी गुमास्तेको मैं क्या जानती नहीं, उसीका तो यह लड़का है मधुआ। देशमें जिस बार अकाल पड़ा था, कहींसे चावल मँगाकर बेचे थे, वही कमाई अब तक चल रही है। तो भी बेचारी बुढ़िया महतारीको आखिर दम तक हाथसे राँधकर खाना पड़ा।"

और-और लड़कियाँ तीनकौड़िनको घेर बैठतीं, कहतीं—"दूल्हाको तू

"और नहीं [illegible] की लड़की थी, पुरोहित [illegible]) सखी

सोनेके कमरेके सामनेवाले बरामदेमें कुमुदिनी चबेना बखेर देती है, चिडियाँ आकर चुगती हैं, रोटीके टुकडे रखती है, गिलहरी चंचल दृष्टिसे चारों ओर निहारकर जल्दीसे दौडी आती और पूँछके बल खडी हो जाती है, सामनेके दोनों पैरोंसे रोटी उठाकर कुतर-कुतरकर खाती रहती है। कुमुदिनी ओटमे बैठकर उसे बडे आनन्दसे देखा करती है। विश्वके लिए उसका हृदय आज दक्षिणासे भरा पडा है। शामको नहाते वक्त वह पीछेके तालाबमे गले तक डूबकर चुपचाप बैठी रहती है, तालका पानी मानो उसके तमाम अंगोंसे बातें करता रहता है। शामकी तिरछी सूरजकी रोशनी तालाबके पीछेवाले नीबूके पेडकी डालियोपरसे आकर, घने काले रगके पानीपर—कसौटी पर सोनेकी लकीरोके समान—झिलमिलाती रहती है। कुमुद उन्हें बडे गौरसे देखती है, उस प्रकाश और छायामे उसके सारे शरीर परसे एक अकथनीय आनन्दकी कँपकँपी आ जाती है। दोपहरको छतपर की छोटीसी कोठरीमें अकेली जाकर बैठी रहती, बगलके जामुनके पेडपर से पिडुकीकी आवाज कानमे पडती रहती। उसके यौवन-मन्दिरमे आज जिस देवताका वरण हो रहा है, उसके भावमय रस-भरे रूपमे कृष्ण-राधिकाके युगल रूपका माधुर्य मिल गया है। छतपर बैठकर 'इसराज' हाथमे लिये वह धीरे-धीरे अपने भइयाके बताये हुए भूपाली स्वरका गाना गाती रहती है —

"आजु मोर घरवामें आइल पियरवा,
रोम-रोम हरखीला————"

रातको बिछौनेपर बैठकर प्रणाम करती है, सबेरे, उठनेके साथ ही फिर प्रणाम करती है। किसे करती है, यह स्पष्ट नहीं,—वह तो एक निरवलम्ब भक्तिका स्वत निकला हुआ उच्छ्वास है।

परन्तु मन-गढन्त प्रतिमाके मन्दिरका द्वार हमेशा तो बन्द रह नहीं सकता। कानाफूँसीकी साँसोकी गरमी और वेगने जब उस मूर्तिकी मनोहर सुन्दरतापर धक्का दिया, तब भला देवताका रूप कैसे टिक सकता था? भक्तके लिए यह बडे दु खकी घडी थी।

एक दिन तेलिनीपाडेकी बुढिया तीनकौडिन कुमुदिनीके सामने ही कह बैठी—"हमारी कुमुदका नसीब तो देखो, कैसा राजा वर मिल गया है। सिंगी लगानेवाली कहा करती हैं न—

'एक रहा गीदडके वनमे कुकुरमुतेका छाता,
उसको काट बनाया कैसा सिंहासन मन-भाता।'

सो यह भी उसी गीदडके वनका राजा है। अरे, रजतपुरके आनन्दी गुमास्तेको मैं क्या जानती नहीं, उसीका तो यह लडका है मधुआ। देशमे जिस बार अकाल पडा था, कहींसे चावल मँगाकर बेचे थे, वही कमाई अब तक चल रही है। तो भी बेचारी बुढिया महतारीको आखिर दम तक हाथसे राँधकर खाना पडा।"

और-और लडकियाँ तीनकौडिनको घेर बैठतीं, कहतीं—"दूल्हाको तू पहचानती है क्या?"

'और नहीं। उसकी मा तो हमारे मुहल्लेकी लडकी थी, पुरोहित चक्रवर्तियोंके यहा उसका मायका था। (स्वर नीचा करके) मधी

कहनेमे क्या बुराई, अच्छे वाम्हनोंके घर तो उन लोगोंका सम्बन्ध ही नहीं हो सकता, पर लच्छिमी जाति-कुल थोड़े ही देखती है।"

यह पहले ही कहा जा चुका है कि कुमुदिनीका मन इस नये ज़मानेके सॉंचेमे नहीं ढला था। जाति-कुलकी पवित्रता उसकी दृष्टिमे बडी भारी और वास्तविक चीज थी, इसीलिए मन जितना ही सकुचित होता, उतना ही उसे निन्दकोपर गुस्सा आता, घरमेसे सहसा रोती हुई वह बाहर चली जाती। इसपर सब एक-दूसरेकी देह मसककर कहतीं—"ओफ़्फोह। अभीसे इतनी पीर? यह तो देखती हू कि दक्ष-यज्ञकी सतीको भी मात किये देती है।"

विप्रदासके मनकी गति नये जमानेकी है, फिर भी जाति-कुलकी हीनताके खयालने उनपर कावू कर लिया है। इसीसे अफ़वाहको दाबनेके लिए बहुत-कुछ कोशिश की गई, मगर फटे तकियेको दवानेसे उसकी रुई और-भी ज़्यादा निकलने लगती है, यहाँ भी वही दशा हुई।

इधर पुरानी-रैयत वृद्ध दामोदर विश्वाससे मालूम हुआ कि बहुत पहले नूरनगरके पास सियाकुली गाँवमें घोपालोंकी ज़मींदारी थी। अब वह चटर्जियोके दखलमे है। प्रतिमा-विसर्जन-वाले मुकदमेमे किस तरह घोपाल-वशका विसर्जन हुआ था, किस कौशलसे बड़े मालिक साहबने उन्हें देश और समाजसे निकाल बाहर किया था, उसकी कथा सुनाते-सुनाते दामोदरका मुख भक्तिसे उज्ज्वल हो उठा। घोपाल-वंश किसी समय धनमें, कुलमे, प्रतिष्ठामें चटर्जियोंके

बराबरीका था—यह सन्तोषकी बात है, परन्तु विप्रदासके मनमें भय हुआ कि कहीं यह ब्याह भी उसी पुराने खातेकी कोई जूती-बाकी न हो।

[१३]

अगहनके महीनेमे ब्याह है। कुआर वदी पंचमीको लक्ष्मी-पूजा हो गई। सप्तमीके दिन सहसा तम्बू और बहुतसा असबाब लेकर घोपाल-कम्पनीके इंजिनियरिंग-डिपार्टमेन्टके ओवरसियर आ धमके, साथमें था पछाँहके मज़दूरोंका एक झुंड। आखिर माजरा क्या है?—सियाकुलीमे घोपाल-तालके किनारे तम्बू डालकर वर और बराती कुछ दिन पहलेसे ही वहाँ आकर ठहरेंगे।

यह कैसी अनोखी बात। विप्रदासने कहा—"वे जितने आना चाहें, आवें, जितने दिन रहना चाहे, रहे, हम ही सब इन्तज़ाम कर देंगे। तम्बुओंकी क्या ज़रूरत है? हमारा दूसरा मकान है, उसे खाली करवाये देते हैं।"

ओवरसियरने कहा—"राजा बहादुरका हुक्म है। तालके चारों तरफका जंगल साफ करनेको भी कहा है,—आप ज़मींदार हैं, आपकी आज्ञा चाहिए।"

विप्रदासके चेहरेपर सुर्खी आ गई, बोले—"यह काम क्या उचित हो रहा है? जंगल तो हम ही साफ करा सकते थे?"

ओवरसियरने विनयसे कहा—"राजा बहादुरके पुरखे यहाँ रहते थे, इससे तबियत हुई कि खुद ही उसे साफ करा लेंगे।"

बात बिलकुल असगत न थी, परन्तु आत्मीय-स्वजनोंके मनमे खटका हो गया। रिआया कहने लगी, यह हमारे मालिक साहबपर धाक जमानेकी कोशिश है। अचानक धन आ गया है न, वह दबाये दबता नहीं, उसे ढोल-ताशे बजा-बजाकर जाहिर करनेके लिए यह लीला रची जा रही है। वह जमाना होता, तो दूल्हा-समेत दूल्हेकी पालकीको वैतरणी पार करनेमे देर न लगती। छोटे मालिक होते तो वे भी न सह सकते थे। देख लिया जाता, तब वे बाबू और तम्बू कहाके मारे कहा चले जाते।

रैयतोंने आकर विप्रदाससे कहा—"हुजूर। उनके मुकाबले हम पीछे नहीं हट सकते। जो खर्च लगेगा, हम लोग मिलकर करेंगे।"

छै-आना हिस्सेके मालिक नवगोपालने आकर कहा—"वंशकी बेइज्जती नहीं सही जाती। एक दिन वह था, जब हमारे मालिकोंने घोषालोंकी अक्ल ठिकाने कर दी थी, आज वे ही हमारे इलाक़ेमे चढाई करके आये हैं रुपयेकी शान दिखाने!—अरे इसमे डरनेकी क्या बात है, भाई साहब। जो भी खर्च लगे, हम लोग तो है ही। जायदादका बटवारा हुआ है, वंशके सम्मानका तो बटवारा नहीं हुआ।"

इतना कहकर नवगोपाल अपने-आप ही कार्यकर्ता बन बैठे।

विप्रदास कई दिनसे कुमुदके पास नहीं जा पाये हैं। उसके मुँहकी तरफ ताकेंगे कैसे? कुमुदके सामने वरपक्षकी स्पर्द्धाकी

बात कोई नरमाईसे कहे, इतनी दया या भद्रता तो समाजमें है ही नहीं। कुमुदके सामने तो लोग और भी नमक-मिर्च मिलाकर कहते हैं। लड़कियोंका कोप तो उसीपर है। उसीके लिए तो पुरखोंकी बात हेठी हो रही है। राजरानी बनने चली है। बस, देख ली राजाकी हुलिया।

जाति-कुलकी बातको कुमुदने अपनी भक्तिसे ढक दिया था, पर धनकी बड़ाई करके श्वसुर-कुलकी तौहीनी करनेकी नीचता देखकर उसका मन ग्लानिसे भर गया। अब वह लोगोंकी निगाहसे बचती फिरती है। घोषाल-कुलकी लज्जा तो आज उसीकी लज्जा है। भइयाके मुँहसे कुछ सुननेके लिए उसका जी तड़प रहा है, मगर भइया मिलते ही नहीं, खानेके लिए भी वे भीतर नहीं आते।

एक दिन विप्रदास भट्टीकी जगह तजवीज करने अन्तःपुरके बगीचेमें गये। देखा, तो, पीछेके तालाबके घाटपर कुमुदिनी नीचेकी सीढ़ियोंपर बैठी है—सिर झुकाये पानीकी तरफ देख रही है। भइयाको देखकर वह झटसे उठ आई। आनेके साथ ही रुँधे हुए गलेसे बोली—"भइया, कुछ समझमें नहीं आता।"—कहकर आँचलसे मुँह ढककर रोने लगी।

भइयाने धीरे-धीरे पीठपर हाथ फेरते हुए कहा—"लोगोंकी बातोंपर ध्यान मत दे, बहन।"

"पर वे लोग यह सब क्या कर रहे हैं? इससे क्या तुम्हारी इज्जत रहेगी?"

"उनकी तरफसे भी विचार कर देख, कुमुद। पुरखोंकी जन्मभूमिमे आ रहे हैं, ज़रा धूमधाम नहीं मचायेंगे? इस बातको व्याहसे अलग कर डाल, फिर विचार कर देख।"

कुमुद चुप हो गई। विप्रदाससे न रहा गया, जानपर खेलकर बोले—"तेरे मनमे अगर जरा भी खटका हो, तो बोल, अब भी व्याह रुक सकता है।"

कुमुदिनीने तेजीसे सिर हिलाकर कहा—"छिः छिः। ऐसा भी कहीं होता है?"

अन्तर्यामीके सामने तो सत्य-ग्रन्थिमे गांठ लग ही चुकी है। अब जो बाकी है, वह तो सिर्फ बाहरकी बात है।

विप्रदासका इस जमानेका मन निष्ठासे इतना अधीर हो उठता है। उसने कहा—"दोनो पक्षकी भलमनसाहतमे ही विवाह-बन्धन सत्य है। स्वर बँधे हुए इसराजको कोई कीमत नहीं, अगर बजानेवाले हाथ ही बेसुरे हुए। पुराणोंमे देखो न, जैसी सीता थीं वैसे ही राम; जैसे महादेव थे वैसे ही सती; अरुन्धती जैसी थीं, वशिष्ठ भी वैसे ही थे। अबके ज़मानेमे बाबुओंमें तो पुण्य रहा ही नहीं, इसीसे इकतरफा सतीत्वका प्रचार करते फिरते हैं। उनकी तरफसे तो तेल नहीं जुटता, पलीतेको कहते हैं जलनेको।—सूखी जिन्दगीमे जलते-जलते ही बेचारी राख हुई जा रही है।"

कुमुदसे कहना फिजूल है। अभीसे वह मन-ही-मन ज़ोरोंसे जप करने लगी है—वे अच्छे हो या बुरे, वे ही मेरे जीवनाधार हैं।

"दु:खेष्वनुद्विग्नमना सुखेषु विगतस्पृहः
वीतरागभयक्रोधः———"

सिर्फ यति-धर्मका ही नहीं, बल्कि सती-धर्मका भी यही लक्षण है। वह धर्म सुख-दु:खसे परे है,—उसमें न क्रोध है, न भय। और अनुराग? उसकी भी क्या आवश्यकता है? अनुरागमें माँगने-मिलनेका हिसाब रहता है, भक्ति उससे भी बड़ी है। उसमें आवेदन नहीं है, निवेदन है। सती-धर्म निर्व्यक्तिक है, जिसे अंगरेजीमें कहते हैं 'इम्परसंनल'। मधुसूदन नामक व्यक्तिमें दोष हो सकते हैं, परन्तु पतिदेव नामक भाव-पदार्थ निर्विकार निरंजन है। उसी व्यक्तित्व-हीन ध्यान-रूपके सामने कुमुदिनीने एकाग्र चित्तसे अपनेको अर्पण कर दिया।

[१४]

घोपाल-तालके किनारेका जंगल साफ हो गया,—अब तो पहचाना भी नहीं जाता। जमीन बिलकुल चौरस हो गई है, बीच-बीचमें कहीं-कहीं सुरखीसे रंगी हुई सड़क है, सड़कके दोनों किनारे बत्तियोंके खम्भे हैं। तालकी काई और कीच-कद्दड़ सब निकाल दिया गया है। घाटके पास छोटी-छोटी दो नई विलायती नावें बँधी हैं, एकपर लिखा है "मधुमती" और एकपर "मधुकरी"।

जिस तम्बूमे राजा-बहादुर स्वयं ठहरेंगे, उसके सामने एक फ्रेममे पीली बनातपर लाल रेशमसे लिखा हुआ है—"मधुचक्र"। एक तम्बू अन्तःपुरका है, वहासे लेकर तालके पानी तक चटाईसे घिरा हुआ है। घाटके ऊपर एक पुराना नीमका पेड है, उसपर एक तख्ता लगा हुआ है, जिसपर लिखा है—"मधुसागर"। कुछ थोडीसी जमीनपर तरह-तरहके फूलोंके गमले लगे हुए हैं—गेंदा, बेला, मौलसिरी, सूर्यमुखी, गुलाब, चमेली, पत्ता-बहार, लकड़ीके चौखूटे बकससे तरह-तरहके रंगीन विलायती फूल शोभा दे रहे हैं। बीचमे एक छोटासा पक्का तालाब है, उसके ठीक बीचों-बीच एक लोहेकी ढली नग्न स्त्री-मूर्ति है, मुँहसे शंख लगाये हुए है, उसमेसे फुह्वारेका पानी निकला करेगा। इस स्थानका नाम रखा गया है—"मधुकुञ्ज"। प्रवेश करनेके रास्तेपर एक लोहेका फाटक है, जिसपर नक्काशीका काम हो रहा है, उसपर ध्वजा फहरा रही है, ध्वजापर लिखा है—"मधुपुरी"। चारो ओर 'मधु' नामकी छाप है। तरह-तरहके रंग-बिरंगे कपड़ो और कनातोंसे, चंदोओं और ध्वजाओंसे, रंगीन फूलों और चीनी लाल्टेनोसे सहसा बनी हुई इस 'मायापुरी' को देखनेके लिए दूर-दूरसे लोगोंके झुंड-के-झुंड आने लगे। मधुपुरीके ठाट निराले हैं, चमचमाती हुई चपरास डाले, लाल फीतादार पीली पगडी पहने, असली लाल बनातकी जरीदार वर्दी डाटे चपरासियोकी टोली-की-टोली विलायती जूते मचमचाती हुई इधरसे उधर घूम रही है। शामको खाली बन्दूकोंके धड़ाके करते हैं, दिन-रात घंटे-घंटेपर घंटा बजाते हैं, कोई-कोई तो चमडेके

कमरवन्दसे लटकती हुई विलायती तलवारसे जमींदारकी जमीनको ही खोदे डालते हैं। और चटर्जियोके वरकदाज तो पुराने जमानेकी भद्दी पोशाक पहनकर मारे शर्मके घरसे निकलना ही नहीं चाहते। रंग-ढंग देखकर चटर्जी-परिवारकी देहमे आग लग गई। नूरनगरके कलेजेपर नुकीला डंडा गाडकर उसपर आज घोषालोंकी जय-पताका उड रही है।

शुभ परिणयकी यह सूचना है।

[१५]

विप्रदासने नवगोपालको बुला कर कहा—"नवू, आडम्बरकी होडा-होडी करना—यह तो ओछे आदमियोका काम है।"

नवगोपालने कहा—"चतुर्मुखने झोली झाडकर ही इतने ज्यादा आदमी बना डाले हैं, चार मुँह सिर्फ़ बडी-बडी बातें बनानेके लिए ही हैं। रुपयेमे साढ़े-पन्द्रह आना आदमी ओछे हैं, उनसे सम्मानकी रक्षा करनी हो, तो ओछोका ही रास्ता पकडना पडेगा।"

विप्रदासने कहा—"उसमे भी तुम न जीत सकोगे। उससे बेहतर यह होगा कि सात्विक भावसे काम किया जाय, यही अच्छा रहेगा। योग्य ब्राह्मण पण्डितको बुलाकर अपने सामवेदके अनुसार

विप्रदास—"आप भी खूब हैं। पहले-पहल हमारे देशमे आना हुआ है, स्वागतके लिए भी न आता ?"

राजा—"आप भूलते हैं। आपके देशमे अभी नहीं आया। वह आना होगा व्याहके दिन।"

विप्रदास इसके मानी नहीं समझ सके। स्टेशनमे इतने भीड-भम्भडमे तर्क करनेकी जगह नहीं, इसलिए उन्होने सिर्फ इतना ही कहा—"घाटपर बजरा तय्यार है।"

राजाने कहा—"उसकी जरूरत न होगी, हमारा स्टीम-लच आ गया है।"

विप्रदासने समझ लिया कि मौका नहीं है। तो भी, फिर एक बार कहा—"खाने-पीनेकी चीजें, रसोईकी नाव, सब-कुछ तय्यार है।"

"क्यों इतना व्यर्थ उत्पात किया। किसी चीजकी जरूरत न होगी। देखिये, एक बात याद रखियेगा, मैं आया हू अपने पुरखोंकी जन्मभूमिमें—आपके देशमें नहीं। व्याहके दिन आपके यहाँ जानेकी बात है।"

विप्रदासने समझ लिया कि अब नरम होनेकी कोई आशा नहीं। कलेजेके भीतर धड़का-सा बैठ गया। स्टेशनके वेटिंग-रूममे आकर आराम-कुर्सीपर लेट गये। जाडोकी सन्ध्या थी, अँधेरा होता आता था। उत्तरसे गाडी आनेकी घटी बजी, स्टेशनकी बत्तियाँ जल गईं,—लगाम ढीली छोडकर घोडेको अपनी मरजीके माफिक चलनेकी आजादी देकर विप्रदास जब घर पहुचे, तब काफ़ी रात हो चुकी थी। कहाँ गये थे, कैसी बीती—किसीसे कुछ कहा नहीं।

उसी दिन रातको ठंढ लगकर विप्रदासको खाँसी शुरू हो गई। धीरे-धीरे बढ़ती ही गई। लापरवाही की, मगर इससे बीमारी और भी पकड़ बैठी। आखिरकार कुमुदने उन्हें बड़ी मुश्किलसे कह-सुनकर बिछौनेपर सुलाया। अनुष्ठानका तमाम भार आकर पड़ा नवगोपालपर।

[१६]

दो दिनके बाद ही नवगोपालने आ कर कहा—"क्या करूँ, कुछ सलाह दो।"

विप्रदासने बड़ी उत्सुकतासे पूछा—"क्यों ? क्या हुआ ?"

"साथमें कुछ साहब आये हैं,—शायद दलाल होंगे या शराबकी दूकानके विलायती कलवार, कल पीरपुरके टापूसे कुछ नहीं तो दो सौ बगुला मार लाये हैं। आज गये हैं चन्दनदहकी भीलपर। ऐसे जाड़ेके दिनोंमें, वहां बतकोंका मौसम है,—राक्षसी वजनकी *जीव-हत्या होगी—अहीरावण, महीरावण, हिडिम्बा, घटोत्कचसे लेकर* कुम्भकर्ण तकको पिण्ड देने योग्य,—प्रेतलोकमें दशानन रावणका भी मुँह थक जायगा।"

विप्रदास दंग रह गये, कुछ न बोले।

नवगोपालने कहा—"तुम्हारा ही हुक्म है कि इस भीलपर

कोई शिकार न कर सकेगा। उस बार जिलेके मजिस्ट्रेट तकको रोक दिया था, हम लोग तो डर गये थे कि कहीं तुम्हें भी बतक समझकर भूलसे गोली न मार दे। वह भला आदमी था, चला गया, मगर ये तो गो-मृग-द्विज किसीको भी माननेवाले आदमी नहीं हैं। फिर भी, अगर कहो तो, एक बार कहूं—"

विप्रदास उतावले होकर बोल उठे—"नहीं, नहीं, कुछ मत कहो।"

चीतेके शिकारमें विप्रदास ज़िले-भरमें सबसे अव्वल हैं। पहले कभी एक बार चिड़िया मारकर उनके मनमें ऐसा धिक्कार आया कि तबसे उन्होंने अपने इलाकेमें चिड़ियोंका शिकार बिलकुल बन्द ही कर दिया।

सिरहानेके पास बैठी हुई कुमुद विप्रदासके माथेपर हाथ फेर रही थी। नवगोपालके चले जानेपर उसने मुँहपर कठोरता लाकर कहा—"भइया, मना करवा दो।"

"क्या मना करवा दूँ ?"

"पक्षियोंका मारना।"

"वे उलटा समझ जायँगे कुमू, उन्हें सहन न होगा।"

"हाँ, सो समझने दो। मान-अपमान सिर्फ उनका अकेलेका ही नहीं है।"

विप्रदास कुमुदके मुँहकी ओर देखकर मन-ही-मन हँसे। वे जानते हैं, कुमुद कठिन निष्ठाके साथ मन-ही-मन सती-धर्मका अनुशीलन कर रही है। छायेवानुगतास्वच्छा। मामूली पक्षीकी जानके लिए कहीं कायाके साथ छायाका विच्छेद न हो जाय ?

— विप्रदासने स्नेहके स्वरमें कहा—"गुस्सा मत हो, कुमुद, मैंने भी तो किसी दिन चिड़िया मारी है। तब उसे मैं अन्याय ही न समझ सका था। इनकी भी आज वही दशा है।"

फिर क्या था, अथक उत्साहके साथ चलने लगा शिकार, पिकनिक, और शामको बैंड बाजेके साथ अंगरेज अतिथियोंका नाच। तीसरे पहर टेनिस, उसके सिवा तालमें नावोंपर तीन-तीन चार-चार परदे चढ़ाकर शर्त लगाकर पालका खेल,—उसीको देखनेके लिए गाँवके आदमी तालके किनारे जमा हो जाते हैं। रातको डिनरके बाद आवाजें उठती हैं—"फोर ही इज़ ए जौली गुड फेलो।" इन सब विलासोंके मुख्य नायक और नायिकाएं हैं साहब और मेमें, इसीसे गाँवके लोग चौंक उठते हैं। ये लोग जब सोलेके टोप पहन-पहनकर हाथमें मछली फँसानेकी छड़ी लिये मछली पकड़ने बैठते हैं, तब वह दृश्य देखते ही बनता है। दूसरी तरफ लाठीका खेल, कुश्ती, नाव चलानेकी होड़, 'जात्रा' या रहस, शौक़का थियेटर और चार-चार हाथियोंका घूमना,—इसके सामने है ही क्या?

ब्याहके दो दिन पहले तेल-ताई है। क़ीमती ज़ेवरोंसे लेकर खेलनेकी गुड़िया तक जितनी भी सौगात वरपक्षकी तरफसे आई, उसकी छटा देखकर लोग दंग रह गये। उसके लानेवाले वाहनोंकी संख्या कितनी थी। चटर्जियोंने भी खूब खर्चके साथ उन्हें विदा किया।

अन्तमें सर्व-साधारणको खिलाने-पिलानेके बारेमें वैवाहिक कुरुक्षेत्रका द्रोणपर्व शुरू हुआ।

उस दिन ढोल पिटवाकर सर्वसाधारणको निमन्त्रण दिया गया—'मधुसागर'के किनारे 'मधुपुरी'मे आनेके लिए। बुलाये ग़ैर-बुलाये सब आ सकते हैं, किसीके लिए रुकावट नहीं है। नवगोपाल मारे गुस्सेके आग-बबूला हो गये।—"हौसला तो देखो। हम लोग ठहरे जमींदार, यहाँ उनको क्या हक है कि वे अपनी 'मधुपुरी' खडी कर दें?"

इधर भोजकी तय्यारियाँ खूब व्यापक-रूपसे ही सबके सामने प्रकाशमान हो उठीं। मामूली फलाहार न था। दही, बूरा, खीर, मछली, खोआ, सन्देश, बरफी, मैंदा, बेसन, आटा, घी वगैरह बडी धूमधामके साथ आने लगा। पेडोके नीचे बडी-बडी भट्टियाँ बनाई गईं, तरह-तरहके छोटे-बडे हंडे, कडाहे, परात, कलसे, गगाल, मटुके वगैरह मँगाये गये, कतार-की-कतार बैलगाडियोपर लदकर आलू, बैंगन, केले, कद्दू, घुइयाँ वगैरह तरह-तरहकी साग-तरकारियाँ आने लगीं। भोज होगा शामको—हंडोकी रोशनीमे।

इधर चटर्जियोंके घर मध्याह्न-भोजन है। रैयतोंकी टोली-की-टोलीने मिलकर अपने आपही सब तय्यारियाँ कर ली हैं। हिन्दुओंके लिए अलग जगह है, मुसलमानोंके लिए अलग। मुसलमान रैयतोंकी सख्या ही अधिक है,—तडके ही, सूरज निकलनेसे पहले ही उन लोगोंने भट्टियाँ सुलगा दी हैं। भोजनकी सामग्री चाहे उतनी न हो, पर चटर्जियोंका जयकार हो रहा है उससे चौगुना। स्वय नवगोपाल बाबूने शामको पाँच बजे तक भूखे रहकर अपने सामने सबको खिलाया-पिलाया। उसके बाद फिर भिखारियोंको बाँटा गया।

मातवर प्रजाओंने अपने आप ही दान-वितरणकी व्यवस्था की। कलध्वनि और जयध्वनिने पवनमें समुद्र-मन्थन उपस्थित कर दिया।

मधुपुरीमें दिन-भर भट्टियाँ धधकीं। तरह-तरहके भोजन बने। उसकी सुगन्धसे बहुत दूर तक आमोदित हो गया। सकोरे, भोलुए और पत्तलोंका ढेर लग गया। तरकारी और मछलीके फेंके हुए छीलनपर कौओंकी काँव-काँव खूब जोरोंसे जारी है—दुनिया-भरके कुत्ते भी जमा हो गये हैं और आपसमें खूब छीना-झपटी कर रहे हैं। समय हो आया, रोशनियाँ जल गईं, मटियाबुर्जकी रसनचौकीने * ईमन-कल्याणसे लेकर केदारा तक तमाम राग अलाप डाले। अनुचर परिचर लोग रह-रहकर उद्विग्नताके साथ राजा-बहादुरके कानोंके पास फुस-फुस करके जतला रहे हैं कि अभी तक खानेवाले लोग काफी नहीं आये। आज पैंठका दिन है, दूसरे इलाकेसे जो पैंठ करने आये थे, उन्हीं में से कोई-कोई पत्तल बिछी देखकर बैठ गये हैं। कगले-भिखारी भी बहुत थोड़े आये हैं।

मधुसूदनने सूने तम्बूके अन्दर जा कर एक गहरा हुकारा लिया—"हूं!"

छोटे भाई राधूने आ कर कहा—"भइया, अब हो चुका, चलो!"

"कहाँ?"

"कलकत्ते लौट चलें। ये लोग सब बदमाशी कर रहे हैं। इनसे

---

* ब्याह शादियोंमें बजनेवाले ढोल, ताशे, शहनाई आदि प्राचीन बाजोंकी चौकी। अ०

भी बड़े-बड़े घरकी लडकियाँ तुम्हारी जरा छँगुनीके हिलाते ही आ जायँगी। सिर्फ एक बार 'तू' करनेकी जरूरत है।"

मधुसूदन गरजकर बोला—"जा, चला जा।"

सौ वर्ष पहले जैसी बीती थी, आज भी वैसी ही बीती। इस बार भी एक पक्षके आडम्बरकी चोटी बहुत ऊँची बनाई गई थी, दूसरे पक्षने उसे रास्तेसे निकलने न दिया, परन्तु असली हार-जीत बाहरसे देखनेमे नहीं आती। उसका क्षेत्र मानव-दृष्टिके अगोचर है।

चटर्जीकी रैयत खूब हँस ली। विप्रदास रोग-शय्यापर थे, उनके कानों तक कुछ पहुच ही न पाया।

[१७]

व्याहके दिन, राजाका हुक्म है, लडकीवालोंके घर जानेके रास्तेमे धूमधाम कतई बन्द। रोशनी न हुई, बाजे भी न बजे, साथमे सिर्फ पुरोहित थे और दो भाट। पालकीमें बैठकर चुपके-से कब बरात आ गई, लोगोंको सहसा पता भी न चला। इधर मधुपुरीमे बड़े-भारी तम्बूके भीतर रोशनी जलाकर बैण्ड बाजेके साथ बडी धूम-धामसे बराती लोग भोजन और आमोद-प्रमोदमे लगे हुए हैं। नवगोपाल समझ गये, यह उसका उलटा जवाब है। ऐसे

मौक़ोपर कन्यापक्षकी ओरसे बड़ी आरजू-विनतीके साथ वरपक्षको मनाना पड़ता है,—नवगोपालने कुछ भी न किया। एक बार मुँहसे पूछा तक नहीं कि बराती लोग कहाँ रह गये।

कुमुदिनी सज-धजकर विवाह-मण्डपमें जानेसे पहले भइयाको प्रणाम करने आई, उसका सारा शरीर काँप रहा है। विप्रदासको तब एक सौ पाँच डिग्री बुखार था, छाती और पीठपर राई-सरसोंका परलेप लगा हुआ था, उनके पैरोंपर सिर रखकर कुमुदिनीसे रहा न गया, सिसक-सिसक कर रो उठी। क्षेमा-बुआने हाथसे उसका मुँह दाबकर कहा—"छि, ऐसे नहीं रोया करते।"

विप्रदासने जरा उठकर कुमुदको हाथसे पकड़कर पासमें बिठाया, फिर उसके मुहकी तरफ कुछ देर तक देखते रहे—दोनों आँखोंसे आँसू ढलक-ढलककर गिरने लगे। क्षेमा-बुआने कहा—"बरात तो हो चला।"

विप्रदासने कुमुदके सिरपर हाथ रखकर भर्राई हुई आवाज़में कहा—"सर्वशुभदाता कल्याण करें।" कहनेके साथ ही धपसे बिछौनेपर लेट गये।

विवाहके समय, शुरूसे अन्त तक कुमुदिनीकी आँखोंसे आँसू गिरते रहे। वरके हाथपर जब हाथ रखा, तब उसके हाथ, बर्फ़-से ठंडे और थर-थर काँप रहे थे। शुभ-दृष्टिके समय उसने क्या पतिका मुह देखा है? शायद नहीं देखा। इन लोगोंके व्यवहारसे उसका हृदय पतिसे कुछ डर-सा गया है। चिरैयाको ऐसा मालूम पड़ रहा है कि मानो उसके लिए घोंसला नहीं है—जाल है।

मधुसुदन देखनेमे बदसूरत नहीं है, पर है बडा कठिन। काले मुहपर दृष्टि डालते ही जो सबसे पहले नजर आती है, वह है चिडियाकी चोंचकी-सी बडी बाँकी नाक—ओठोंके सामने तक झुकक जैसे पहरा दे रही हो। चौडा ढालू माथा घनी भौहोंपर रुके हु स्रोतकी तरह फूला हुआ है। उन भौहोंकी छाया-तले संकुचि तिरछी आँखोंकी तीव्र दृष्टि है। दाढी और मूँछें उस्तरेसे साफ ओठ दबे-हुए और ठोढी भारी है। हबसियोंकी तरह कुँकडे हु कडे बाल है—सिरकी चमडीके पास तक खूब बारीक छँटे हुए हैं खूब गठीला और चुस्त शरीर है, जितनी उमर है, उससे कम हं जँचती है, सिर्फ दोनो कनपटियोंके ऊपरके बाल कुछ-कुछ सफेद हं गये हैं। क़दका नाटा है, खडे होनेपर सिर कुमुदिनीके बराबर रहत है। हाथोंपर रोएं बहुत है और देहके मुकाबले वे कुछ छोटे मालू देते हैं। देखते ही मालूम हो जाता है कि आदमी बिलकुल ठोस है सिरसे पैर तक हरवक़्त जैसे कोई प्रतिज्ञा मनसूबे बाँधकर बैठी हो मानो भाग्य-देवताकी तोपसे कोई गोला निकलकर एक ही गति उडा जा रहा हो। देखते ही समझमे आ जाता है कि फजूलकी बात फजूल विषय और फजूल आदमियोकी तरफ ध्यान देनेको उसके पा बिलकुल भी समय नहीं है।

विवाह इस ढंगसे हुआ कि सभीको बुरा मालूम दिया। वरप और कन्यापक्षके पहले ही संस्पर्शमें ऐसी एक बेसुरी झनकार उ कि उसमें उत्सवका सगीत ही डूब गया। रह-रहकर कुमुदके मन एक प्रश्न अभिमानसे कलेजेको ढकेलकर बाहर निकला आता है-

"तो क्या भगवानने मुझे भरमा दिया ?" संशयको जी-जानसे दाबे रखती, बन्द घरमें अकेली बैठकर बार-बार ज़मीनसे सिर छुआकर प्रणाम करती। मन-ही-मन कहती—'मन कमज़ोर न होने पावे।' सबसे ज्यादा कठिनाई आ पड़ती है भइयासे संशय छिपानेमें।

माकी मृत्युके बादसे कुमुदिनीकी सेवापर ही विप्रदास रह रहे थे। कपड़े-लत्ते, दिन-खर्चके लिए रुपये-पैसे, किताबोंकी आलमारी, घोड़ेका दाना, बन्दूकका माँजना-घिसना, कुत्तेकी सेवा-टहल, कैमेराकी हिफ़ाजत, बाजोंकी देख-भाल, सोने-बैठनेके कमरेकी सफाई—सब कुछ कुमुदिनीके ही हाथमें है। इतना अधिक अभ्यास हो गया है कि रोज़के काम-धन्धोंमें कुमुदका हाथ कहींपर न होनेसे उन्हें कोई चीज़ रुचती ही नहीं। और कुमुदकी यह दुःसाध्य कोशिश थी कि विदा होनेसे पहले जो उसने रोग-शय्यापर भइयाकी अन्तमें कई दिन तक सेवा की है, उसपर उसकी अपनी चिन्ताकी कोई छाया न पड़े। कुमुदके 'इसराज' बजानेकी निपुणतापर विप्रदासको बड़ा गर्व है। लजवन्ती कुमुद सहजमें बजानेको राजी नहीं होती, परन्तु इधर उसने तो दो दिनसे अपने-आप भइयाको कनाडा मालकोषका राग सुनाया है। इसी रागमें उसके देवताका स्तवन था, उसकी प्रार्थना थी, उसकी आशंका थी, उसका आत्म-निवेदन था। विप्रदास चुपचाप आँखें मींचकर सुनते और बीच-बीचमें फ़रमाइश करते—सिन्धु, विहाग, भैरवी,—जिन स्वरोंमें विच्छेद-वेदनाका क्रन्दन बजता है। उन स्वरोंमें भाई-बहन दोनोंकी व्यथा एक होकर मिल जाती। मुँहसे दोनोंने कुछ नहीं कहा, न किसीको किसीने सान्त्वना दी, और न अपना दुःख ही व्यक्त किया।

विप्रदासका बुखार, खाँसी, छातीका दर्द दूर न हुआ, बल्कि बढने लगा। डाक्टर कहता है—'इन्फ्लूएंजा है, सम्भव है न्यूमोनिया हो जाय, खूब सावधानीसे रहना चाहिए।' कुमुदके मनमे उद्वेगकी सीमा नहीं है। बात थी कि बढारके दिन 'कालरात्रि'* यहीं बिताकर दूसरे दिन कलकत्ते रवाना होंगे, परन्तु अब सुनते हैं, मधुसूदनने अकस्मात् प्रतिज्ञा कर ली है कि ब्याहके दूसरे ही दिन कुमुदको लेकर चले जायँगे। कुमुदने समझा—यह रिवाजके लिहाजसे नहीं, जरूरतके लिए नहीं, प्रेमके लिए नहीं, बल्कि शासनके लिए किया जा रहा है। ऐसी दशामे अनुग्रहकी भीख माँगनेमे अभिमानिनियोके सिरपर वज्र-सा पडता है। फिर भी कुमुदने सिर नीचा करके लज्जाको दूरकर काँपती हुई जबानसे विवाहकी रातको पतिके पास जाकर यह प्रार्थना की थी कि बस, सिर्फ दो दिनके लिए और उसे मायकेमे रहने दिया जाय, जिससे भइयाको वह जरा अच्छा देखकर जा सके। मधुसूदनने सक्षेपमे कहा—"सब तय्यारियाँ हो चुकी हैं।" ऐसी वज्रसे बँधी हुई इकतरफा तय्यारियाँ। कुमुदकी मर्मान्तिक वेदनाके लिए उसमे तिल-भर भी स्थान नहीं।

उसके बाद, मधुसूदनने रातको उससे बात करनेकी कोशिश की, मगर उसने एकका भी जवाब न दिया, बिछौनेके एक किनारेसे मुँह फेरकर पडी रही।

---

* बगालकी एक वैवाहिक प्रथा, जिसके अनुसार दूल्हा-दुलहिन चौबीस घंटे तक एक दूसरेको देख नहीं सकते।

—अ०

तब तक अँधेरा था, चिड़ियोंकी पहली चुहचुहाहट सुनते ही वह बिछौनेसे उठकर चली गई।

विप्रदास सारी रात तड़फड़ाते रहे हैं। सन्ध्याके समय चढ़े-बुखारमे ही विवाह-मण्डपमे जानेको तय्यार हो गये थे। डाक्टरने बड़ी मुश्किलसे उन्हें सम्हाल रखा। बराबर आदमी भेजकर खबर लेते रहे। ये खबरें युद्धके समयकी खबरोंके समान अधिकाश बनावटी होती थीं। विप्रदासने पूछा—"बरात कब आई? बाजे-बाजे तो नहीं सुनाई दिये?"

सवाददाता शिबूने कहा—"जमाई साहब बड़े समझदार हैं,—आप बीमार हैं, सुनकर सब बन्द करवा दिये—बरातियोंके पैरोंकी आहट तक न सुनाई दी।"

"क्यों रे शिबू, खाने-पीनेकी चीज-वस्त सब ठीक थी, पूर पड़ गई थी? मुझे उसीकी फिकर थी, यह तो कलकत्ता नहीं है, गाँव ठहरा।"

"खूब, खूब। कितनी तो फेंकनी पड़ी। अगर उतने ही और आ जाते, तो भी पूर पड़ जाती?"

"वे लोग खुश हुए या नहीं?"

"एक भी शिकायत किसीके मुँहसे नहीं सुनी गई। जरा भी नहीं। और भी तो इतने व्याह देखे हैं, बरातियोंकी ज्यादतियोंके मारे लड़कीवालेकी नाकमें दम आ जाता है। ये लोग ऐसे भलेमानस निकले कि कुछ मालूम भी न पड़ा।"

विप्रदासने कहा—"कलकत्तेके रहनेवाले हैं न, इसीसे इतनी

भलमनसाहत पाई जाती है। वे समझते हैं, कि जिस घरसे लड़की लेंगे, उनका अपमान करना अपना ही अपमान है।”

“हाँ, हाँ, हुजूरने जो बात कही, उसे मैं उन लोगोंको सुना दूँगा। सुनकर खुश हो जायेंगे।”

कुमुद कल शामको ही समझ गई थी कि बीमारी आगे बढ रही है। फिर भी वह भइयाकी सेवा न कर सकेगी, यह दुःख हरदम उसके हृदयके भीतर जालमे फँसी चिरैयाकी तरह छटपटाने लगा। कुमुदके हाथकी सेवा तो उसके भइयाके लिए दवासे भी बढकर है।

नहा-धोकर ठाकुरजीको फूल चढाकर कुमुद जब भइयाके कमरेमें गई, तब सूर्य भी न निकले थे। कठिन रोगके साथ बहुत देर तक लडाई लड़नेके बाद क्षण-भरके लिए जो छुट्टी पानेके समय अवसादका वैराग्य आता है, उस वैराग्यसे विप्रदासका मन तब शिथिल हो रहा था। जीवनकी आसक्ति और घर-गिरस्तीकी चिन्ता, यह सब उन्हें कटे हुए सूखे खेतकी तरह फीकी मालूम पडने लगी। सारी रात दरवाजा बन्द था, डाक्टरने तडके ही आकर पूरबकी ओरका जगला खोल दिया है। ओससे भीगे-हुए पीपलके पत्तोंकी आडमे अरुण आकाशकी आभा धीरे-धीरे शुभ्र होती जा रही है— पासकी नदीमे महाजनोंकी नावोके थिगली-लगे पाल उस अरुण आकाशकी गोदमें फूले नहीं समाते। नौबतमें करुण-स्वरमे रामकेलि बज रही है।

कुमुदने पलगके पास जाकर अपने दोनो ठंढे हाथमे भइयाके सूखे गरम हाथ उठाकर रख लिये। विप्रदासका टेरियर कुत्ता पलगके

नीचे उदास होकर चुपचाप सो रहा था। कुमुदके पलगपर बैठते ही वह उठ खडा हुआ, और उसकी गोदमे आगेके दोनो पैर रखकर पूँछ हिलाता हुआ करुण आँखोसे क्षीण आर्तस्वरमे न जाने क्या पूछने लगा।

विप्रदासके मनमे भीतर-ही-भीतर कोई एक चिन्ताकी धारा बह रही थी, इसीसे सहसा बिना किसी सिलसिलेके उनके मुँहसे निकल पडा—"बहन, असलमे कुछ भी नहीं है,—कौन बडा है, कौन छोटा, कौन ऊपर है, कौन नीचे। ये सब बनाई हुई बातें हैं। झागके अन्दर बुदबुदोंके लिए कहाँ किसका स्थान है,—इससे क्या बनता-बिगडता है? अपने भीतर आप सरल बनकर रहना,—कोई भी तुझे मार न सकेगा।"

"मुझे आशीर्वाद दो भइया, मुझे आशीर्वाद दो"—कहकर कुमुदने दोनों हाथोंसे अपना मुँह ढककर रोना छिपा लिया।

विप्रदास तकियेके सहारे ज़रा उठकर बैठ गये, और कुमुदका सिर अपनी ओर खींचकर उसका माथा चूमा।

डाक्टरने घरमे आकर कहा—"बस, रहने दो, कुमुद बहन, अब उन्हें जरा शान्त रहनेकी ज़रूरत है।"

कुमुदने रोगीके तकियेको ज़रा दाब-दूबकर ठीक कर दिया, अच्छी तरह कपडे उढा दिये, पासकी तिपाईपर-की चीज़ें सम्हाल दीं, फिर भइयाके कानोंके पास कोमल-स्वरसे कहा—"आराम होते ही कलकत्ते आना भइया, वहाँ तुम्हें मैं ज़रूर देखूँ।"

विप्रदासने अपनी बडी-बडी दोनों स्नेहपूर्ण आँखोंको कुमुदके

मुँहपर स्थिर रखकर कहा—"कुमू, पश्चिमके बादल आते हैं पूरबको, और पूरबके जाते हैं पश्चिमको,—यह सब-कुछ हवासे होता है। ससारमे यही हवा चल रही है। बादलकी तरह इसे स्वाभाविक जान लेना, बहन। अबसे, हम लोगोंकी ज्यादा फिकर मत करना। जहाँ जा रही है, वहाँ तू लक्ष्मीका आसन घेरे रहना—यही मेरा सम्पूर्ण हृदयका आशीर्वाद है। तुझसे हम लोग और कुछ नहीं चाहते।"

भइयाके पैरोंके पास कुमुद सिर रखकर पडी रही। "मुझसे अब और कुछ भी नहीं चाहिए। यहाकी प्रतिदिनकी जीवन-यात्रामें मेरा जरा भी हाथ न रहेगा।"—क्षण-भरमे इतनी बडी विच्छेदकी बात उसके मनमें नहीं समा सकती। तूफान जब नावको किनारेसे खींच ले जाता है, तब लंगर जैसे मिट्टीको जकडकर पकडे रहना चाहता है, भइयाके पैरोंके पास कुमुदिनीका भी वैसा ही अन्तिम व्यग्रताका बन्धन था। डाक्टरने फिर आकर धीरेसे कहा—"बस करो, बहन।" कहकर अपनी अश्रुपूर्ण आँखें पोंछ डालीं। कुमुद—कमरेसे निकलकर, दरवाजेके बाहर जो चौकी बिछी थी उसपर बैठकर—आँचलसे मुह ढककर रोने लगी। सहसा याद उठ आई भइयाके 'चेसी' घोडेकी, उसे वह अपने हाथसे खिलाकर जायगी, इसके लिए कल रातको ही उसने गुड मिले हुए आटेकी मीठी रोटी बना रखी है। सईस आज सुबह ही उसे पीछेके बगीचेमे छोड आया है। कुमुदने वहाँ जाकर देखा, घोडा आमडेके पेडके नीचे घास खाता फिर रहा है। दूरसे कुमुदके पैरोंकी आहट सुनकर

आज सहसा उन्हें उसकी याद उठ आई। दीवानजीको बुलाकर हुक्म दिया—"बैकुंठको आज ही ढाई सौ रुपये भेज दो।" दीवानजी चुपचाप खड़े-खड़े सिर खुजाने लगे। जिद्दाजिद्दीके कारण विवाहमें रुपये तो खूब खर्च किये जा चुके थे, पर अब बहुत दिनों तक उसका हिसाब निपटाना पड़ेगा, ऐसे समयमें ढाई सौ रुपये—बड़ी-भारी रकम है।

दीवानजीके मुहके भावको देखकर विप्रदासने उँगलीसे हीरेकी अँगूठी निकालकर कहा—"छोटे बाबूके नामसे बैंकमें जो रुपये जमा कराये हैं, उनमें से ये ढाई सौ रुपये लो, उसके बदले मेरी अँगूठी गहने रही। बैकुंठको रुपये कुमुदके नामसे भेजे जायँ, अच्छा।"

[१६]

विवाहके लकाकाडका अन्तिम अध्याय अभी बाकी ही है। सवेरे ही कुशंडिका * समाप्त करके वर-वधूकी विदा होनेकी बात थी। नवगोपालने उसके लिए तमाम तय्यारियाँ कर रखी हैं। इतनेमें विप्रदासके कमरेसे निकलकर राजा-बहादुर बोल बैठे—"कुशंडिका हमारे यहाँ होगी, मधुपुरीमें।"

* वैवाहिक अनुष्ठान, जिसमें वर-वधू परस्पर सम्बोधन करके प्रतिज्ञा करते हैं—"मैं तुम्हारे भरण-पोषणका तथा ऐहिक और पारलौकिक मंगलका भार ... पति और पति-कुलकी हितैषिणी होकर सब

कई वरस हुए, वैकुण्ठने सम्पन्न गृहस्थके घर अपनी लडकी व्याही है। उन्हें दहेजकी विशेप कोई आवश्यकता न थी, इसीलिए दूल्हेका पण भी वहुत ज़्यादा था। वारह सौ रुपयेमे सौदा तय हुआ, साथ ही अस्सी तोले सोनेका जेवर भी। इकलौती लाडली विटिया थी, इसीसे वह अपनी जानपर खेलकर इसपर राजी हुआ था। एक साथ सव रुपये न जुटा सका था, इससे लडकी वेचारीको कष्ट दे-देकर उन लोगोने वापका खून सोखा है। पूँजी सव निवट गई, तवाह हो चुका, फिर भी अभी ढाई सौ रुपये देने ही हैं। अवकी तो लडकी वेचारी वहुत ही तंग आ गई, उसके अपमानका ठिकाना न रहा। जव कष्ट एकदम असह्य हो उठे, तो वेचारी मायके भाग आई। जेलके कैदीने जेलका नियम भग कर डाला, इससे तो अपराध और भी वढ गया। पहले वाकीके ढाई सौ रुपये चुकाकर लडकीकी जान वचा ले, तव कहीं उसे अपने मरनेकी वात सोचनेका समय मिले।

विप्रदास उदास हँसी हँसे। काफी सहायता देनेकी वात तो उस दिन वे सोच भी न सकते थे। कुछ देर तो इधर-उधर करते रहे, फिर उठकर सन्दूकमे-से थैली भाडकर दस रुपयेका एक नोट निकालकर उसके हाथमे दिया। वोले—"और भी दो-चार जगह कोशिश कर देखो, अव मेरी शक्तिसे वाहर है।"

वैकुण्ठको इस वातपर ज़रा भी विश्वास न हुआ। पैर घसीटता हुआ चला गया, जूतेकी आहट वहुत ही खेदजनक थी।

उस दिनकी यह वात विप्रदास क़रीव-क़रीव भूल ही चुके थे,

आज सहसा उन्हें उसकी याद उठ आई। दीवानजीको बुलाकर हुक्म दिया—"वैंकुंठको आज ही ढाई सौ रुपये भेज दो।" दीवानजी चुपचाप खड़े-खड़े सिर खुजाने लगे। जिद्दाजिद्दीके कारण विवाहमें रुपये तो खूब खर्च किये जा चुके थे, पर अब बहुत दिनों तक उसका हिसाब निबटाना पड़ेगा, ऐसे समयमें ढाई सौ रुपये—बड़ी-भारी रकम है।

दीवानजीके मुहके भावको देखकर विप्रदासने उँगलीसे हीरेकी अँगूठी निकालकर कहा—"छोटे बाबूके नामसे बैंकमें जो रुपये जमा कराये हैं, उनमें से ये ढाई सौ रुपये लो, उसके बदले मेरी अँगूठी गहने रहो। वैंकुंठको रुपये कुमुदके नामसे भेजे जायँ, अच्छा।"

[१९]

विवाहके लकाकाडका अन्तिम अध्याय अभी बाकी ही है। सवेरे ही कुशाडिका * समाप्त करके वर-वधूकी विदा होनेकी बात थी। नवगोपालने उसके लिए तमाम तय्यारियाँ कर रखी हैं। इतनेमें विप्रदासके कमरेसे निकलकर राजा-बहादुर बोल बैठे—"कुशाडिका हमारे यहाँ होगी, मधुपुरीमें।"

* एक वैवाहिक अनुष्ठान, जिसमें वर-वधू परस्पर सम्बोधन करके प्रतिज्ञा करते हैं। वर —"मैं तुम्हारे भरण-पोषणका तथा ऐहिक और पारलौकिक मङ्गलका भार अपने ऊपर लेता हूँ।" वधू —"मैं पति और पति-कुलकी हितैषिणी होकर सब काम करूँगी।" —अ०

और कोई बहुत ही भलमनसाहतसे पूछती—"क्यो जी, देहपर क्या रंग लगाती हो, तुम्हारे भाईने विलायतसे भेज दिया होगा, क्यो ?" सभीने मीमासा की—आँखें बड़ी नहीं हैं, पैर स्त्रियोंके देखे बहुत बड़े है। शरीरका प्रत्येक गहना घुमा-फिराकर देखने लगीं, बोलीं—"पुराने जमानेकी चीज है, वजनमे भारी है, सोना पक्का है"—"ऊँह ! बलिहारी है फैशनकी।"

औरतोके डब्बेमे प्लेटफार्मसे उलटी तरफकी खिडकियाँ खुली थीं, कुमुदिनी उसी ओर देखती रही, कोशिश करने लगी कि इनकी बातें उसके कानोमे न घुसने पावें। देखा, एक पैरसे लगडा एक कुत्ता तीन पैरोसे लगडाता हुआ मिट्टी सूँघता फिर रहा है। अहा, अगर कुछ खानेकी चीज उसके हाथमे होती। कुछ भी न थी। कुमुद मन-ही-मन सोचने लगी—एक पैर कट जानेसे बेचारेके लिए जो कुछ सहज था, सब कठिन हो गया। इतनेमे कुमुदके कानोमे एक भनक पडी, सैलून गाडीके सामने खडा हुआ एक भलामानस कह रहा था—"देखिये, इस किसानकी लडकीको बहकाकर आरकाटी लोग आसामके चाय-बगानको लिये जा रहे थे, यह भाग आई है। ग्वालन्द तकका किराया इसके पास है, इसका घर है डुमरॉव, अगर थोडीसी सहायता करें, तो बेचारी बच जाय।" सैलून गाडीमे से कुमुदने एक कडी घुडकीकी आवाज सुनी। उससे रहा न गया, उसी वक्त दाहिनी ओरकी खिडकी खोलकर, अपने मोतियोंके बुने हुए बटुएमेसे दस रुपये निकालकर उस लडकीके हाथपर रख दिये और चटसे खिडकी बन्द कर ली। यह देख एक औरत बोल

उठी—"हमारी बहूजीका खर्चीला हाथ देखा ?" एक दूसरी बोल उठी—"खर्चीला हाथ नहीं बहन, दरवाजा है दरवाजा—लक्ष्मीको विदा करनेका।" तीसरी बोली—"रुपये उड़ाना ही सीखा है, जोड़ना सीखतीं तो काम आते।" इसे उन लोगोंने 'शेखी' करार दी,—"बाबू लोगोंने जिसे एक पैसा भी नहीं दिया, आपने उसके लिए झटसे दस रुपये फेंक दिये, इतनी ठसक काहेकी।" उन लोगोंको मालूम हुआ कि यह भी शायद उसी चटर्जी-घोषालोंकी हमेशाकी अदावतका एक अंग है।

इसी समय उनमेंसे एक मोटी-ताजी काली लड़की—बड़ी-बड़ी आँखें थीं, स्नेहरससे भरा हुआ मुँह था, कुमुदके बराबरकी होगी—उसके पास आकर बैठ गई। चुपकेसे बोली—"मन नहीं लगता, क्यों बहन ? इन लोगोंकी बातोंपर ख्याल मत करना, दो-चार दिन तक इसी तरह मसका-मसकी बोली-ठोली चलती रहेगी, फिर कठसे जरूर उतर जानेपर सब ठंढी हो जायेगी।" यह लड़की कुमुदकी मँझली दौरानी है, नवीनकी स्त्री। नाम है निस्तारिणी, उसे सब कोई 'मोतीकी मा' कहा करते हैं।

मोतीकी माने जिक्र छेड़ा—"जिस दिन मैं नूरनगर आई, स्टेशनमें तुम्हारे बड़े भइयाको देखा था।"

कुमुद चौंक उठी। उसके भइया स्टेशनपर स्वागतके लिए गये थे, उसने यह खबर पहले-ही-पहल सुनी।

"अहा, कैसा शरीर था। ऐसा कभी मैंने आँखोंसे नहीं देखा। फिर गीतमें सुना था—हाँ, कीर्तनमें—

श्री चैतन्य-रूपकी आई ऐसी बाढ महान,

बहा ले गई जो नदियाकी नारीगणके प्रान। *

मुझे उसीकी याद आ गई।"

क्षणमे कुमुदका मन पिघल गया। मुँह तिरछा करके खिडकीकी ओर देखती रही,—बाहरका मैदान, वन, आकाश सब-कुछ आंसुओंकी भाफसे धुधला दिखाई देने लगा।

मोतीकी माको समझनेमे देर न लगी कि किस जगह कुमुदके दर्द है, इसीसे घुमा-फिराकर वह उसके भइयाकी ही बातें करने लगी। पूछा—"भइयाका ब्याह हो गया है क्या ?"

कुमुदने कहा—"नहीं तो।"

मोतीकी मा बोल उठी—"अरे, कहती क्या हो। ऐसा देवताके समान रूप। और अभी तक घर खाली ही है। किस भाग्यवतीके लिए है वह वर।"

कुमुद सोच रही थी—भइया गये थे सारा अभिमान छोडकर सिर्फ मेरे ही लिए। उसके बाद ये लोग जरा देखने भी नहीं गये। सिर्फ धनके मदमे ऐसे आदमीकी भी अवज्ञा करनेपर उतारू हो गये। उनका शरीर शायद इसीलिए टूट-सा गया है।

वृथा पश्चात्तापके साथ बार-बार मन-ही-मन कहने लगी—भइया क्यों स्टेशन गये। क्यो अपनेको छोटा बनाया। मेरे लिए ? मैं मर क्यों नहीं गई ?

---

* बगालमें है—"गोरार रूपे लागलो रसेर बान—
भासिये निये जाय नदियार पुरनारीर प्राण।"

जो बात हो चुकी है, अब लौट नहीं सकती, उसीपर उसका मन सिर धुनने लगा। बार-बार याद आने लगा—रोगसे क्लान्त वह मुख, आशीर्वादसे भरी हुई स्निग्ध गम्भीर वे दोनो आँखें।

[२०]

रेल-गाडी जब हवडा पहुची, तब करीब चार बजे थे। चादर और दुपट्टे मे गठजोड बाँधे दूल्हा-दुलहिन बैठे जाकर ब्रूहम-गाडीमे। कलकत्ता शहरके दिनके प्रकाशमे असंख्य आँखें थीं, उनके सामने कुमुदका शरीर और मन सकुचित बना रहा। इस उन्नीस वर्षके कुमारी-जीवनमे उसके अग-अगमे जो एक महान शुचिता गहराईके साथ व्याप्त थी, उसे वह कर्णके स्वाभाविक कवचके समान किस तरह सहसा हटा दे? ऐसा मत्र है, जिस मत्रसे यह कवच पलक मारते ही अपने-आप खिसक पडे। परन्तु वह मन्त्र हृदयमे अभी तो गूँजा नहीं है। बगलमे जो आदमी बैठा हुआ है, मनके अन्दर वह तो अब भी बाहरका आदमी है। अपना आदमी बननेमे उसकी तरफसे सिर्फ बाधाएँ ही पड रही हैं। उसके भावमें, व्यवहारमें जो एक कठोरता है, उसने तो कुमुदको अभी तक सिर्फ धक्के दे-देकर दूर ही रखा है।

इधर, मधुसूदनके लिए कुमुदिनी एक नया आविष्कार है।

स्त्री-जातिका परिचय प्राप्त कर सके, ऐसा अवसर अब तक इस कमेरे आदमीको बहुत ही कम मिला है। उसके पण्य-जगत्की * भीड़में पण्य-नारीकी † परछाईं भी उसपर नहीं पडी है। किसी स्त्रीने उसके मनको कभी विचलित ही नहीं किया, यह बात सच नहीं, लेकिन भूडोल तक ही हुआ है—इमारत जखम नहीं हुई। मधुसूदनने स्त्रियोंको बहुत ही संक्षेपमें देखा है, घरकी बहू-बेटियोंमें। वे घरका काम-धन्धा करती हैं, कलह फैलाती हैं, काना-फूँसी करती हैं, मामूली-सी बातपर रोना-धोना भी मचा देती हैं। मधुसूदनके जीवनमें इनका सरव बहुत ही थोड़ा है। उसकी स्त्री भी संसारके उसी न-कुछ-से विभागमें स्थान पायेगी और दैनिक गार्हस्थ्यकी तुच्छतामें छायाच्छन्न होकर दीवालकी ओटमें मालिकोंके इशारेपर चलानेवाली नारी-सुलभ जीवन-यात्रा बितावेगी, इससे ज्यादा कुमुदके लिए वह और कुछ न सोच सका था। स्त्रीके साथ बर्ताव करनेका भी जो एक कला-नैपुण्य है, उसके भीतर भी मिलने या खोनेकी कोई कठिन समस्या हो सकती है, यह बात उसके हिसाब-दक्ष सतर्क मस्तिष्कके एक कोनेमें भी उदित न हुई थी। पेड़ोंके लिए तितली जैसे फिजूल है, फिर भी तितलीका संसर्ग जैसे पेड़ोंको मान लेना पड़ता है, भावी स्त्रीको भी मधुसूदनने वैसा ही सोचा था।

अब मधुसूदनने ब्याहके बाद पहले-पहल कुमुदिनीको देखा।

---

* वाणिज्य-जगत्।

† पणप्रथाके अनुसार दहेज लेकर ब्याही हुई स्त्री।

एक तरहका सौन्दर्य है, जो मालूम देता है मानो एक दैवी आविर्भाव है, ससारकी साधारण घटनाकी अपेक्षा कहीं अधिक बढ़कर है,—प्रतिक्षण मानो वह आकाक्षासे परे है । कुमुदका सौन्दर्य इसी श्रेणीका है। वह मानो शेष-रात्रिके शुकतारेके समान है, रात्रिके जगतसे न्यारी है, प्रभातके जगतके उस पार है। मधुसूदनने अपने अवचेतन मनमे, अपनेसे अगोचरमे, कुमुदको एक तरहसे अपनेसे श्रेष्ठ समझा, कम-से-कम एक चिन्ता उठी—इसके साथ किस तरहका वर्ताव करना चाहिए, कौनसी वात किस ढगसे कहना ठीक होगा।

क्या कहकर वातचीत शुरू करें, यह सोचते-सोचते मधुसूदन सहसा पूछ बैठा—"इधरसे धूप आ रही है, क्यो ?"

कुमुदिनीने कुछ भी जवाव न दिया। मधुसूदनने दाईं तरफका परदा खींच दिया।

कुछ देर फिर सन्नाटा रहा। फिर खामख्वाह बोल उठा—"जाडा तो नहीं लगता ?" कहते हुए उत्तरकी प्रतीक्षा न कर सामनेकी सीटपर-से विलायती कम्वल खींचकर कुमुदके और अपने घुटनोंपर डालकर उसके साथ एक-आवरणकी सहयोगिता स्थापन की। शरीर और मन पुलकित हो उठा। चौंककर कुमुदिनी कम्वलको हटाना ही चाहती थी, इतनेमें अपनेको उसने सम्हाल लिया, गद्दीके एक किनारेसे सकुचाकर बैठी रही।

कुछ समय इसी तरह बीता, इतनेमें सहसा कुमुदके हाथोंपर मधुसूदनकी दृष्टि पडी।

"देखूँ, देखूँ"—कहते हुए उसका बायाँ हाथ अपनी ओर खींच लिया, बोला—"तुम्हारी उँगलीमे यह अँगूठी काहेकी है? यह तो नीलम मालूम पडता है।"

कुमुदिनी चुप बनी रही।

"देखो, नीलम मुझे नहीं छाजता, इसे तुम्हे छोडना पडेगा।"

किसी समय मधुसूदनने नीलम खरीदा था, उसी साल उसका एक पटसनका भरा हुआ बोट हवडा-पुलसे टकराकर डूब गया था। तभीसे नीलम उसकी आंखो लडता है।

कुमुदिनीने धीरेसे हाथ छुडाना चाहा, पर मधुसूदनने नहीं छोडा, बोला—"इसे मैं निकाले लेता हू।"

कुमुद चौक पड़ी, बोली—"नहीं, रहने दो।"

एक बार शतरंजके खेलमे उसकी जीत हुई थी, तब भइयाने उसे अपने हाथकी अगूठी उतारकर इनाममे दी थी।

मधुसूदन मन-ही-मन हँसा, अँगूठीके ऊपर बडा मोह मालूम होता है, यहाँपर अपने साथ कुमुदके साधर्म्यका परिचय पाकर मानो कुछ आराम मालूम हुआ। समझ लिया, वक्त-बेवक्त माँग, कण्ठहार, कडे और बाजुओंके जरिये अभिमानिनीके साथ बातचीत करनेका मार्ग निकल आया करेगा,—इस मार्गमे मधुसूदनका प्रभाव बिना माने दूसरी गति ही नहीं, फिर उनकी उमर चाहे भले ही कुछ

अपनी उँगलीसे एक बहुमूल्य हीरेकी अँगू[illegible]

मधुसूदनने हँसते हँसते कहा—"डरो मत, इसके बदले तुम्हें पहनाये देता हू।"

कुमुदिनीसे अब रहा न गया—जरा कोशिश करके हाथ छुडा लिया। अब तो मधुसूदनका मन झुंझला उठा। कर्तृत्वमे बाधा उन्हें असह्य थी। सूखे हुए गलेसे, जरा जोर लगाकर बोले—"सुनती हो, यह ॲगूठी तुम्हें उतारनी ही पडेगी।"

कुमुदिनी सिर झुकाये चुपचाप बैठी रही, चेहरेपर सुर्खी आ गई।

मधुसूदनने फिर कहा—"सुनती हो ? मै कहता हू, उसे उतार देना ठीक है। दो, मुझे दो।" कहते हुए उसका हाथ अपनी ओर खींचना चाहा।

कुमुदने हाथ हटाकर कहा—"मै उतारे लेती हू।"

ॲगूठी उतार ली।

"दो, उसे मुझे दो।"

कुमुदिनीने कहा—"उसे मैं ही रख दूॅगी।"

मधुसूदनने झुंझलाकर कुछ कठोर स्वरमे कहा—"रखनेसे फायदा ? सोचती हो, यह बडी कीमती चीज़ है। इसे तुम किसी भी तरह नहीं पहन सकतीं, कहे देता हू।"

कुमुदिनीने कहा—"मै नहीं पहनूॅगी" कहते हुए उसने अपने मोतीके बने हुए बटुएमे ॲगूठी रख ली।

"क्यो, इस जरासी चीजपर इतना दर्द क्यो ? तुम्हारी ज़िद्द तो कम नहीं मालूम पडती।"

मधुसूदनकी आवाज़ खरखरी है, कानोंको खटकती है, मानो मटीले कागजको कोई पक्की जमीनपर घिस रहा हो। कुमुदिनीकी सारी देहमे फुरफुरी-सी फैल गई।

"यह अगूठी तुम्हे दी किसने ?"

कुमुदिनी चुपकी बैठी रही।

"तुम्हारी माने ?"

कुमुदिनीने देखा कि जवाब दिये विना बनेगी नहीं, इसलिए अर्द्धस्फुट स्वरमे कहा—"भइयाने।"

'भइयाने। सो तो साफ जाहिर हो रहा है।' भइयाकी कैसी हालत है, मधुसूदन अच्छी तरह जानता है। उन्हीं भइयाकी यह अगूठी शनिग्रहका सेंध मारनेका औजार है,—इस घरमे उसका प्रवेश नहीं हो सकना, परन्तु इससे भी बढकर उसे यह बात खटक रही है कि अभी तक कुमुदिनीके हृदयमे उसके भइया ही सबसे बढकर हैं। यह स्वाभाविक है, इसलिए सह्य है, सो बात नहीं। पुराने जमींदारकी जमींदारी जब नया धनी महाजन नीलाममे खरीद लेता है, तो भक्त प्रजाजन पुराने अमलकी बातें याद कर-करके दीर्घ-निःश्वास छोडते रहते हैं, यह बात नये अधिकारीको बड़ी नागवार गुजरती है, मधुसूदनकी भी वही दशा है। आजसे मैं ही उसका एकमात्र सब-कुछ हू, यह बात जितनी जल्दी हो, उसे जता देनी चाहिए। उसके सिवा तेल-ताईकी जीमनवारमे वरका जो अपमान किया गया है, उसमे विप्रदासका हाथ नहीं था, इस बातपर मधुसूदन किसी तरह विश्वास ही नहीं कर सकता। यद्यपि नवगोपालने व्याहके दूसरे ही दिन उससे कह दिया था—"भाई साहब, विवाह-मण्डपमे तुम्हारी हाटगोरेकी आढ़तसे जो चाल-चलनकी आमदनी हुई थी, उन बातको इशारेमे भी भाई साहबसे न कहना,

वे इस बारेमें कुछ भी नहीं जानते, उनकी तबीयत बहुत खराब है।"

अँगूठीकी बात फिलहाल स्थगित रखी, मगर वह याद रही। इधर सुन्दर रूपके सिवा और-भी एक कारणसे सहसा कुमुदिनीकी कदर बढ गई है। नूरनगरमे रहते ही ठीक व्याहके दिन मधुसूदनको तार मिला था कि इस बार जो तीसीका काम किया गया था, उसमे करीब बीस लाखका मुनाफा हुआ है। अब सन्देह न रहा कि यह नई बहूके ही सौभाग्यसे है। स्त्रीके भाग्यसे धन आता है, इसका प्रमाण हाथों हाथ मिल गया। इसीसे कुमुदिनीके साथ गाडीमे बैठकर भीतर-ही-भीतर उसे इस बातका परम सन्तोष था कि भावी मुनाफेकी एक जीती-जागती भाग्यकी दी हुई सनद लिये घर लौट रहा हू। ऐसा न होता, तो आजकी इस ब्रुहम-गाडीकी रथयात्रामे अपघात हो सकता था।

[२१]

जबसे राजाकी उपाधि मिली है, तभीसे कलकत्तेके घोपाल-भवनके द्वारपर नया नाम खुद गया है—"मधु-प्रासाद"। उस प्रासादके लोहेके फाटकके एक किनारे आज नौबत बैठाई गई है, और बगीचेमे एक तम्बूके अन्दर बैंड बज रहा है। गेटपर

अर्धचन्द्राकारमें गैसके पाइपोंमें लिखा है—"प्रजापतये नमः"। सन्ध्या समय आलोक-शिखासे यह लेख प्रकाशमय हो जायगा। ड्योढीसे मकान तक जो लाल कंकडीली सड़क गई है, उसके दोनों तरफ देवदारुकी पत्तियों और गेंदाकी मालाओंसे खूब सजाया गया है, मकानकी पहली मंजिलकी ऊँची जमीनपर चढनेकी सीढियोंपर लाल कपडा बिछा हुआ है। आत्मीय-स्वजनोंकी भीडमें होकर वर-वधूकी बग्घी मकानके सामनेवाले बरामदेमें आकर ठहर गई। शंख, उलुध्वनि (मंगल-ध्वनि), ढोल, ताशे, घंटा, घडियाल, नौबत, बैंड सब एक साथ बज उठे,—मानो दस-पन्द्रह तरहकी आवाजकी मालगाडियाँ एक जगह जोरोंसे टकरा गई हो। एक परिपक्व वृद्धा, जो रिश्तेमें मधुसूदनकी नानी लगती हैं—माँगमें खूब मोटा सिन्दूर भरकर, चौडी लाल पाडकी साडी तथा मोटे सोनेके कडे और शंखकी चूडियाँ पहने हुए—हाथमें एक पानी-भरा चांदीका लोटा लिये बग्घीके सामने आ खडी हुईं, और बहूके पैरोंपर लोटेमें से पानी छिडककर उन्हें आँचलसे पोंछा, हाथमें 'लोआ' * पहनाया, फिर बहूके मुँहमें जरासा मधु देकर बोली—"अहा, इतने दिनों बाद निकला हमारे नील-गगनमें पूनोंका चाँद, अब खिला नील सरोवरमें सोनेका कमल।" इसके बाद दूल्हा-दुलहिन गाडीसे उतरे। युवक अभ्यागतोंकी दृष्टि ईर्ष्यान्वित हो गई। एकने कहा—"अरे, दैत्य स्वर्ग लूट लाया है स्वर्ग, अप्सरा सोनेकी जंजीरसे बँधी है।" दूसरेने कहा—"पुराने जमानेमें ऐसी लडकियोंको

* सुहाग-सूचक लोहेकी पतली चूड़ी।

सब जमीन वाहरकी तरफ है, और वह लताओंके मडपसे, विचित्र फूलोंकी क्यारियोसे, छंटे हुए हरे घासदार मैदानसे, लाल ककड और सुरखीके बने हुए रास्तेसे, पत्थरकी मूर्तियों और लोहेकी बेन्चोसे सुशोभित है।

जनानखानेमे तीसरी मञ्जिलपर कुमुदिनीका सोनेका कमरा है। महगनी काठका बडा-भारी पलग है, फ्रेमपर जालीदार मसहरी है, उसमें रेशमकी झालर है। विछौनेके पांयतेकी तरफ एक पूरे मापकी नग्न स्त्रीकी तसवीर टगी है, छातीपर दोनो हाथ दावे हुए वह लज्जाका बहाना कर रही है। सिरहानेकी तरफ मधुसूदनका अपना ऑएलपेन्टिंग है, उसमे उनके काश्मीरी दुशालेकी दस्तकारी ही सबसे ज्यादा प्रकाशमान है। एक तरफ दीवालसे सटी हुई कपडे रखनेकी दराज़-दार अलमारी है, उसपर आईना लगा हुआ है। आईनेके दोनों तरफ चीनी-मट्टीके दो शमादान हैं, सामने चीनी मिट्टीकी रकावीपर पाउडरका डिव्वा, चाँदीकी जडैमा कघी, तीन-चार तरहके एसेन्स, एसेन्स छिडकनेकी पिचकारी तथा और भी तरह-तरहकी शृंगारकी सामग्रियां रखी हैं—विलायती असिस्टेन्टकी खरीदी हुई। अनेक शाखा-युक्त गुलावी कांचकी फूलदानोंमें फूलोंका गुच्छा रखा हुआ है, और दूसरी तरफ लिखनेकी टेविल है, उसपर वहुमूल्य पत्थरका कलमदान और कटे हुए कागज रखे हुए हैं। इधर उधर मोटी गद्दीवाले सोफे और आराम-कुरसियां पडी हुई हैं, बीच-बीचमे तिपाइयां पडी हुई हैं, जिनपर चाय पी जाती है, चाहें तो ताश भी खेल सकते हैं। नई महरानीके योग्य शयन-

गृह कैसा होना चाहिए, यह बात मधुसूदनको खास तौरसे सोचनी पड़ी है। अन्त पुरका सबसे ऊपरकी मंजिलका यह घर ऐसा लगने लगा, जैसे कि मैली कँथड़ी ओढ़े हुए भिखारीके सिरपर जवाहरातसे जड़ी हुई जरीदार पगड़ी।

अन्तमे जब शोर गुल और धूमधामकी बाढ़वाला दिन खत्म हुआ, तब रातको कुमुद उस कमरेमे पहुची। उसे ले आई थी मोतीकी मा। वह उसके साथ आज रातको सोयेगी, यह तय हो चुका है। और भी लडकियोका एक झुण्ड साथ आ रहा था। उनका कौतूहल और मनोरञ्जनका नशा छूटना ही नहीं चाहता,—मोतीकी माने उन्हें विदा कर दिया है। कमरेमे आते ही उसने कुमुदके गलेमे बाँह डालकर कहा—"मै थोड़ी देरके लिए बगलके कमरेमे जाती हू ,—तुम जरा, रो लो, बहन,—आँसोंके आंसू तुम्हारी छातीमे जमे जा रहे हैं।"—कहकर वह चली गई।

कुमुद चौकीपर बैठ गई। रोयेगी पीछे, अभी उसे सख्त जरूरत है अपनेको ठीक करनेकी। भीतर-ही-भीतर जो सबसे बड़ी वेदना उसके हृदयमें चुभ रही थी, वह है अपने सामने अपना अपमान। इतने दिनोसे वह जो सकल्प करती आई है, उसका विद्रोही मन बिलकुल उससे उल्टी तरफ चला गया है। उस मनपर शासन करनेका उसे जरा भी समय नहीं मिल रहा था।—'भगवान्, बल दो, बल, मेरे जीवनको काला न कर देना। मैं तुम्हारी दासी हू, मुझे विजयी बनाओ, वह विजय तुम्हारी ही है।'

एक पूरी उमरकी सुडौल देहवाली श्यामवर्ण सुन्दरी विधवाने

घरमें घुसते ही कहा—"मोतीकी माने जरा तुम्हें छुट्टी दे दी, इसीसे चली आई हू , किसीको पास तो आने नहीं देती, घेरे रहती है तुम्हें—जैसे हम सेंध लगानेका हथियार लिए फिरती हैं, उसका बँडा काटकर तुम्हें चुरा ले जायँगी। मैं तुम्हारी जिठानी हू , श्यामासुन्दरी , तुम्हारे दूल्हा मेरे देवर लगते हैं। हमने तो सोचा था आखिर तक जमा-खर्चकी बही ही उनकी बहू होगी, पर उस बहीमें कुछ जादू है बहन, इतनी उमरमे ऐसी सुन्दरी उसी बहीके जोरसे ही मिली है। अब हज़म हो जाय तब है। बहा बहीका मन्तर नहीं चलनेका। सच कहना बहन, हमारे बूढे देवर तुम्हें पसन्द हैं तो ?"

कुमुद दंग रह गई, क्या जवाब दे, कुछ समझमे न आया। श्यामा कहने लगी—"समझ गई, पर अब क्या होता है—पसन्द हो चाहे नहीं,—सात फेरे जब लगा चुकी हो, तो इक्कीस फेरे उल्टे लगानेपर भी गाठ न खुलेगी।

कुमुदने कहा—"यह क्या कह रही हो, जीजी।"

श्यामाने जवाब दिया—"क्यो, खुलासा कहनेसे ही क्या दोष हो जाता है, बहन ? चेहरा देखनेसे क्या मालूम नहीं होता ?—पर तुम्हें दोष न दूंगी।—वे हमारे घरके हैं, इससे क्या आँखें थोडे ही फूट गई हैं ?—बडे कठोरसे पाला पडा है, बहू समझ-बूझकर चलना।"

इतनेमें मोतीकी माको अन्दर आते देख बोल उठी—"डरो मत, डरो मत बकुल-फूल, जाती हू मैं। मैंने सोचा कि तुम नहीं हो, इसी मौकेपर जरा अपनी नई ब्याहलीको देख आऊँ।—है तो बात ठीक,

कंजूसका धन है, होशियारीसे रखना पड़ेगा।—सखीसे मैं कह रही थी कि हमारे देवरको तो अधकपालीका दर्द समझो, बहूको लिया है इनके बाईं तरफके पानेके-कपालने, अब दाहनी ओरके रखनेका कपाल अगर गरज सके, तब कहीं पूर पड़ेगी।"

इतना कहकर वह जल्दीसे घरसे निकल गई, और तुरन्त ही फिर वापस आकर कुमुदके सामने पानकी डिबिया खोलकर बोली—"लो, एक खा लो। तमाखू खानेकी आदत है?"

कुमुदने कहा—"नहीं।"

श्यामासुन्दरीने एक चुटकी तमाखू उठाकर अपने मुहमें डाली, और धीमी चालसे बाहर चली गई।

"अभी आई मैं, जरा बड़ी-मौसीको खिलाकर बिदाकर आऊँ, देर न करूँगी।"—कहकर मोतीकी मा चली गई।

श्यामासुन्दरीने कुमुदके मनमें एक बड़ी भारी स्वादहीन बात जगा दी। आज कुमुदको सबसे ज्यादा जरूरत थी मायाके आवरणकी, उसीको वह अपने मनमें गढ़ने बैठी थी, और जो सृष्टिकर्त्ता द्युलोक-भूलोकमें अनेक रंग लिये रूपकी लीला करते हैं, उन्हें भी सहायक बनानेकी कोशिश कर रही थी, इतनेमें श्यामाने आकर उसके स्वप्नके बुने जालमें आघात किया। कुमुद आँखें मींचकर खूब जोरसे अपनेको कहने लगी—"पतिकी उमर ज़्यादा है, इसलिए उन्हें प्रेम नहीं करती, यह बात कभी सच्ची नहीं हो सकती—लज्जा, लज्जा आती है। यह तो ओछी स्त्रियोंका काम है।" शिवके साथ-सतीके सम्बन्धकी बात क्या उसे याद नहीं? शिव-निन्दकोंने उनकी उमरके

बारेमें ताना मारा था, पर उस बातको सतीने सुनी-अनसुनी कर दी थी।

पतिकी उमर या रूपके बारेमें अब तक कुमुदने कोई चिन्ता ही नहीं की। साधारणत जिस प्रेमको लेकर स्त्री-पुरुषका विवाह सत्य होता है, जिसमें रूप-गुण देह-मन सब कुछ मिला हुआ है, उसकी कोई आवश्यकता है, यह बात कुमुदने कभी सोची भी नहीं है। पसन्द करके वर लेनेकी बातको ही वह रग पोतकर दान देना चाहती है।

इसी समय फूलदार कोट और जरी पाडकी धोती पहने एक छै-सात वर्षका लडका घरमे आतेके साथ ही कुमुदकी देहसे सटकर खडा हो गया। बडी-बडी मुग्ध करनेवाली आँखोसे कुमुदके मुहकी तरफ देखकर उसने डरते-डरते धीरेसे मीठे स्वरमे कहा—"ताईजी।"

कुमुदने उसे अपनी ओर गोदमे खींचकर कहा—"क्यो बेटा, तुम्हारा नाम क्या है ?"

बालकने बडी शानके साथ, नामके आगे पीछे पुछल्ला लगाकर, कहा—"श्री मोतीलाल घोषाल।'

सब कोई उसे 'हाबलू' कहकर पुकारा करते हैं, इसीलिए उपयुक्त देश-काल-पात्रमे अपने सम्मानकी रक्षाके लिए पितृ-दत्त नामको उसे इतना सुसम्पूर्ण करके कहना पडता है। उस समय कुमुदका अन्तस्तल पके फोडेकी तरह टीस मार रहा था, इस बच्चेको छातीसे लगाकर मानो वह जी गई। एकाएक ऐसा मालूम हुआ, मानो इतने दिनोंसे मन्दिरमे वह जिन गोपालजीको फूल चढाती आई है, इस बालकके रूपमें वे ही उसकी गोदमे आ बैठ हैं। ठीक जिस समय वह उन्हे बुला रही थी,

उस दुःखके समयमे ही आकर उन्होने कहा—"यह देख, मै हू तो सही—तेरी सान्त्वना।" मोतीके गोल-गोल गाल मसककर कुमुदने कहा—"गोपाल, फूल लोगे ?"

कुमुदके मुहसे गोपालके सिवा और कोई नाम न निकला। सहसा अपने नामान्तरसे हाबलूको कुछ आश्चर्य मालूम हुआ, परन्तु ऐसा स्वर उसके कानोमे पहुचा है कि उसके मनमे कोई आपत्ति ही नहीं आ सकती।

इतनेमे बगलके कमरेसे लडकेकी आवाज सुनकर मोतीकी मा दौडी आई, बोली—"क्यों रे लगूर, तू यहा भी आ गया।" अब तो 'श्री मोतीलाल घोपाल' का सब मान जाता रहा। दाहिने हाथसे ताईका अचल दाबे, शिकायत-भरी आँखें उठाकर वह चुपचाप अपनी माके मुहकी ओर ताकता रहा। कुमुदने हाबलूको अपने बायें हाथसे घेरकर कहा—"नहीं-नहीं, रहने दो।"

"ना बहन, बहुत रात हो गई है। अब जाकर सोने दो—इस घरमे उसे बडी आसानीसे पाओगी, उस-सा सस्ता लडका और कोई नहीं है।"—कहकर मोतीकी मा अनिच्छुक लडकेको सुलानेके लिए ले गई। बस, इतने-ही-भरसे कुमुदके मनका भार हलका हो गया। उसे मालूम हुआ, मानो प्रार्थनाका जवाब वह पा गई, जीवनकी समस्या अब सरल होकर दिखाई देगी—इसी छोटेसे बच्चेकी तरह।

[२३]

बहुत रात बीते मोतीकी माकी नींद खुल गई, देखा तो कुमुद अपने बिस्तरपर उठकर बैठ गई है, दोनों हाथ जोडकर गोदमे रख लिये हैं, ध्यानाविष्ट नेत्र मानो सामने किसीको देख रहे हैं। ज्यों-ज्यो उसे मधुसूदनको अपने हृदयमे विराजमान करनेमे बाधा आती जाती है, त्यों-त्यों वह अपने देवताके द्वारा पतिको घेरे रहना चाहती है। स्वामीको उपलक्ष्य करके अपनेको वह दान करना चाहती है देवताको। देवताने उसकी पूजा बडी कठिन कर दी है, यह प्रतिमा स्वच्छ नहीं है, किन्तु यही तो भक्तिकी परीक्षा है। शालग्राम-शिला तो कुछ दिखाती नहीं, भक्ति जो उस रूप-हीनताके अन्दर वैकुण्ठनाथका रूप प्रकट करती है वह सिर्फ अपने बलसे। जहाँ दिखाई नहीं पडती, वहीं देखूँगी—यही है मेरी साधना। जहाँ भगवान् छुपके रहते हैं, वहीं जाकर उनके चरणोंमे अपनेको दान करूँगी, वे मुझे धोखा नहीं दे सकते।

"मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरा न कोई"—

भइयासे सीखे हुए मीरा बाईके इस गीतको वह बार-बार मन-ही-मन गाने लगी।

मधुसूदनका अत्यन्त कठोर परिचय जो उसने पाया है, उसे वह 'कुछ नहीं' कहकर—पानीका बुद्‌बुदा जानकर—उडा देना चाहती है,—चिरकालके जो सत्य हैं, सब-कुछ आवृत किये

हुए वे ही तो हैं—"दूसरा न कोई, दूसरा न कोई।" इसके सिवा और एक व्यथा है, उसे भी वह माया समझना चाहती है—वह है उसके जीवनकी शून्यता। आज तक जिनको लेकर उसका सब-कुछ बनकर तैयार हुआ है, जिनके छोड देनेसे उसके जीवनका कोई अर्थ ही नहीं रह जाता, उनके साथ विच्छेद,—वह अपनेको समझाती है, यह शून्य भी पूर्ण है,—

"तात छाँड़ी, मात छाँड़ो, छाँडी सगा सोई,
मीरा प्रभु लगन लागी, होनी होउ सो होई।"

छोडी तो आपने है—माने छोडी है, किन्तु उन्हींके भीतर जो चिरकालके हैं, उन्होने तो नहीं छोडी। प्रभु, और भी जो कुछ छुडाना चाहे, छुडा ले, तुमने शून्यको भर देनेके लिए ही छुडाया है। मेरी लगन तो तुम्हींमे है, जो होगा सो होता रहेगा।—मनका गान कब उसके कण्ठमे खिल उठा, उसे पता भी नहीं—दोनो आँखोंसे आँसू टपकने लगे।

मोतीकी माने चूँ तक न की, चुपचाप देखती रही, और उसके बाद कुमुद जब बहुत देर तक नमस्कार करके एक गहरी उसास लेकर सो गई, तब मोतीकी माके मनमे एक चिन्ता दिखाई दी, जिसे पहले कभी उसने सोचा ही न था।

वह सोचने लगी—हमारा जब व्याह हुआ था, तब तो मैं ज़रा-सी बच्ची थी,—'मन' कहानेवाली कोई बला थी ही नहीं। छोटा बच्चा जैसे फलको चटसे बिना विचारे मुँहमें ठूँस लेता है, पतिकी गिरस्तीने उसी तरह बिना विचारे हमें लील लिया है, कहीं

भी जरा अटका नहीं। साधना करके हम नहीं ली गई थीं, हमारे लिए तो बस मुहूर्त शोधना आवश्यक था। जिस दिन कह दिया 'आज सुहाग-रात है', उसी दिन हुई सुहाग-रात, क्योंकि सुहाग-रातका कोई अर्थ न था, वह था एक खेल। कल ही तो है सुहाग-रात,—किन्तु इस लडकीके लिए यह कितनी बडी विडम्बना है। जेठजी अभी तक पराये हैं, अपने होनेमे बहुत समय लगता है। इस तक पहुँचेंगे कैसे? यह लडकी उस अपमानको सहेगी कैसे? धन पानेमे जेठजीको कितना समय लग गया, और मन पानेमे दो दिनका सबर न होगा? उस लक्ष्मीके द्वारपर दौड-धूप करते-करते मर-मिटे हैं, इस लक्ष्मीके द्वारपर एक बार हाथ भी न पसारेंगे?

वैसे इतनी बात मोतीकी माके मनमे न आती। आई है उसका कारण यह है कि कुमुदिनीको देखते ही उसने उसे सारे अन्त करणसे अपना लिया है—वह उसे हृदयसे चाहती है। इस प्रेमकी पूर्व-भूमिका तभीसे हो चुकी थी, जब स्टेशनपर उसने विप्रदासको देखा था। मानो महाभारतसे भीष्म उतर आये हों। शूर-वीरके समान तेजस्वी मूर्त्ति थी, तापसके समान शान्त मुखश्री थी, उसके साथ थी एक विषाद-भरी नम्रता। मोतीकी माके मनमे आई थी कि अगर कोई कुछ न कहे, तो एक बार जाकर उनके पैर छू आवें। उस रूपको वह आज भूल नहीं सकी है। उसके बाद जब उसने कुमुदको देखा, मन-ही-मन बोली—है तो भाईकी ही बहन।

कुमुदकी तीसरी बहन पतिसे लड-झगडकर व्याहके दूसरे दिन किसी तरह कलकत्ते आई भी, तो, नवगोपालने उससे कह दिया—"उनके यहा तुम जाओगी तो हमारी इज्जतमे बट्टा लगेगा।" व्याहकी रातवाली बातको वे अब तक नहीं भूल सके हैं। इसीसे, केवल निमन्त्रणकी रक्षाके लिए कुछ इधर-उधरकी छोटी-छोटी लडकियोको एक बुढिया नौकरानीके साथ भेज दिया। कुमुदने समझा कि सन्धि अभी तक हुई नहीं है, शायद कभी होगी भी नहीं।

कुमुदिनी नवीन वस्त्राभूषणोंसे लाद दी गई। जिनके साथ हँसी-दिल्लगीका रिश्ता था, उनकी हसी-ठठोली भी समाप्त हो चुकी। अब मेहमानोंको खिलाने-पिलानेकी बारी है। मधुसूदनने पहले ही से कहला रखा था कि ज़्यादा रात न होने पावे, कल हमें बहुत काम करना है। नौ बजते ही आज्ञानुसार नीचेके आँगनसे ज़ोरका घटा बज उठा। बस, अब एक मिनट भी नहीं। समय अतिक्रम करनेकी सामर्थ्य किसीमे न थी। सभा भग हो गई। आकाशसे बाजकी छाया देखकर कबूतरकी जैसी दशा होती है, कुमुदका हृदय वैसे ही कांपने लगा। उसके ठढे हाथोमे पसीना आ रहा है, मुह उसका फीका पड़ गया है। कमरेसे बाहर निकलते ही मोतीकी माका हाथ थामकर बोली—"मुझे थोडी देरके लिए ज़रा कहीं ओटमें ले चलो। दस मिनटके लिए मुझे अकेली रहने दो।" मोतीकी मा उसे झटपट अपने सोनेके कमरेमे ले गई और बाहरसे दरवाज़ा बन्द कर दिया। बाहर खडी-खडी वह आचलसे अपनी आँखें पोंछती हुई बोली—"तेरी ऐसी तकदीर।"

दस मिनट बीते, पन्द्रह मिनट बीते। आदमी आया,-
सोनेके कमरेमे पहुच गया, दुलहिन कहाँ है ?' मोतीकी
कहा—"इतनी जल्दबाज़ी क्यों करते हो ? बहू गहने प
उतारे ?" मोतीकी मा शक्ति-भर उसे समय देना चाहर
अन्तमे जब देखा कि अब नहीं बनेगी, तब उसने दरवाज़ा
दिया, देखा, तो बहू ज़मीनपर बेहोश पडी है।

शोर-गुल मच गया। उठाकर सहारेसे बिस्तरपर लिटाई गई
पानीके छींटे मारने लगी, तो कोई पखा करने। कुछ देर बाद
होश आया, तो कुमुद समझ न सकी कि वह कहापर है,—
उठी—"भइया!" मोतीकी माने जल्दीसे उसके मुँहके पास
मुँह ले जाकर कहा—"डरो मत जीजी, मैं हू तो सही।"—
उसका मुँह गोदमें उठाकर छातीसे चिपका लिया। सबसे क
"तुम लोग भीड न करो, म अभी इन्हे लेकर आती हू।" कु
कानमें कहने लगी—"डरो मत बहन, डरो मत।"—कुमुद धीरेसे
मन-ही-मन भगवानका नाम लेकर नमस्कार किया। पास ही
बिछौनेपर हाबलू गहरी नींदमे पडा सो रहा था—उसके पास
कुमुदने उसका माथा चूमा। मोतीकी माने उसे मधुसूदनके
तक पहुचाकर पूछा—"अब भी डर लगता है, जीजी ?"

कुमुदने हाथकी मुट्ठियाँ जरा कडी करके हँसते हुए कहा—
तो, मुझे नहीं लगता।" मन-ही-मन बोली—"यही मेरा अभि
है, बाहर अन्धकार है, भीतर प्रकाश।"

"मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरा न कोई"—

कुमुदकी तीसरी बहन पतिसे लड-झगडकर ब्याहके दूसरे दिन किसी तरह कलकत्ते आई भी, तो, नवगोपालने उससे कह दिया—"उनके यहा तुम जाओगी तो हमारी इज्जतमे बट्टा लगेगा।" ब्याहकी रातवाली बातको वे अब तक नहीं भूल सके हैं। इसीसे, केवल निमन्त्रणकी रक्षाके लिए कुछ इधर-उधरकी छोटी-छोटी लडकियोंको एक बुढिया नौकरानीके साथ भेज दिया। कुमुदने समझा कि सन्धि अभी तक हुई नहीं है, शायद कभी होगी भी नहीं।

कुमुदिनी नवीन वस्त्राभूषणोसे लाद दी गई। जिनके साथ हँसी-दिल्लगी का रिश्ता था, उनकी हँसी-ठठोली भी समाप्त हो चुकी। अब मेहमानोंको खिलाने-पिलानेकी बारी है। मधुसूदनने पहले ही से कहला रखा था कि ज़्यादा रात न होने पावे, कल हमे बहुत काम करना है। नौ बजते ही आज्ञानुसार नीचेके आँगनसे जोरका घंटा बज उठा। बस, अब एक मिनट भी नहीं। समय अतिक्रम करनेकी सामर्थ्य किसीमे न थी। सभा भंग हो गई। आकाशसे बाज़की छाया देखकर कबूतरकी जैसी दशा होती है, कुमुदका हृदय वैसे ही कांपने लगा। उसके ठढे हाथोमे पसीना आ रहा है, मुह उसका फीका पड गया है। कमरेसे बाहर निकलते ही मोतीकी माका हाथ थामकर बोली—"मुझे थोडी देरके लिए ज़रा कहीं ओटमे ले चलो। दस मिनटके लिए मुझे अकेली रहने दो।" मोतीकी मा उसे झटपट अपने सोनेके कमरेमे ले गई और बाहरसे दरवाजा बन्द कर दिया। बाहर खडी-खडी वह आचलसे अपनी आँखें पोंछती हुई बोली—"तेरी ऐसी तकदीर।"

दस मिनट बीते, पन्द्रह मिनट बीते। आदमी आया,—'दूल्हा सोनेके कमरेमें पहुच गया, दुलहिन कहाँ है?' मोतीकी माने कहा—"इतनी जल्दबाज़ी क्यों करते हो? बहू गहने कपडे न उतारे?" मोतीकी मा शक्ति-भर उसे समय देना चाहती है। अन्तमें जब देखा कि अब नहीं बनेगी, तब उसने दरवाजा खोल दिया, देखा, तो बहू जमीनपर बेहोश पडी है।

शोर-गुल मच गया। उठाकर सहारेसे बिस्तरपर लिटाई गई, कोई पानीके छींटे मारने लगी, तो कोई पंखा करने। कुछ देर बाद जब होश आया, तो कुमुद समझ न सकी कि वह कहापर है,—पुकार उठी—"भइया।" मोतीकी माने जल्दीसे उसके मुँहके पास अपना मुँह ले जाकर कहा—"डरो मत जीजी, मैं हू तो सही।"—कहकर उसका मुँह गोदमें उठाकर छातीसे चिपका लिया। सबसे कहा—"तुम लोग भीड़ न करो, मैं अभी इन्हे लेकर आती हू।" कुमुदके कानमें कहने लगी—"डरो मत बहन, डरो मत।"—कुमुद धीरेसे उठी। मन-ही-मन भगवानका नाम लेकर नमस्कार किया। पास ही दूसरे बिछौनेपर हाबलू गहरी नींदमें पडा सो रहा था—उसके पास जाकर कुमुदने उसका माथा चूमा। मोतीकी माने उसे मधुसूदनके कमरे तक पहुचाकर पूछा—"अब भी डर लगता है, जीजी?"

कुमुदने हाथकी मुट्ठियाँ जरा कडी करके हँसते हुए कहा—"नहीं तो, मुझे नहीं लगता।" मन-ही-मन बोली—"यही मेरा अभिसार है, बाहर अन्धकार है, भीतर प्रकाश।"

"मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरा न कोई"—

उठी है—इसीसे उसका यह तीव्र निष्फल क्रोध है। बोल उठा—"मैं काम-काजी आदमी हू, फुरसत कम है, हिस्टीरिया-वाली औरतकी खिदमतगारीके लिए मेरे पास वक्त नहीं, साफ कहे देता हू।"

कुमुदने धीरेसे कहा—"तुम मुझे अपमानित करना चाहते हो? मुझे हार माननी होगी। तुम्हारे अपमानको मैं मनमे न लाऊँगी।"

कुमुद किससे ये सब बातें कह रही है? उसके विस्फारित नेत्रोंके सामने कौन खडा हुआ है? मधुसूदन दंग रह गया, सोचने लगा—यह औरत लडती क्यों नहीं? इसका इरादा क्या है?

मधुसूदनने वक्रोक्तिसे कहा—"तुम अपने भइयाकी चेली हो, पर याद रखना, मैं तुम्हारे उस भइयाका महाजन हू, उसे इस हाट खरीद कर उस हाट बेच सकता हू।"

कुमुदके मनपर इस बातको अंकित कर देनेके लिए कि वह उसके भइयासे श्रेष्ठ है, मूढको और कोई शब्द ढूढे नहीं मिले।

कुमुदने कहा—"देखो, निठुर बनो तो बनो, पर छोटे मत बनो।" कहकर सोफेपर बैठ गई।

कर्कश स्वरमे मधुसूदन बोल उठा—"क्या कहा। मैं छोटा हू। और तुम्हारा भइया मुझसे बडा है?"

कुमुदने कहा—"तुम्हें बडा जानकर ही तुम्हारे घर आई हू।"

मधुसूदनने व्यग्यसे कहा—"बडा जानकर आई हो, या रुपयेके लोभसे?"

तब कुमुदिनी सोफेपर से उठकर बाहर निकल आई, और खुली छतपर जमीनपर जाकर बैठ गई।

कलकत्तेमें, जाड़ोंकी कजूस रात है—धुआँ और कुहरेसे धुँधली हो गई है। आकाश अप्रसन्न है, तारोंका प्रकाश ऐसा लगता है जैसे बैठ हुए गलेका स्वर। कुमुदका मन तब अनुभूति-शून्य हो रहा था, कोई चिन्ता नहीं, कोई वेदना नहीं। एक घने कुहरेमे मानो वह लुप्त हो गई हो।

मधुसूदनने इस बातकी कल्पना भी न की थी कि कुमुदिनी इस तरह चुपचाप कमरेमे से निकलकर बाहर चली जायगी। अपनी इस हारके लिए सबसे ज्यादा गुस्सा आया कुमुदके भइयापर। चाकीपर बैठकर शून्य आकाशकी ओर उसने एक घूँसा उठाया। कुछ देर बैठा रहा, फिर धैर्य न रख सका। भड़भड़ाकर उठ खड़ा हुआ और छतपर निकलकर उसके पीछे जाकर बोला—"बड़ी बहू।"

कुमुद चौंक पड़ी और घूमकर खड़ी हो गई।

"जाड़ेमें बाहर यहाँ ओसमें खड़ी-खड़ी क्या कर रही हो? चलो भीतर।"

कुमुद बिना किसी सकोचके मधुसूदनके चेहरेकी ओर ताकती रही। मधुसूदनमे जो कुछ प्रभुत्वका जोर था, वह उड गया। कुमुदका बायाँ हाथ पकडकर धीरेसे बोला—"आओ, भीतर चलो।'

दायें हाथमे उसके भइयाका आशीर्वादका टेलीग्राम था, उसे उसने छातीसे लगा लिया। पतिके हाथमेसे अपना हाथ खींचा नहीं, चुपचाप धीरे-धीरे सोनेके कमरेमें चली गई।

"उनको अभी तुमने पहचाना नहीं है। केवल दूसरेसे ही गुलामी कराते हों, सो नहीं, वे खुद अपनी गुलामी आप करते हैं। जिस दिन वे आफिस नहीं जा पाते, उनके अपने हाथ-खर्चसे उस दिनके रुपये कट जाते हैं। एक बार बीमार पड़ गये थे, तो एक महीनेका हाथ-खर्च बन्द रहा था। उसके बाद दो-तीन महीनोंमें खाने-पीने तकका खर्च घटाकर नुकसान बराबर कर लिया। इतने दिनोंसे मैं घर-गिरस्तीका काम चला रही हूं, इसके लिए मेरा भी माहवारी बंधा हुआ है। आत्मीय-स्वजन वे किसीको नहीं मानते। इस घरमें मालिकसे लेकर नौकर-नौकरानी तक सभी गुलाम हैं।"

कुमुदने जरा चुप रहकर कहा—"मैं वही गुलामी ही करूंगी। मैं अपने खाने-पहरनेके खर्चके अनुसार रोजका रोज अपना फर्ज अदा करती रहूंगी। इस घरमें मैं बिना तनखाकी लौंडी-बाँदी होकर न रहूंगी। चलो, मुझे कामपर भरती कर लो। घर-गिरस्तीका भार तो तुम्हींपर है न,—मुझे तुम अपनी अधीनतामें काम करा लिया करो, कोई मुझे 'रानी' कहकर मेरी हँसी न उड़ावे, बस।"

मोतीकी माने हसते हुए कुमुदकी ठोड़ी पकड़कर कहा—"तो फिर तुम्हें मेरी बात माननी पड़ेगी। मैं हुक्म देती हूं, चलो अब खाने चलो।"

घरसे निकलते-निकलते कुमुदने कहा—"देखो बहन, मैं अपनेको देनेके लिए ही तैयार होकर आई थी, परन्तु उन्होंने किसी तरह देने ही नहीं दिया। अब दासीको लेकर ही रहे। मुझे नहीं पायेंगे।"

मोतीकी माने कहा—"लकडहारा पेडको काटना ही जानता है, उसे पेड नहीं मिलता—मिलती है लकडी। माली वृक्षकी रक्षा करना जानता है, उसे मिलते हैं फूल, मिलते हैं फल। तुम लकडहारेके पाले पडी हो, वे तो रोजगारी हैं। उनके मनमे दर्द नहीं है कहीं भी।"

किसी समय अपने सोनेके कमरेमे लौटकर कुमुदने देखा कि उसकी तिपाईपर एक शीशी 'लौजेञ्जस' की रखी है। हाबलू अपने त्यागके अर्घ्यको चुपकेसे चढाकर स्वय कहीं दुबक गया है। यहा पत्थरकी सॅधमेंसे भी फूल खिलते है। बालककी इस लौजेञ्जसकी भाषाने एक साथ उसे रुलाया और हॅसाया। बच्चेको ढूँढनेके लिए बाहर आई, तो देखा कि वह दरवाजेकी ओटमे चुपचाप खडा है। माने उसे उस कमरेमे जानेकी मनाई कर दी थी। उसे डर था कि कहीं किसी कारणसे मालिक साहब नाराज न हो जायॅ। बात यह थी कि मधुसूदनका खास अपना कोई काम हो तो दूसरी बात है, नहीं तो अन्य बातोंमे उनसे बिलकुल दूर रहना ही निरापद है, यह बात घरके सब-कोई जानते हैं।

कुमुद हाबलूको पकडकर कमरेमे ले आई और उसे अपनी गोदमे बिठा लिया। कमरेकी सजावटके अन्दर खिलौना-जातीय जितनी भी चीजें थीं, उन्हें दोनों जने मिलकर हिलाने डुलाने लगे। कुमुद समझ गई कि यह कागज़ दबानेका काँच (पेपर-वेट) हाबलूको बहुत पसन्द है—काँचके भीतरसे भीन फल किस तरह दिखाई—

दे रहा है, यह बात उसकी समझमे नहीं आ रही—इससे वह ठग रह गया है।

कुमुदने कहा—"इसे लोगे, गुपाल ?"

इतनी बडी अचिन्तनीय बात उसने अपनी उमरमे कभी नहीं सुनी। ऐसी चीजकी भी क्या कभी वह आशा कर सकता है ? आश्चर्यसे सकोचसे वह कुमुदके मुहकी ओर चुपचाप देखता रहा।

कुमुदने कहा—"इसे तुम ले जाना, भला।"

हावलू मारे खुशीके फूला न समाया,—उसे हाथमे लेकर चटसे कूदता हुआ भाग गया।

उस दिन शामको हावलूकी माने आकर कहा—"तुमने यह किया क्या, बहन ? हावलूके हाथमे कॉचका 'कागज-दाबना' (पेपर-वेट) देखकर जेठजीने तो जौहर मचा दिया है। छिडा तो खैर लिया ही, फिर ऊपरसे चोर कहकर पीट डाला बेचारेको। लडका भी ऐसा है कि तुम्हारा नाम तक नहीं लिया। सुन लेना, पीछे कभी यह भी बात उठेगी कि हावलूको मैं ही चीज-वस्त चोरी करना सिखाती हू।"

कुमुद काठकी मूर्तिकी तरह कठिन होकर बैठ रही।

इतनेमें बाहरसे जूतेकी मच-मच आहट सुनाई दी—मधुसूदन आ रहा है। मोतीकी मा झटपट वहासे भागकर चली गई। मधुसूदन कॉचका 'कागज-दाबना' हाथमे लिये कमरेमे आया और धीरेसे उसे जहा-का-तहा सजाकर रख दिया। उसके बाद निश्चित-विश्वासके साथ शान्त-गम्भीर स्वरमे बोला—"हावलू तुम्हारे घरसे यह चुरा ले गया था। चीज-वस्त जरा सावधानीसे रखना सीखो।"

कुमुदने तीखे स्वरमें कहा—"उसने चुराया नहीं है।"

"अच्छा, न सही, उठा ले गया था।"

"नहीं, मैंने ही उसे दिया है।"

"इसी तरह तुम उसका सत्यानास करने बैठी हो, क्यों? एक बात याद रखना, बिना मेरे हुक्मके कोई चीज़ किसीको न देने पाओगी। मैं बेसिलसिलेकी कोई चीज़ पसन्द नहीं करता।"

कुमुद खड़ी हो गई, बोली—"तुमने नहीं ली मेरी नीलमकी अंगूठी?"

मधुसूदनने कहा—"हाँ, ली है।'

"उससे भी तुम्हारे काचके ढेलेका दाम नहीं चुका?"

"मैंने तो कह दिया था, उसे तुम नहीं रख सकतीं।"

"तुम्हारी चीज़ तुम रख सकोगे, और मेरी चीज मैं नहीं रख सकूँगी?"

"इस घरमें तुम्हारी अलग समझी जानेवाली कोई चीज नहीं है।"

"कोई चीज़ नहीं? तो यह रहा तुम्हारा घर, सम्हालो।"

कुमुदके जातेके साथ ही श्यामाने कमरेमें आकर पूछा—"बहू कहाँ गई?"

"क्यों?"

"सवेरेसे उसका कलेवा लिये बैठी हूँ, इस घरमें आकर बहू क्या खाना भी बन्द कर देगी?"

"सो हुआ क्या? नूरनगरकी राजकन्याने न खाया, तो न सही? तुम लोग उनकी बाँदी हो क्या?"

"अरे चलो रहने दो, जरासी लड़कीपर कहीं इतना गुस्सा नहीं किया जाता। वह इस तरह बिना खाये-पीये दिन काटेगी, यह हम लोगोंसे देखा नहीं जाता। उस दिन गश क्या यों ही आ गया था ?"

मधुसूदन गरज उठा—"कुछ नहीं करना होगा, जाओ, चली जाओ। भूख लगनेपर आप ही खायगी।"

श्यामा मानो बहुत ही उदास होकर चली गई।

मधुसूदनके माथेमें खून चढ़ने लगा। जल्दीसे उसने नहानेके कमरेमें जाकर पानीकी झँझरी खोलकर उसके नीचे अपना सिर लगा दिया।

[२७]

शाम हो आई, उस दिन कुमुद कहीं ढूँढे नहीं मिली। अन्तमें पता चला कि भंडार-घरके पास एक छोटीसी कोनेकी कोठरीमें—जहा चिराग, दीवट, तेलके लैम्प वगैरह इकट्ठे किये जाते हैं—जमीनपर चटाई बिछाकर बैठी हुई है।

मोतीकी माने आकर पूछा—"यह तुमने क्या किया, जीजी ?"

कुमुदने कहा—"इस घरमें मैं बत्ती साफ किया करूँगी, बस, यहीं मेरा स्थान है।"

मोतीकी माने कहा—"काम तो तुमने अच्छा ही लिया है,

बहन, इस घरमे तुम उजाला करनेको तो आई ही हो, पर इसके लिए तुम्हें बत्तियोंके निरीक्षण करनेकी जरूरत नहीं। चलो अब, उठो।"

कुमुद किसी भी तरह टस-से-मस न हुई।

मोतीकी माने कहा—"तो मैं भी तुम्हारे पास सोती हू।"

कुमुदने दृढताके स्वरमे कहा—"नहीं।"

मोतीकी माने देखा कि इस भलीमानस लडकीके अन्दर हुक्म चलानेका ज़ोर है। उसे चला जाना पडा।

मधुसूदनने रातको आकर सोते समय कुमुदकी सुध ली। जब सुना कि वह बत्ती-घरमे है, तो पहले सोचा—'अच्छी बात है, रहने दो उसी घरमे, देखें कितने दिन रहती है, मनानेसे ज़िद बढ जायगी।'

यह सोचकर बत्ती बुझा दी और सोने चला गया, परन्तु किसी तरह नींद ही नहीं आती। प्रत्येक शब्दसे मालूम होता कि शायद आ रही है। एक बार जान पडा, मानो दरवाजेके बाहर खडी है। बिछौनेसे उठकर बाहर जाकर देखा, तो कोई कहीं नहीं। ज्यों-ज्यो रात बीतने लगी, मन-ही-मन छटपटाने लगा। कुमुदकी अवज्ञा करना चाहता है, पर किसी भी तरह उतनी शक्ति उसे नहीं मिल रही है। किन्तु फिर भी, खुद आगे बढ़कर उसके सामने हार मानना, यह उनकी 'पालिसी'के विरुद्ध है। ठंडे पानीसे मुह धोकर फिर सो रहे, पर नींद नहीं आई। इधरसे उधर करवट बदलते-बदलते आखिर उठ ही बैठा—किसी भी तरह कौतूहलको सम्हाल न सका। हाथमे एक लालटेन लेकर सोते हुए

कमरोंको चुपकेसे पार करता हुआ अन्त पुरके उसी बत्ती-घरके सामने पहुंचा, और दरवाजेके पास कान लगाकर खड़ा हो गया, परन्तु भीतरसे कोई आवाज न सुन पड़ी, बिलकुल सन्नाटा था। सावधानीसे दरवाजा खोलकर देखा, तो कुमुद जमीनपर एक चटाई बिछाये सो रही है, उस चटाईके एक पल्लेको जरासा लपेटकर उसका तकिया बना लिया है। जैसे मधुसूदनकी आंखोंमे नींद नहीं, उसी तरह कुमुदकी आंखोंमे भी नींद न होनी चाहिए थी, परन्तु देखा कि वह तो आरामसे सो रही है, यहां तक कि उसके मुहपर जब लालटेनका प्रकाश डाला, तब भी उसकी नींद न छूटी। इतनेमें कुमुदने जरा असकसाकर करवट बदली। गृहस्थके जागनेके लक्षण देखकर चोर जैसे भागता है, उसी तरह मधुसूदन वहांसे जल्दीसे भाग आया। डर गया—कहीं कुमुद उसकी पराजयको देखकर मन-ही-मन हसे न।

बत्ती-घरसे निकलकर मधुसूदन बरामदेमे होकर जा रहा था कि सामने श्यामा मिल गई। उसके हाथमे एक चिराग था।

"अरे, तुम यहा कहांसे आये देवरजी?"

मधुसूदनने इसका कुछ जवाब न देकर कहा—"तुम कहां जा रही हो, भाभी?"

"कल जो मेरा व्रत है, ब्राह्मण-भोजन कराना है, उसीकी फिराकमे जा रही हू—तुम्हारा भी निमन्त्रण रहा, पर तुम्हें दक्षिणा देने लायक शक्ति मुझमे नहीं है भइया।"

मधुसूदनकी जबानपर एक जवाब आ रहा था, उसे वह दाब गया।

पिछली रातके इस अन्धकारमे उस चिरागके उजेलेमे श्यामा सुन्दर दीख रही थी। श्यामाने जरा हॅसते हुए कहा—"आज बिछौनेसे उठते ही तुम जैसे भाग्यवान् पुरुषका मुह देखा है, मेरा आजका दिन अच्छा ही बीतेगा। व्रत सफल होगा।"

भाग्यवान् शब्दपर जरा जोर दिया—मधुसूदनके कानोंमे यह शब्द विडम्बनाके समान जान पडा। श्यामाको कुमुदके विषयमे स्पष्टतया कुछ पूछनेकी हिम्मत न पडी—"हॉं, तो कल मेरे यहॉं जीमनेको आना, तुम्हे सौगद है"—कहकर वह चली गई।

अपने कमरेमे आकर मधुसूदन बिस्तरपर लेट गया। बाहर लालटन रख दी, शायद कुमुद आवे। कुमुदिनीका वह सोता हुआ मुख किसी तरह मनसे दूर नहीं होना चाहता, और बारबार याद आती है दुशालेसे बाहर निकले हुए उसके अतुलनीय उस हाथकी। विवाहके समय उस हाथको जब उसने अपने हाथमे लिया था, तब उसे वह अच्छी तरह देख नहीं पाया था—आज देखते-देखते उसकी आस ही नहीं मिटती। इन हाथोंका अधिकार उसे कब मिलेगा? बिछौनेपर कल न पडी, उठ बैठा। बत्ती जलाकर कुमुदके डेस्कका दराज खोला। उसका मोतियोका चुना हुआ बटुआ निकालकर देखा। उसमें से पहले ही निकल आया विप्रदासका टेलिग्राम—'ईश्वर तुझे आशीर्वाद दें"—उसके बाद निकला एक फोटोग्राफ, कुमुदके दोनों भाइयोकी तसवीर—और एक कागजका टुकडा, विप्रदासके हाथका लिखा हुआ गीताका श्लोक'—

यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्,
यत् तपस्यसि, कौन्तेय, तत् कुरुष्व मदर्पणम् ।

ईर्षासे मधुसूदनका मन घायल होने लगा। दांत पीसकर मन-ही-मन उसने विप्रदासका अस्तित्व मिटा दिया। उसे निश्चित मालूम है कि मिटनेका वह दिन कभी-न-कभी आयेगा जरूर,—धीरे-धीरे थोडा-थोडा स्क्रू कसना होगा, परन्तु कुमुदिनीके उन्नीस बरस जो मधुसूदनके अधिकारके बाहर हैं, विप्रदासके हाथसे घडी-भरमे ही छीन ले सके, तब कहीं उसके मनमे शान्ति हो। और कोई रास्ता जानता नहीं सिवा जबरदस्तीके। मोतियोंका बटुआ आज हिम्मत करके फेंक न सका—जिस दिन अंगूठी चुराई थी, उस दिन उसका साहस और भी ज्यादा था। तब तक उसे यही मालूम था कि कुमुदिनी साधारण औरतोंकी तरह स्वभावसे ही शासनके अधीन रहेगी, यहाँ तक कि शासन ही उसे पसन्द होगा। यह बात आज उसकी समझमे आ गई कि कुमुदिनी क्या कर सकती है और क्या नहीं कर सकती, कुछ कहा नहीं जा सकता।

कुमुदिनीको अपने जीवनके साथ कठिन बन्धनमे लपेटनेका सिर्फ एक ही उपाय है—सन्तानकी मा बना देना, बस। उसी कल्पनामे उसकी सान्त्वना है।

इसी तरह घडीमे पांच बज गये, परन्तु जाडोंकी रात है, अन्धकार अभी तक दूर नहीं हुआ है। थोडी देर बाद ही उजेला हो जायगा, आजकी रात हो जायगी व्यर्थ। मधुसूदन झटपट घरसे निकलकर चल दिया,—बत्ती-घरके सामने पैरोंकी आहट

जान-बूझकर जरा कुछ जोरसे की—दरवाजा भी कुछ धक्का देकर आवाजके साथ खोला—देखा तो, कुमुद है ही नहीं। कहाँ है वह ?

आँगनके नलसे पानी गिरनेका शब्द सुनाई पडा। बरामदेमें खड़े होकर देखा, दुनिया-भरकी पुरानी जंग लगी हुई बेकामकी दीवटें निकालकर उन्हें इमलीकी खटाईसे माँज रही है। यह सिर्फ जान-बूझकर कार्यका भार बढानेकी कोशिश है—जाड़ेके दिनोंमें सवेरेके वक्त निद्रा-हीन दुःखको बढाना-मात्र है।

मधुसूदन बड़े अचम्भेमें पड़कर ऊपरके बरामदेसे खड़ा-खड़ा देखता रहा। अबलाके बलको किस तरह परास्त किया जाय, यही उसकी चिन्ता है। सवेरे ही उठकर घरके लोग जब देखेंगे कि कुमुद दीवटें माँज रही है, तो मनमें क्या सोचेंगे। जिस नौकरपर माँजने-घिसनेका भार है, वह अपने मनमें क्या कहेगा ? तमाम घरवालोंके सामने उसे हास्यास्पद बनानेका ऐसा सरल तरीका तो और हो ही नहीं सकता।

पहले तो मधुसूदनके मनमें आई, उससे अभी समझ ले, परन्तु फिर सवेरेके वक्त बीच आँगनमें दोनोंमें कहा-सुनी हो और घर-भरके लोग बिस्तर छोड़-छोड़कर तमाशा देखने आवें, इस प्रहसनकी कल्पना करके वह पीछे हट गया। मझले भाई नवीनको बुलाकर कहा—"घरमें क्या-क्या वारदात होती है, कुछ खबर रखते हो ?"

नवीन था घरका मैनेजर। बेचारा डर गया, बोला—"क्यों क्या हुआ भइया ?"

नवीन जानता है, भइयाको जब गुस्सा होनेका कोई कारण मिल जाता है, तो उसे उतारनेके लिए एक आदमीकी जरूरत पडती है। दोषी अगर हाथसे निकल जाय, तो निर्दोष होनेसे भी काम चल जाता है—नहीं तो 'डिसिप्लिन' (नियत्रण) नहीं रहती, नहीं तो गृहस्थीमे उसके राष्ट्रतन्त्रकी 'प्रेस्टिज' (गौरव) चली जाती है।

मधुसूदनने कहा—"बडी बहू जो पागलकी तरह अट-सट काम कर रही है, तुम समझते हो कि उसका कारण हमे मालूम ही नहीं ?"

बडी बहू क्या पागलपन कर रही है, पूछनेकी उसे हिम्मत न पडी, खासकर इसलिए कि न जानना ही कहीं उसके लिए एक अपराध न समझा जाय।

मधुसूदनने कहा—"मझली बहू उनका दिमाग़ खराब कर रही है, इसमे शक नहीं।"

बहुत संकोचके साथ नवीनने कहनेकी कोशिश की—"नहीं तो—मझली बहू तो—"

मधुसूदन बोल उठा—"मैंने अपनी आँखोंसे देखा है।"

इसपर कोई बात नहीं चल सकती। 'अपनी आँखोसे देखने' के अन्दर उस काग़ज दाबनेके काचका इतिहास मौजूद था।

[२८]

मोतीकी माने जब कुमुदिनीको अपने अकृत्रिम प्रेमके साथ अपनाना शुरू किया था, नवीन तभी समझ गया था कि इसका निभना कठिन है, घरकी औरतें इसके विरुद्ध कान भरे बिना न रहेंगी। नवीनने सोचा--ऐसी ही कोई बात हुई होगी, परन्तु मधुसूदनके कोरमकोर अन्दाजपर क़ायम अभियोगके प्रतिवादसे कोई लाभ नहीं, उससे जिद और बढ़ जायगी।

असली बात क्या हुई, मधुसूदनने साफ-साफ नहीं बताई—शायद कहनेमें शरम मालूम पड़ती होगी, क्या करना होगा, सो भी अस्पष्ट रहा। उसमें स्पष्ट था तो केवल इतना ही कि सारी ज़िम्मेवारी मझली बहूपर ही है, इसलिए दाम्पत्यके आपेक्षिक सम्मानके अनुसार जवाबदेहीका सबसे भारी हिस्सा आ पड़ता है नवीनके भाग्यमे।

नवीनने जाकर मोतीकी मासे कहा—"एक फसाद और उठ खड़ा हुआ।"

"क्यों, क्या हुआ ?"

"सो तो अन्तर्यामी परमात्मा जानते होंगे, या भाई साहब, या शायद कुछ-कुछ तुम भी, पर डाँट शुरू हुई है मेरे ऊपर।"

"क्यों, सो कैसे ?"

"सो ऐसे कि मेरे द्वारा तुम्हारी गल्ती सुधर जाय, और तुम्हारे जरिये सुधरे उनके नये व्यवसायकी नई आमदनीकी।"

"अच्छा, तो मुझपर तुम अपना सुधार शुरू करो,—देखूँ, बड़े भाईसे बढकर तुममे क्या करामात है।"

नवीनने दीन भावसे कहा—"भाई साहबके उडिया नौकरने उनके कीमती डिनर-सेटका एक 'पिरिच' तोड दिया था, उसके जुरमानेका सबसे बडा हिस्सा मुझे ही देना पडा था, मालूम है न,—क्योंकि चीजें सब मेरे ही जिम्मे है, लेकिन अबकी जो चीज घरमे आई है, क्या वह भी मेरे ही जिम्मे है?—तो भी जुरमाना हमे और तुम्हें मिलकर देना पडेगा, इसलिए जो करना हो, सो करो, मुझे अब मत सताओ, मझली बहू।"

"जुरमानेसे मतलब? जरा सुनू तो सही।"

"रजबपुरको चालान कर देंगे। बीच-बीचमें डर तो ऐसा ही दिखाया करते हैं।

"डरते हो, इसीसे डराया करते हैं। एक बार तो भेज दिया था, फिर रेल-किराया गाँठसे देकर बुलाना पडा था न? तुम्हारे भाई साहब गुस्सेमे भी हिसाबमे नहीं चूकते। वे जानते हैं, मुझे घरके काम-धन्धेसे बरखास्त करनेसे जरा भी किफायत न होगी। और, अगर कहीं एक पैसेका भी नुकसान हो गया, तो उन्हें वह सह्य न होगा।"

"समझ गया, पर अभी क्या करना चाहिए, सो तो बताओ।"

"अपने भाई साहबसे कहना कि वे राजा चाहे कितने ही बडे हो, पर तनख्वाह देकर आदमी रखके गरीबका मान भंजन नहीं कर सकते—मानका बोझा खुद ही को सिरपर लादकर

उतारना पड़ेगा। सुहाग-कुटीरके मामलेमें भाड़ेके मजदूर बुलानेकी मनाई कर देना।"

"मझली बहू, उनको उपदेश देनेके लिए मेरी जरूरत न पड़ेगी, कुछ दिन बाद खुद ही होश आ जायगा। तब तक दूतीका काम करती रहो, फल हो चाहे न हो। दिखा तो सकोगे कि नमक खाकर उसे चुपचाप हजम नहीं करते।"

मोतीकी मा गई कुमुदको ढूँढने। जानती थी, सवेरेके वक्त वह छतपर मिलेगी। छतके चारों तरफ ऊँची दीवाल है, उसमें गोल-गोल छोटे-छोटे झरोखे-से बने हुए हैं। कुछ गमले इधर-उधर पड़े हुए हैं, पर उनमें पौधे नहीं हैं। एक कोनेमें लोहेकी जालीका एक बड़ा-भारी चौखूँटा टूटा हुआ पिंजड़ा पड़ा है, उसका लकड़ीका पेंदा बिलकुल सड़-सा गया है। किसी जमानेमें उसमें खरगोश या कबूतर रखे जाते थे,—अब वह अचार, अमावट आदिको कौओंकी चौर्यवृत्तिसे बचाकर घाममें सुखानेके काम आता है। इस छतसे सिर्फ सिरके ऊपरका आकाश ही दिखाई देता है, चारों तरफकी दिशाएं नहीं दीख पड़तीं। पश्चिम आकाशमें किसी कारखानेकी एक लोहेकी चिमनी है। दो दिन कुमुद छतपर आकर बैठी है, उस चिमनीसे निकलता हुआ काला धुआँ ही उसके देखनेकी एकमात्र वस्तु थी,—सारे आकाशमें सिर्फ वही एक मानो सजीव पदार्थ है, मानो वह किसी एक आवेगसे फूल-फूलकर चक्कर लगा रहा है।

दीवार वगैरह मांज-मूँजकर अँधेरा रहते ही कुमुद नहा-धो

ली और छतपर जाकर पूरबकी तरफ मुह करके बैठ गई। भीगे बाल पीठपर फैला दिये,—शृंगारका तो आभास तक न था। एक मोटे सूतकी सफेद साडी पहने थी—काली पतली किनारीकी, और जाडेके बचावके लिए एक मोटी अंडी (रेशमकी चादर) ओढे थी।

कुछ दिनसे यह युवती प्रत्याशित प्रियतमके काल्पनिक आदर्शको अन्तःकरणके बीचमें रखकर अपने हृदयकी क्षुधा मिटाने बैठी थी। उसकी जितनी भी पूजा थी, जितने भी व्रत थे, जितनी भी पुराण-कहानी थी—सबने इस काल्पनिक मूर्तिको सजीव बना रखा था। वह थी अभिसारिणी अपने मानस वृन्दावनमे,—तडके ही उठकर उसने गाना गाया है रामकेली रागिणीमें,—

"हमारे तुम्हारे सँग प्रीति लगी है
सुन मनमोहन प्यारे——"

जिस अनागत पुरुषके लिए वह अपने आत्म-निवेदनका अर्घ्य देना चाहती है, उसके सामने आनेसे पहले ही मानो वह उसके पास प्रति दिन अपना प्याला भेजती रही हो। वर्षाकी रातमें पीछेके बगीचेके वृक्षोंने अविश्राम धारा-पतनके आघातसे जब अपने पल्लवों-द्वारा शोर मचाना शुरू किया, तब उसे अपना कनाडास्वरका गीत याद आया :—

"बाजे झननन मेरी पायरिया।
कैसे कर जाऊँ घरवा रे।"

उसका उदास मन हर क़दमपर नूपुर बजाता चलता है

झननन—उद्देशहीन मार्गपर निकल पडा है, कभी लौटेगा भी घरको, तो कैसे? जिसे रूपमे देखना चाहती थी, उसे इसी तरह कितने ही दिनोसे वह गानेके स्वरमें देख रही थी। निगूढ आनन्द-वेदनाकी परिपूर्णताके दिन यदि वह अपने मनका-सा किसीको अकस्मात् अपने पास पाती, तो हृदयके सारे गूजते हुए गानोको उसी समय रूपमें प्राण मिल जाते। कोई पथिक उसके द्वारपर आकर खडा नहीं हुआ। कल्पनाके निभृत निकुजमें वह बिलकुल ही अकेली थी। यहा तक कि उसकी बराबरीकी सहचरियोंमे से भी कोई न थी। इसीसे इतने दिनों तक उसके रुके हुए प्रेमने श्यामसुन्दरके पैरोके पास पूजाके फूलके आकारमे अपने लापता प्रेमिकका पता ढूँढा है। इसीलिए, घटक जब विवाहकी बात करने आया था, तब कुमुदने अपने देवतासे ही आज्ञा मागी थी,—पूछा था—"अब तो तुम्हे ही पाऊँगी?" अपराजिताके फूलने कहा—"ये लो, पा तो गई।"

हृदयकी इतने दिनोंकी इतनी तैयारिया व्यर्थ हुइ—एकाएक ठनक उठा पत्थर, भरी नाव डूब गई एक ही क्षणमे। व्यथित यौवन आज फिर ढूँढने चला है—कहा चढावे अपना फूल। थालीमें जो उसका अर्घ्य था, वह आज भारी बोझ सा मालूम होने लगा। इसीसे आज वह इस तरह जी-जानसे गा रहा है—"मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरा न कोई।"

पर आज यह गान शून्यमें घूम रहा है, कहीं भी पहुचा नहीं। इस शून्यतामें कुमुदका मन भयसे भर गया। आजसे

लेकर जीवनके अन्तिम दिन तक मनकी गहरी आकांक्षा क्या उस धुएँकी कुडलीकी तरह ही अकेली नि.श्वासके रूपमें निकलती रहेगी ?

मोतीकी मा कुछ दूरीपर उसके पीछे बैठी रही। सवेरेके निर्मल प्रकाशमे सूनी छतपर इस असज्जिता सुन्दरीकी महिमाने उसे विस्मित कर दिया है। वह सोचने लगी—इस घरमे यह कैसे शोभा पायेगी ? यहा जो स्त्रियाँ हैं, इसकी तुलनामे वे किस जातिकी हैं ? वे अपने-आप ही इससे अलग जा पडी हैं। इसपर गुस्सा तो करती हैं, पर उससे मेल करनेकी हिम्मत नहीं पडती।

बैठे-बैठे सहसा मोतीकी माने देखा कि कुमुद दोनों हाथोसे अपनी चादरका अंचल मुहपर दबाकर रो रही है। उससे अब रहा न गया, पास जाकर गलेमे बाँह डालकर बोली—"मेरी जीजी कैसी हो, मेरी लक्ष्मी-बहन, क्या हुआ—जरा बताओ तो मुझे।"

कुमुदिनीसे कुछ देर तो बोला न गया। अपनेको जरा सम्हालकर बोली—"आज भी भइयाकी चिट्ठी नहीं मिली, उनको क्या हो गया, कुछ समझमे नहीं आता।"

"चिट्ठी पानेका समय क्या हो गया, बहन ?"

"जरूर हो गया। मैं उनकी बीमारी देख आई हू। वे जानते हैं कि समाचार पानेके लिए मेरा मन कैसा तडफ रहा होगा।"

मोतीकी माने कहा—"तुम सोच मत करो, समाचार जाननेके लिए मैं कोई उपाय करती हू।

कुमुदने तार देनेकी बात कई बार सोची है, पर किसके हाथ

भेजे। जिस दिन मधुसूदनने अपनेको उसके भइयाका महाजन कहकर अपनी बड़ाई की थी, उस दिनसे मधुसूदनके सामने अपने भइयाका जिक्र करनेमे कुमुदकी जबान रुक जाती है। आज मोतीकी मासे उसने कहा—"तुम अगर भइयाको मेरे नामसे तार भिजवा सको, तो मैं जी जाऊं।"

मोतीकी माने कहा—"अच्छा, भिजवा दूँगी, इसमे डर किस बातका ?"

कुमुदने कहा—"तुम्हें तो मालूम ही है, मेरे पास एक भी रुपया नहीं है।"

"जीजी, तुम तो ऐसी बातें करती हो, जिसका ठीक नहीं। घरू खर्चके लिए जो रुपये मेरे पास रहते हैं, वे तो तुम्हारे ही हैं। आजसे मैं तुम्हारा ही नमक खा रही हू।"

कुमुद जोरके साथ बोल उठी—"न न न, इस घरमे कुछ भी मेरा नहीं है, एक छदाम भी नहीं।'

"अच्छा तो रहने दो, बहन, तुम्हारे लिए मैं अपने रुपयोंमेसे ही कुछ खर्च करूँगी।—चुप क्यो हो रहीं ? इसमें बुराई क्या ? रुपया अगर मै घमंडसे देती, तो तुम्हारा अभिमानसे न लेना ठीक भी था। प्यारसे अगर दूँ, तो प्यारसे तुम लोगी क्यों नहीं ?"

कुमुदने कहा—"लूँगी।"

मोतीकी माने पूछा—"जीजी, तुम्हारा सोनेका कमरा क्या आज भी सूना रहेगा ?"

कुमुदने कहा—"वहां मेरे लिए जगह नहीं।"

मोतीकी माने दबाव नहीं डाला। उसके मनका भाव यह था कि दबाव डालना उसका काम नहीं, जिसका काम है, वह करेगा। सिर्फ धीरेसे कहा—"थोडासा दूध ला दूँ तुम्हारे लिए?"

कुमुदने कहा—"अभी नहीं, और थोडी देर बाद।"—अपने देवताके साथ उसका फैसला होना अभी बाकी है। अभी तक अपने मनके अन्दर वह कोई जवाब नहीं पा रही है।

मोतीकी माने अपने कमरेमे जाकर नवीनको बुलाकर कहा—"सुनो, एक बात सुनो। जेठजीके बाहरवाले कमरेमे उनके डेस्क पर जरा देख तो आओ, जीजीकी कोई चिट्ठी आई है या नहीं,—दराज खोलकर भी देखना।"

नवीनने कहा—"मार डाला।"

"तुम अगर न जाओ, तो मैं जाऊँगी।"

"यह तो झाडीके अन्दरसे भालूका बच्चा पकडवाना है, देवीजी।"

"भाई साहब आफिस गये हैं, उनको लौटते-लौटते एक बजेगा, इसी बीचमें—"

"देखो, बात यह है कि दिनमे तो यह काम मुझसे कैसे भी न होगा, अभी चारो तरफ आदमियोका आना-जाना है। आज रातको मैं तुम्हें खबर दे सकता हू।"

मोतीकी माने कहा—"अच्छा, ऐसा ही सही, पर नूरनगरको अभी तार देकर पूछना होगा कि विप्रदास बाबूकी कैसी तबीयत है।"

"अच्छी बात है, तो भइयाको जताकर करना होगा न?"

मनके झुकावको ठीक पकड लिया है, लेकिन फिर भी उसकी तरफसे उसका भय नहीं मिटा।

मधुसूदनके जीमनेके समय श्यामासुन्दरी रोज ही उपस्थित रहती है, आज भी थी। हाल ही नहाकर आई है—उसके स्याह काले घने लम्बे बाल पीठपर बिखरे हुए हैं—उसपर से सफेद साडी सिरके ऊपर तक खिंची हुई है—भीगे हुए बालोंमे से मसालेदार तेलकी मृदु मन्द सुगन्ध आ रही है।

श्यामाने दूधके कटोरेपर से बिना दृष्टि हटाये ही धीमे स्वरमें कहा—"देवरजी, बहूको बुला दूं?"

मधुसूदनने मुहसे कुछ नहीं कहा, और अपनी भौजाईके मुहकी तरफ गम्भीर दृष्टिसे देखने लगा। उसकी भौजाई श्यामासुन्दरी डरके मारे सकपका-सी गई, प्रश्नकी व्याख्या करके बोली—"जीमते वक्त तुम्हारे पास आकर बैठे तो अच्छा है, थोडी-बहुत सेवा-टहल—"

मधुसूदनके चेहरेके भावका कोई अर्थ न समझ सकनेके कारण श्यामासुन्दरी पूरी बात बिना कहे ही चुप रह गई। मधुसूदन फिर सिर नीचा करके जीमने लगा।

कुछ देर पीछे थाली परसे बिना मुह उठाये ही पूछा—"बडी बहू अभी है कहा?"

श्यामासुन्दरी व्यस्त हो कर बोल उठी—"मैं अभी देखकर आती हूं।"

मधुसूदनने भौंहे सिकोडकर उंगली हिलाते हुए मना किया।

प्रश्नका उत्तर पानेके लिए मन उत्सुक है, परन्तु इसके मुहसे सुनना असह्य है—साथ ही मनमें कौतूहल भी काफी है। जीमकर जब वह तिमंजलेपर अपने सोनेके कमरेमें गया, तब उसके मनके एक कोनेमें क्षीण आशा थी। एक बार छतपर घूम आया। बगलके गुसलखानेमें घुसकर कुछ देरके लिए सन्नाटेमें आकर खड़ा रहा। उसके बाद बिस्तरपर लेटकर हुक्का गुड़गुड़ाने लगा। निर्दिष्ट पन्द्रह मिनट बीत गये—बीस मिनट पार होकर जब आध घंटा पूरा होने आया, तो ऊपरकी जेबमेंसे घड़ी निकालकर एक बार समय देखा। वर्षपर वर्ष बीत गये हैं, परन्तु आफिस जानेसे पहले कभी पाँच मिनटकी भी देरी नहीं हुई थी। आफिसमें एक रजिस्टर है, जिसमें कौन किस वक्त आया और गया, सबका हिसाब लिखा रहता है। उस हिसाबके साथ-साथ वेतनकी मात्रा-रेखा चढ़ती-उतरती रहती है। आफिसके समस्त कर्मचारियोंमें मधुसूदनके जुरमानेकी रकम सबसे कम होती है। साथ ही इस विषयमें अपने प्रति उसका कोई पक्षपात नहीं। वास्तवमें अपनेसे वह कर्मचारियोंकी अपेक्षा डबल जुरमाना वसूल करता है। मन-ही-मन आज उसने प्रतिज्ञा कर ली कि शामको आफिसका समय खत्म होनेके बाद अतिरिक्त समयमें काम करके क्षति-पूर्ति कर देगा, परन्तु ज्यों-ज्यों समय बीतने लगा, त्यों-त्यों कामसे उसकी तबीयत उचटने लगी। बल्कि आज आध घंटे पहले ही काम छोड़कर घर लौट आया। बार-बार उसका मन चाहता कि एक बार सोनेके कमरेमें बेवक्त ही हो आऊं, शायद किसीसे मुलाकात हो जाय। दिनमें वह कभी उस कमरेमें नहीं

जाना। आज आफिसकी पोशाक पहने ही उसने अन्तःपुरमें प्रवेश किया।

मोतीकी मा उस समय छतपर थी—सूखती हुई आमकी खटाई बीन-बीनकर टोकरीमें रख रही थी। मधुसूदनको असमयमें सोनेके कमरेमें घुसते देख उसने घूँघट खींच लिया और उसके भीतर खूब हँसने लगी। मझली बहूके सामने उसकी यह अनियमित कार्रवाई पकड़ी जानेके कारण उसे बड़ी लज्जा और साथ ही गुस्सा आया। मनमें तरकीब सोची थी, बहुत ही सावधानीसे घरमें घुसूँगा,—हाँ, कहीं भीरु हरिणीकी तरह चौंककर वह भाग न जाय, सो नहीं हुआ। कौतुक-दृष्टिकी चोटसे बचनेके लिए वह खुद ही जल्दीसे घरमें घुस गया। देखा कि उसका आफिससे भाग आना बिलकुल व्यर्थ हुआ। कमरेमें कोई न था, और न उसके पीछे किसीके वहाँ आनेके कोई लक्षण ही दिखाई दिये। क्षण-भरमें उसका अधैर्य मानो असह्य हो उठा। यद्यपि वह जेठ लगता है, और किसी दिन उसने मझली बहूके साथ एक बात भी नहीं की,—तो भी उसे बुलाकर कुमुदके बारेमें कुछ कहनेके लिए उसका मन छटपटाने लगा। एक बार निकल भी आया, किन्तु मोतीकी मा तब तक नीचे चली गई थी।

नई बहूके द्वारा छोड़े हुए सोनेके कमरेमें अकारण और असमयमें अकेले आनेके असम्मानसे रक्षा पानेके लिए वह बाहरके कमरेकी ओर तेजीसे दनदनाता हुआ चला गया। एक बड़े जरूरी कामका बहाना बनाकर, वह डेस्कपर झुककर बैठ गया। सामने था एक छोटासा रजिस्टर। साधारणतः उसे वह कभी देखता भी नहीं

देखता है आफिसका हेड-बाबू। आज लोगोंकी आँखोंको धोखा देनेके लिए उसे वह खोल बैठा। इस रजिस्टरमें उसके घरकी चिट्ठी-पत्री और तारोंके रवाना होनेकी तारीख वगैरह दर्ज रहती है। रजिस्टर खोलते ही आजकी तारीखके तारोंकी लिस्टमें विप्रदासके नामपर उसकी नजर पड़ी। भेजनेवाली है स्वयं मालिकिन साहिबा—कुमुदिनी।

"बुलाओ दरवानको।"

दरवान हाजिर हुआ।

"यह तार किसने दिया था—भेजने ?"

"मझले बाबूने।"

"बुलाओ मझले बाबूको।"

मझले बाबू अपना पीला-सा मुँह लिये हाजिर हुए।

"बिना मेरी इजाजतके तार भेजनेके लिए किसने कहा ?"

जिसने कहा था, शासनकर्त्ताके सामने उसका नाम जबानपर लाना मामूली बात न थी। क्या कहे, कुछ समझमें न आनेके कारण नवीन व्याकुल हो उठा—ऐसे जाड़ेके दिनोंमें उसके माथेसे पसीना छूटने लगा।

नवीनको चुप देखकर मधुसूदनने खुद ही पूछा—"शायद मझली बहूने, क्यों ?"

मुँह नीचा किये चुपचाप खड़े रहनेसे ही उत्तर स्पष्ट हो गया। चटसे माथेका खून खौल उठा, मुह पड़ गया लाल सुर्ख—इतना क्रोध आया कि मुहसे बात भी न निकली। जोरसे हाथ [illegible]

नवीनको घरसे बाहर निकल जानेका इशारा करके कमरेमे इधरसे उधर जल्दी-जल्दी टहलने लगा।

[२०]

नवीनने भीतर मोतीकी माके पास जाकर सूखे मुहसे कहा—
"सुनती हो, बस, अब बाँधो बोरिया-बँधना।"

"क्यो, क्या हुआ ?"

"बस, अब चलनेकी तैयारी करो।"

"तुम्हारी अक्लपर भरोसा करके अगर बाँधू, तो कल ही फिर खोलना पड़ेगा। क्यों, तुम्हारे भाई-साहबका मिजाज ठीक नहीं है क्या ?"

"मैं तो उन्हे जानता हू। अबकी मालूम होता है, हम-लोगोपर चोट है।"

"तो चले चलना। इतना सोच किस बातका ? वहा जानेसे कुछ पानीमे थोड़े ही डूब जाओगे।"

"मुझे क्यो कहती हो चलनेके लिए ? अबकी हुक्म होगा—मझली बहूको देश भेज दो।"

"उस हुक्मको तुम नहीं मान सकते, मैं जानती हू।"

"तुमने कैसे जाना ?"

मैं ही अकेली क्यों, सब घर तुम्हे स्त्रैण समझता है। मर्द किस तरह स्त्रैण हो सकते हैं, अब तक तुम्हारे भाई-साहबके दिमागमे

यह बात न आई थी। अब उनकी खुदके समझनेकी पारी आई है।"

"सचमुच ?"

"मैं तो देखती हूं, तुम्हारे वंश-भरमें यह रोग मौजूद है। अब तक बड़े भाई पकड़ाई नहीं दिये थे। बहुत दिनोंसे इकट्ठा हो रहा है, इसलिए उसमें तीखापन बहुत ज्यादा होगा, देख लेना, मैं कहे देती हू। जिस ज़ोरके साथ वे दुनियाको भूलकर रुपयोंकी थैलीको जकड़े हुए थे, उनका वह सारा जोर अब बहूपर ही पड़ेगा।"

"अच्छा है, पड़ने दो। बड़े स्त्रैण अपना रंग जमावें, मगर छोटे स्त्रैणके प्राण कैसे बचें ?"

"इसका भार मेरे ऊपर रहा। अब जो मैं तुमसे कहूं, सो करो। तुम्हें उनकी दराज खोलकर देखनी होगी।"

नवीनने हाथ जोड़कर कहा—"दुहाई है तुम्हारी, मझली बहू, साँपके बिलमें कहतीं तो मैं हाथ डाल देता, पर उनकी दराज़में नहीं।"

"साँपके बिलमें हाथ देना होता तो मैं खुद देती, लेकिन दराज तुम्हें ही देखनी होगी। तुम्हें तो मालूम ही है, इस घरकी तमाम चिट्ठियां पहले वे ही देखते हैं—बिना उनके हुक्मके किसीको नहीं दी जातीं। मेरा मन कह रहा है कि चिट्ठी आ गई है, लेकिन उन्होंने दबा रखी है।"

"मेरा मन भी यही कहता है, लेकिन साथ ही यह भी कह रहा है कि अगर तुमने उस चिट्ठीमें हाथ लगाया, तो फिर

भाई साहबको कोई दंड ही ढूँढे न मिलेगा। शायद सात वर्षके लिए कडी फाँसीका हुक्म हो जायगा।"

"तुम्हें कुछ न करना होगा, चिट्ठीमे हाथ लगानेकी जरूरत नहीं, सिर्फ एक दफे देख आओ कि जीजीके नामकी चिट्ठी है या नहीं।"

मझली बहूपर नवीनकी अगाध भक्ति है, यहां तक कि अपनेको वह अपनी स्त्रीके अयोग्य ही समझता है। इसलिए उसपर अगर कोई असाध्य काम आ पडता, तो उसे डर चाहे कितना भी हो, खुशी भी काफ़ी होती है।

उसी रातको नवीनके जरिये मझली बहूको खबर मिली कि कुमुदके नामकी एक चिट्ठी और तार दराजमे है।

जिस उत्तेजनाका पहला धक्का खाकर कुमुद अपना सोनेका कमरा छोडकर दासी-वृत्तिमे प्रवृत्त हुई थी, उसका वेग अब रुक गया है। अपमानकी विरक्ति दूर हो गई है और अब विषादकी म्लानतासे उसका मन छायाच्छन्न हो गया है। समझ गया है कि हमेशाकी अवस्था यह नहीं है। फिर भी उस तरहकी कोई व्यवस्था हुए विना कुमुद जीयेगी कैसे? ससारमें मौतके दिन तक रात-दिन जोर करके इस तरह असलग्न भावसे रहना तो सम्भव नहीं।

कुमुदिनी बत्ती-घरके किवाड बन्द करके यही बात सोच रही थी। यह कोठरी बारामदेके एक कोनेमें है, और काठके घेरेसे घिरी हुई है। प्रवेशके दरवाजेको छोडकर कोठरीका बाकी

हिस्सा चारों तरफ़से बन्द है। दीवारपर भी काठके तख्ते लगे हुए हैं। उनपर बत्ती जलानेके विचित्र सामान रखे हुए हैं। तेल और मैलसे सारी कोठरी चिपचिपा रही है। जिधर दरवाजा है, उधरकी दीवारपर किसी नौकरने मोमबत्तीके बण्डलके ऊपरसे तसवीरें काट-काटकर चुपका दी थीं, अवश्य ही यह काम उसने अपने सौन्दर्य-बोधकी तृप्तिके लिए ही किया था। एक कोनेमें टीनके बक्समें खड़ियामिट्टी रखी हुई है, उसके बगलमें एक टोकनीमें सूखी इमली और कुछ मैली झाड़नें पड़ी हैं। दीवारसे सटे हुए बहुतसे मिट्टीके तेलके कनस्तर रखे हुए हैं, जिनमें अधिकांश खाली है, दो या तीन कनस्तर भरे हैं।

आज सवेरेसे ही कुमुद अनिपुण हाथोंसे अपने काममें लगी हुई थी। कोठारका काम खत्म करके मोतीकी माने उझककर एक बार कुमुदकी कर्म-तपस्यामें आये हुए दुःसाध्य सकटको खड़े-खड़े देखा। समझ गई कि दो-एक क्षणभंगुर चीजोंका अपघात शीघ्र ही होनेवाला है। इस घरमें चीज-वस्तकी मामूलीसी खोट भी निगाह और हिसावसे अछूती नहीं रह सकती।

मोतीकी मासे अब रहा नहीं गया, बोली—"काम-काज कुछ था नहीं हाथमे, इसीसे चली आई हूं। सोचा, चलो जीजीके काममें ही कुछ मदद करना, पुण्य तो-भी होगा।" कहकर उसने कॉचके ग्लोब और चिमनियोंकी टोकनी अपनी तरफ खींच-ली और लगी उन्हें पोंछने।

भाई साहबको कोई दड ही ढूँढे न मिलेगा। शायद सात वर्षके लिए कडी फाँसीका हुक्म हो जायगा।"

"तुम्हें कुछ न करना होगा, चिट्ठीमे हाथ लगानेकी जरूरत नहीं, सिर्फ एक दफे देख आओ कि जीजीके नामकी चिट्ठी है या नहीं।"

मझली बहूपर नवीनकी अगाध भक्ति है, यहा तक कि अपनेको वह अपनी स्त्रीके अयोग्य ही समझता है। इसलिए उसपर अगर कोई असाध्य काम आ पडता, तो उसे डर चाहे कितना भी हो, खुशी भी काफ़ी होती है।

उसी रातको नवीनके जरिये मझली बहूको खबर मिली कि कुमुदके नामकी एक चिट्ठी और तार दराजमे है।

जिस उत्तेजनाका पहला धक्का खाकर कुमुद अपना सोनेका कमरा छोडकर दासी-वृत्तिमे प्रवृत्त हुई थी, उसका वेग अब रुक गया है। अपमानकी विरक्ति दूर हो गई है और अब विषादकी म्लानतासे उसका मन छायाच्छन्न हो गया है। समझ गया है कि हमेशाकी अवस्था यह नहीं है। फिर भी उस तरहकी कोई व्यवस्था हुए विना कुमुद जीयेगी कैसे? संसारमे मौतके दिन तक रात-दिन जोर करके इस तरह असंलग्न भावसे रहना तो सम्भव नहीं।

कुमुदिनी बत्ती-घरके किवाड बन्द करके यही वात सोच रही थी। यह कोठरी बारामदेके एक कोनेमे है, और काठके बेडेसे घिरी हुई है। प्रवेशके दरवाजेको छोड़कर कोठरीका बाकी

हिस्सा चारों तरफ़से बन्द है। दीवारपर भी काठके तख्ते लगे हुए हैं। उनपर बत्ती जलानेके विचित्र सामान रखे हुए हैं। तेल और मैलसे सारी कोठरी चिपचिपा रही है। जिधर दरवाज़ा है, उधरकी दीवारपर किसी नौकरने मोमबत्तीके बण्डलके ऊपरसे तसवीरें काट-काटकर चुपका दी थीं, अवश्य ही यह काम उसने अपने सौन्दर्य-बोधकी तृप्तिके लिए ही किया था। एक कोनेमे टीनके बकसमे खड़ियामिट्टी रखी हुई है, उसके बग़लमे एक टोकनीमे सूखी इमली और कुछ मैली झाडनें पड़ी हैं। दीवारसे सटे हुए बहुतसे मिट्टीके तेलके कनस्तर रखे हुए हैं, जिनमें अधिकांश खाली हैं, दो या तीन कनस्तर भरे हैं।

आज सवेरेसे ही कुमुद अनिपुण हाथोंसे अपने काममे लगी हुई थी। कोठारका काम खत्म करके मोतीकी माने उझककर एक बार कुमुदकी कम-तपस्यामे आये हुए दु साध्य सकटको खड़े-खड़े देखा। समझ गई कि दो-एक क्षणभगुर चीज़ोंका अपघात शीघ्र ही होनेवाला है। इस घरमे चीज़-वस्तकी मामूलीसी खोट भी निगाह और हिसाबसे अछूती नहीं रह सकती।

मोतीकी मासे अब रहा नहीं गया, बोली—"काम-काज कुछ था नहीं हाथमें, इसीसे चली आई हू। सोचा, चलो जीजीके काममे ही कुछ मदद करना, पुण्य तो-भी होगा।" कहकर उसने कॉचके ग्लोब और चिमनियोंकी टोकनी अपनी तरफ़ खींच ली और लगी उन्हे पोछने।

हृदय-ज्वालाकी रक्तच्छटा न थी। ललाट और नेत्रोंमे थी प्रशान्त स्निग्ध दीप्ति। अभी हाल ही मानो वह पूजा समाप्त करके, तीर्थ-स्नान करके आई है। अन्तर्यामी देवताने मानो उसका सारा अभिमान हर लिया है, हृदयके अन्दर मानो वह निर्माल्य फूल रख लाई है, और उसीकी सुगन्धने उसे घेर रखा है। इसीसे कुमुदने जब उपवास करना चाहा, मोतीकी मा तभी समझ गई कि यह अभिमानका आत्म-पीड़न नहीं है, इसीलिए उसने कुछ आपत्ति भी नहीं की।

अपने देवताकी मूर्तिको हृदयमे विराजमान करके वह छतपर जाकर एक कोनेमे बैठ गई। आज वह स्पष्ट समझ सकी है कि दुःख अगर उसे इस तरह धक्का न देता, तो वह अपने देवताके इतने पास हरगिज न आ सकती थी। अस्त होनेवाले सूर्यकी आभाकी ओर हाथ जोड़कर कुमुदने कहा—"प्रभो, अब कभी तुमसे मेरा विच्छेद न हो, तुम मुझे रुला-रुलाकर अपनी बना लो।"

जाड़ेका दिन देखते-देखते म्लान हो गया। धूल, कुहरा और मिलोंके धुएँके एक मिश्रित आवरणने सन्ध्याकी स्वच्छ तिमिर-गम्भीर महिमाको आच्छन्न कर रखा है। जैसे वह आकाश एक परिव्याप्त मलिनताका बोझ लेकर ज़मीनकी ओर उतर पड़ा है, उसी तरह भइयाके लिए एक दुश्चिन्ताके दुःसह भारने कुमुदिनीके मनको नीचेकी तरफ खींच रखा है।"

इस तरह, एक ओर अभिमानके बन्धनसे छुटकारा पानेसे मुक्तिके आनन्दका और दूसरी ओर भइयाके लिए चिन्तासे पीड़ित

हृदयका भार लिये कुमुदिनीने फिर उसी अँधेरी कोठरीमे प्रवेश किया। उसकी बडी इच्छा है कि इस निरुपाय चिन्ताके बोझको भी वह अपने अटल विश्वाससे बिलकुल भगवानपर ही छोड दे, परन्तु अपनेको बार-बार धिक्कारकर भी किसी भी तरह उसे यह अवलम्बन नहीं मिल रहा है। तार तो पहुच गया होगा, उसका जवाब क्यों नहीं आ रहा—यह प्रश्न हरदम उसके मनमे लगा ही हुआ है।

नारी-हृदयके आत्म-समर्पणकी सूक्ष्म बाधापर मधुसूदनसे कहीं हाथ लगाते नहीं बनता। जिस विवाहित स्त्रीके शरीर और मनपर उसका पूरा अधिकार है, वह भी उसके लिए अत्यन्त दुर्गम हो गया है। भाग्यके ऐसे अकल्पनीय षडयन्त्रपर वह किस तरफसे और कैसे आक्रमण करे, कुछ समझमे नहीं आता कभी किसी भी कारणसे मधुसूदनका ध्यान अपने व्यवसायसे नहीं हटा था, अब वह दुर्लक्षण भी दिखाई देने लगा। अपनी माकी बीमारी और मृत्युसे भी मधुसूदनके काममे जरा भी बाधा नहीं आई, इस बातको सब जानते हैं। उस समय उसकी अविचलित दृढ-चित्तताकी बहुतोने प्रशसा की है। मधुसूदन आज सहसा अपना एक नया परिचय पाकर खुद ही दग रह गया है। बँधे हुए मार्गके बाहर जो शक्ति उसे इस तरह खींच रही है, वह उसे किस तरफ ले जायगी, कुछ समझमे नहीं आता।

रातको खा-पीकर मधुसूदन ऊपर सोने आया। यद्यपि विश्वास नहीं था, फिर भी आशा थी कि शायद आज वहाँ कुमुदसे

भट हो जायगी। इसीलिए नियमित समयके बाद ही वह सोने आया। उसका सोनेका टाइम ठीक बँधा हुआ है, एक मिनट भी इधर-उधर नहीं होता। कहीं आज उस टाइमपर नींद न आ जाय, नहीं तो कुमुद आकर भी लौट जायगी, इस आशकासे वह पलगपर नहीं लेटा। कुछ देर तक सोफेपर बैठा रहा, फिर छतपर टहलने लगा। नौ बजे मधुसूदनके सोनेका वक्त है,—आज, जब सुना कि ड्योढीके घडियालमें ग्यारह बज रहे हैं, तो वह चौंक उठा। शरम मालूम हुई, परन्तु बार-बार वह पलंगके पास तक जाता और चुपचाप खडा रहता, सोनेकी तबीयत ही नहीं होती। तब उसने निश्चय किया कि बाहरके घरमे जाकर उसी रातको नवीनसे निबट ले।

बाहरके घरके सामने बरामदेमे जाकर देखा कि भीतर बत्ती जल रही है। वह भीतर घुसना ही चाहता था कि इतनेमें देखा तो भीतरसे लालटेन हाथमे लिये हुए नवीन निकल रहा है। दिन होता तो दिखाई देता कि नवीनका मुँह उस समय कैसा फ़क पड गया है।

मधुसूदनने पूछा---"इतनी रातको तुम यहा कैसे ?"

नवीनके दिमागमे एक बहाना सूझ आया, बोला—"सोनेसे पहले ही तो मैं घडीमे चाभी दिया करता हू और तारीखके कार्ड ठीक करा देता हूं।"

"अच्छा भीतर आओ, सुनो।"

नवीन घबरा गया, कटघरेके आसामीकी तरह चुपचाप खडा रहा।

मधुसूदनने कहा—"बडी बहूके कानोंमे मंत्र फूँकनेवाला कोई हो, इसे मैं पसन्द नहीं करता। हमारे घरकी बहू हमारे इच्छानुसार चलेगी, न कि किसी दूसरेकी सलाहसे,—नियम ऐसा ही है।"

नवीनने गम्भीरताके साथ कहा—"यह तो ठीक बात है।"

"इसलिए में कहता हू, मझली बहूको देश भेज दिया जाय।"

नवीनने, ऐसा भाव दिखलाते हुए कि मानो वह निश्चिन्त हो गया है, कहा—"यह अच्छा हुआ, मैं भी पूछना चाहता था, पर यह सोचकर रह गया कि शायद तुम्हारी राय न हो।"

मधुसूदनने विस्मित होकर पूछा—"इसके मानी ?"

नवीनने कहा—"कई दिनसे मझली बहू देश जानेके लिए जिद कर रही हैं, चीज-वस्त सब सम्हाल ली हैं, साइत देखना-भर बाकी है।"

कहना न होगा कि यह बात बिलकुल बनाई हुई है। अपने घरमें मधुसूदन जिसे चाहे स्वयं विदा कर सकता है, लेकिन इसके मानी यह नहीं कि कोई चाहे तो अपनी इच्छासे चला जा सकता है, यह बिलकुल बेदस्तूर बात है। उसने नाराजीके स्वरमें कहा—"क्यों, जानेके लिए उन्हे इतनी जल्दी किस बातकी है ?"

नवीनने कहा—"घरकी मालिकिन घरमें आ गई, अब इस घरका सारा भार तो उन्हें ही लेना चाहिए। मझली बहू कहती हैं, उनके रहनेसे न जाने कब क्या बात उठ खडी हो।"

मधुसूदनने कहा—"इन सब बातोंके विचारका भार क्या उसीपर है ?"

नवीनने भलेमानसकी तरह कहा—"क्या बतावें, औरतोंकी जिद है। मुमकिन है, उसने सोचा हो कि किसी बातपर तुम्हीं किसी दिन अचानक उसे हटा दो, उस अपमानको वह सह न सकेगी—इसीसे उसने बिलकुल प्रण कर लिया है कि जायगी ही। अगली तेरसको साइत अच्छी है—इसी बीचमें वह सब काम-काज और हिसाब-किताब निवटा देना चाहती है।"

मधुसूदनने कहा—"देखो नवीन, मझली बहूको सिरपर चढ़ा-चढ़ाकर तुम्हींने बिगाड़ दिया है। उससे जरा कड़ाईके साथ ही कहना कि उसका जाना हरगिज नहीं हो सकता। तुम मर्द हो, घरमें तुम्हारा शासन न चले, यह बात हमसे देखी नहीं जाती।"

नवीनने सिर खुजलाते हुए कहा—"कोशिश करके देखूगा, परन्तु—"

"अच्छा, मेरा नाम लेकर कह देना, इस समय उसका जाना नहीं हो सकता। जब वक्त होगा, तो जानेका दिन मैं स्वयं निश्चित कर दूँगा।"

नवीनने कहा—"तुम्हींने तो कहा था कि मझली बहूको देश भेज दो, इसीसे मैं सोच रहा था—"

मधुसूदन उत्तेजित हो उठा, बोला—"मैंने क्या कहा था, अभी—इसी घड़ी भेज दो ?"

नवीन धीरे-धीरे वहाँसे चला आया। मधुसूदन गैसकी बत्ती जलाकर लम्बी आरामकुरसीपर बैठ गया। मकानका चौकीदार रातको बीच-बीचमें कभी-कभी घरोंके सामनेसे टहल जाया करता

है। मधुसूदनको जरा उघाई-सी आ गई थी, इतनेमे अचानक चौंककर उसने देखा, चौकीदार घरमे घुसकर लालटेन ऊँची किये उसके मुहकी तरफ ही गौरसे देख रहा है। शायद वह सोच रहा था, या तो महाराजको मूर्छा आ गई है, या फिर खतम ही हो चुके हैं। मधुसूदन लज्जित होकर कुरसी परसे भडभडाकर उठ बैठा। सद्य-विवाहित राजा बहादुरका इस तरह बाहरके आफिस-रूममे बैठकर रात बिताना, और उस शोकजनक दृश्यका चौकीदार द्वारा देखा जाना, मधुसूदनके लिए बडी भारी दुर्घटना थी, इस असम्मानका खयाल आते ही वह मर-सा गया। उठनेके साथ ही उसने गुस्सेके स्वरमे कहा—"घर बन्द करो।" मानो घर बन्द न होनेमे उसीका अपराध था। ड्योढ़ीके घडियालमे दो बजे।

मधुसूदनने घरसे निकलनेसे पहले फिर एक बार अपनी टेबिलकी दराज़ खोली। इधर-उधर करते-करते कुमुदके नामका तार जेबमे रखकर वह अन्त पुरकी ओर चल दिया। फिर तीसरे मंजिलेके जीनेके सामने जाकर कुछ देर तक खडा रहा।

गहरी रातको पहली नींदसे जागकर आदमी अपनी शक्तिको पूर्ण नहीं पाता। इसीसे उसके दिनके चरित्रके साथ रातके चरित्रमें इतना अन्तर है। रातको दो बजेके वक्त, जब कि चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ है, और अपने सिवा वह ससारमें और किसीके लिए जिम्मेदार ही नहीं है,—तब कुमुदके सामने मन-ही-मन हार मान लेना उसके लिए कोई असम्भव बात नहीं रही।

आश्चर्यसे आँखें खोलकर मधुसूदनके मुँहकी ओर यों ही देखती रह गई। मधुसूदनने तार सामने रखकर कहा—"तुम्हारे भइयाने भेजा है।" कहकर कोनेसे लालटेन उठा लाया।

कुमुदिनीने तार पढ़ा, उसमें अंगरेजीमें लिखा है—"मेरे लिए घबराना मत, धीरे-धीरे आराम हो रहा है, तुम्हें मेरा आशीर्वाद।" कठिन उद्वेगके इस महान् दुःखमें ऐसी सान्त्वनाकी बात पढ़कर उसकी आँखोंमें पानी भर आया। आँखें पोंछकर उसने तारको जतनके साथ आँचलमें बांध लिया। उससे मधुसूदनके हृदयमें मानो मोच आ गई। उसके बाद वह क्या कहे, उसकी कुछ समझमें नहीं आया। कुमुद ही बोल उठी—"भइयाकी क्या चिट्ठी नहीं आई?"

अब तो मधुसूदनसे किसी भी तरह नहीं कहा गया कि चिट्ठी आई है। चटसे कह दिया—"नहीं तो, चिट्ठी नहीं आई।"

इस कोठरीमें आधी रातके वक्त मधुसूदनके साथ बैठे रहनेमें कुमुदको संकोच मालूम हुआ। वह उठना ही चाहती थी, इतनेमें सहसा मधुसूदन बोल उठा—"बड़ी बहू, मुझपर गुस्सा मत होओ।"

यह तो प्रभुका उपरोध नहीं है, यह तो प्रणयीकी प्रार्थना है, और उसमें मानो अपराधीकी आत्म-ग्लानि भरी हुई है। कुमुद आश्चर्यमें आ गई, उसे मालूम हुआ कि यह दैवकी ही लीला है। क्योंकि उसने भी तो बार-बार कहा है, "तू गुस्सा मत हो।" वही बात आज आधी रातके समय अप्रत्याशित भावसे किसीने मधुसूदनसे कहलवा ली।

मधुसूदनने फिर उससे कहा—"तुम क्या अब भी मुझपर नाराज हो ?"

कुमुदने कहा—"नहीं तो, मैं नाराज नहीं हू, बिलकुल नहीं।"

मधुसूदन उसके मुँहकी तरफ़ देखकर आश्चर्यमे पड गया। मानो वह मन-ही-मन किसीसे बातें कर रही है, अनुदिष्ट किसीके साथ उसकी बातें हो रही हैं।

मधुसूदने कहा—"तो फिर चलो यहासे, अपने कमरेमें चलो।"

कुमुदिनी आज रातके लिए तैयार न थी। नींदसे जागकर सहसा मनको बांध लेना कठिन है। उसने संकल्प किया था कि कल सवेरे नहा-धोकर देवताके समक्ष अपने प्रतिदिनका प्रार्थना-मन्त्र पढकर, तब, कलसे वह घर-गिरस्तीमें अपनी साधना शुरू करेगी। तब उसने सोचा,—देवताने मुझे समय नहीं दिया, आज आधी रातमें ही बुलाया है। उनसे कैसे कहू कि नहीं। मनके अदर जो एक बडी-भारी अनिच्छा हो रही थी, उसे अपराध समझकर वह जोरसे उठ खडी हुई, बोली—"चलो।"

ऊपर जाकर अपने सोनेके कमरेके सामने पहुचते ही वह ठिठककर खडी हो गई, बोली—"मैं अभी आती हू, देर न करूँगी।"

कहकर वह छतके एक कोनेमें जाकर बैठ गई। कृष्णपक्षका खड चन्द्रमा उस समय मध्य-आकाशमें था।

कुमुदिनी अपने मनमें ही बार-बार कहने लगी—"प्रभु, तुमने बुलाया है मुझे, तुमने बुलाया है। मुझे भूले नहीं हो, इनीसे तुम्हारा

शरीरको बहुत देर तक अभिषिक्त किया। शरीरको निर्मल करके, सुगन्धित करके उसने उसे उन्हींको उत्सर्ग कर दिया,—मन-ही-मन एकाग्रताके साथ ध्यान करने लगी कि पल-पलमे उसके हाथमें उनका हाथ है, उसके शरीरमे उनका सर्वव्यापी स्पर्श अविराम विराजमान है। यह शरीर सत्य रूपसे, सम्पूर्ण रूपसे उन्हींको मिला है, उनके मिलनेके बाहर जो शरीर है वह तो मिथ्या है, वह तो माया है, वह तो मिट्टी है, देखते-देखते मिट्टीमें मिल जायगा। जब तक उनके स्पर्शका अनुभव करती हू, तब तक यह शरीर किसी भी तरह अपवित्र नहीं हो सकता। यह बात सोचते-सोचते आनन्दसे उसकी आँखोकी पलकें भीज गईं—उसके शरीरको मानो मुक्ति मिल गई मासके स्थूल बन्धनसे। पुण्य-सम्मिलनका नित्यक्षेत्र समझकर अपने शरीरपर मानो उसे भक्ति हो गई। यदि कुन्दपुष्पकी माला हाथोंके पास मिल जाती, तो अभी वह उसे अपने गलेमें पहन लेती, कबरी (जूडे) से बाँध लेती। स्नान करके उसने एक खूब चौडे लाल पाडकी सफेद साडी पहन ली। छतपर जाकर जब वह बैठी, तो उसे मालूम हुआ, मानो सूर्यके प्रकाशके रूपमे आकाशपूर्ण एक परम स्पर्शने उसने शरीरको अभिनन्दित किया।

मोतीकी माके पास आकर कुमुदने कहा—"मुझे तुम अपने काममें लगा दो।"

मोतीकी माने हँसकर कहा—"तो आ जाओ, तरकारी बनाओ।" बडे-बडे कठौते, बडी-बडी पीतलकी नाँदें, टोकनियोंपर टोकनी

शाक-सब्जी, दस-पन्द्रह बेंटदार हँसिये लेकर कुटुम्बकी आश्रित स्त्रियाँ गप्पें करती हुई जल्दी-जल्दी हाथ चलाकर तरकारी बनार रही हैं—चारों तरफ़ बनारी हुई तरकारियोंके ढेर लगे जा रहे हैं। उन्हींके बीचमें कुमुदिनी भी एक जगह बैठ गई। सामनेके झरोखेसे कुमुदकी दृष्टि पड़ोसमें खड़े हुए एक पुराने इमलीके पेड़पर पड़ी। उसकी चिरचञ्चल पत्तियोंमेंसे सूर्यकी किरणें चूर-चूर हो कर बिखर रही हैं।

मोतीकी मा बीच-बीचमें कुमुदके मुँहकी ओर देखती-जाती और सोचती जाती—"जीजी क्या काम कर रही हैं, या उनकी उँगलियोंकी गतिके सहारे उनका मन किसी एक तीर्थके रास्तेपर चला जा रहा है? उन्हें देखनेसे मालूम होता है, मानो वह पालदार नाव है, मस्तूलपर चढ़े हुए पालमें हवा आकर लग रही है, नाव मानो उस स्पर्शमें ही मग्न है, और उसके दोनों तरफ़ जो पानी आ-आकर लग रहा है, उसका उसे खयाल तक नहीं है। घरमें और-और औरतें जो काम कर रही हैं, वे चाहती हैं कि कुमुदसे बातचीत करें, लेकिन उन्हें कोई सहज रास्ता ही नहीं मिल रहा है। श्यामासुन्दरीने एक बार कहा—"बहू, सबेरे ही नहाती हो तो कह क्यों नहीं देतीं, सो पानी गरम हो जाया करे। ठंढ तो नहीं लगेगी?"

कुमुदने कहा—"मुझे आदत पड़ गई है।"

बातचीत आगे नहीं बढ़ी। कुमुदके मनके अन्दर उस समय एक नीरव जपकी धारा चल रही थी —

बाढ लानी चाहिए, जो रुद्धको मुक्त करके बद्धको बहा ले जाय। मनको भुला देनेका एक उपाय उसके हाथमें था, वह है सङ्गीत। परन्तु इस घरमे इसराज बजानेमे उसे शर्म मालूम होती है। साथमे इसराज लाई भी नहीं है। कुमुद गाना गा सकती है, किन्तु उसके गलेमे उतना जोर नहीं है। गानेकी धारासे आकाशको बहा देनेकी इच्छा हुई। अभिमानका गान, जिस गानमे वह कह सकती है—"मैं तो तुम्हारी ही पुकारसे आई हू, फिर तुम दुबक क्यों गये ? मैंने तो एक पलके लिए भी दुविधा नहीं की। फिर आज क्यों मुझे ऐसे सशयमें डाल दिया है ?" ये सब बातें वह खूब जोरसे गला खोलकर गानेमें कहना चाहती है, तभी उसे मानो उस स्वरमे उत्तर मिल जायगा।

[३४]

कुमुदिनीके भागनेकी सिर्फ एक ही जगह है, मकानकी छत। वहीं चली गई। दिन चढ गया है, कडी घामसे छत भर गई है, सिर्फ जीनेकी दीवारके पास एक जगह जरासी छाँह है। वहीं जाकर बैठ गई। उसे एक गीत याद आया, उसकी रागिनी है असावरी। उस गीतका प्रारम्भ है—"बाँसुरी हमारी रे"—किन्तु बाक़ीका हिस्सा उस्तादोंके मुँहज़बानी विकृत वाणी है—उसका अर्थ समझमें नहीं आता। कुमुदिनी उस असम्पूर्ण अंशको अपने मनसे इच्छानुसार नई-नई तानोमे उलट-पुलटकर गाने लगी। वहीं

जरासी बात अर्थोंसे भर उठी। वह वाक्य मानो कह रहा है—"अरी मेरी बाँसुरी, तू तानोंसे लबालब भर क्यों नहीं जाती? अंधेरेको पारकर पहुचती क्यों नहीं वहां, जहा दरवाज़ा बन्द है—जहा नींद नहीं छूटी है?"—"बाँसुरी हमारी रे, बाँसुरी हमारी रे।"

मोतीकी माने जब आकर कहा—"चलो बहन, खाने चलो"—तब वह जरासी छाया भी लुप्त हो गई थी, किन्तु कुमुदका मन तानसे भरपूर है, संसारमे किसने उसपर क्या अन्याय किया है, यह सब-कुछ उसके लिए तुच्छ हो गया है। उसकी चिट्ठीके बारेमे मधुसूदनकी जो क्षुद्रता थी, उससे उसके मनमे तीव्र अवज्ञा उद्यत हो उठी थी, वह मानो इस घामसे भरे हुए आकाशमें एक पतंगकी तरह न-जानें कहां विलीन हो गई, उसकी क्रोध-भरी गूँज असीम आकाशमें बिला गई। परन्तु चिट्ठीके अन्दर भइयाका जो स्नेह-वाक्य है, उसे पानेके लिए उसके मनका आग्रह तो दूर नहीं होता।

यह व्यग्रता उसके मनमें लगी ही रही। खानेके बाद उससे रहा न गया। मोतीकी मासे बोली—"मै जाती हू बाहरके कमरेमें, चिट्ठी पढ आऊँ।"

मोतीकी माने कहा—"और जरा ठहर जाओ, नौकर-चाकर छुट्टी लेकर जब खाने चले जायँ, तब जाना।"

कुमुदने कहा—"नहीं नहीं, वह तो बिलकुल चोरकी तरह जाना होगा। मैं सबके सामने होकर जाना चाहती हू, फिर जिसके जो मनमे आवे समझा करे।"

मोतीकी माने कहा—"तो चलो, मैं भी साथ चलती हूँ।"

कुमुद कहने लगी—"नहीं, सो हर्गिज़ नहीं होगा। तुम सिर्फ बता दो, किस तरफसे जाना होगा?"

मोतीकी माने अन्त.पुरके झरोखेदार बरामदे मे से कमरा दिखा दिया। कुमुद बाहरकी ओर चल दी। नौकर-चाकर चकित होकर उठ खडे हुए और उसे प्रणाम करने लगे। कुमुदने कमरेमे घुसकर डेस्ककी दराज खोलकर देखा, तो उसमे उसकी चिट्ठी निकली। हाथमें लेकर देखा, लिफाफा खुला हुआ है। छातीके भीतर उफान-सा आने लगा, बिलकुल असह्य हो उठा। जिस घरमे कुमुद पली है, वहा इस तरहके अपमानकी कल्पना तक नहीं की जा सकती थी। उसके आवेगकी इस तीव्र प्रबलता ही ने उसे धक्के दे-देकर सचेत कर दिया है। वह बोल उठी—"प्रिय प्रियायार्हसि देव सोढुम्"—फिर भी तूफान रुकता नहीं—इसीसे बार-बार कहने लगी। बाहर जो अरदली खडा था, बहू-रानीको आफिस-रूममें इस तरह अकेले मन-ही-मन मन्त्र पढते देख दंग रह गया। देर तक पढते-पढते कुमुदका मन शान्त हो गया। तब वह चिट्ठीको सामने रखकर हाथ जोडे चुपचाप चौकीपर बैठी रही। चिट्ठी वह चुराकर नहीं पढेगी, यही उसका प्रण है।

इतनेमें मधुसूदन आ पहुचा, चौंककर खडा हो गया,—कुमुदने उसकी तरफ़ आंख उठाकर देखा तक नहीं। उसने पास आकर देखा, डेस्कपर विप्रदासकी चिट्ठी पडी है। पूछा—"तुम यहां क्यों!"

कुमुदिनीने चुपचाप शान्त दृष्टिसे मधुसूदनके मुँहकी ओर देखा। उसकी चितवनमें शिकायतका भाव न था। मधुसूदनने फिर पूछा—"इस कमरेमे तुम क्यों आई ?"

इस व्यर्थ प्रश्नके उत्तरमे कुमुदने अधैर्यके स्वरमे ही कहा—"मेरे नामकी भइयाकी कोई चिट्ठी आई है या नहीं, देखने आई थी।"

मुझसे पूछा क्यों नहीं, इस प्रश्नका रास्ता तो कल रातको मधुसूदनने खुद ही बन्द कर दिया था। इसीसे बोला—"यह चिट्ठी मैं खुद ही तुम्हारे पास ले जा रहा था, इसके लिए तुम्हें यहा आनेकी तो कोई जरूरत न थी।"

कुमुद कुछ देर चुप बैठी रही, फिर मनको शान्त करके बोली—"तुम्हारी इच्छा नहीं है कि मैं इस चिट्ठीको पढ़ूँ, इसलिए मैं इसे न पढ़ूँगी। यह लो, मैंने फाड दी। लेकिन ऐसा कष्ट मुझे अब कभी न देना। इससे बढकर मेरे लिए और कोई दु ख हो ही नहीं सकता।"

यह कहकर वह मुँहपर आँचल ढककर दौडकर भीतर चली गई।

इससे पहले आज दोपहरको खानेके बाद मधुसूदनके मनमें उथल-पुथल हो रही थी। उस आन्दोलनको वह किसी तरह रोक न सका। कुमुदके खा चुकनेपर उसे वह बुलाना चाहता था। आज उसने सिरके बाल काढनेमे काफी ध्यान दिया है। आज सवेर ही उसने एक अगरेज नाईकी दुकानसे स्पिरिट-मिला

खुशबूदार तेल और कीमती एसेन्स मंगा लिया था। ज़िन्दगीमे ये चीजें उसने आज पहले-ही-पहल इस्तेमाल की है। सुगन्धित और सुसज्जित होकर वह तैयार बैठा था। आफिसका वक़्त आज पैंतालीस मिनट चूक गया था।

जीनेमे पैरोंकी आहट सुनकर मधुसूदन चौंककर बैठ गया। हाथके पास और कुछ न पाकर एक पुराना अखबार लेकर बैठ गया और उसके विज्ञापनोंको इस ढगसे देखने लगा, जैसे वह उसके दफ्तरके कामका ही अग हो। यहा तक कि जेबसे एक मोटी नीली पेन्सिल निकालकर उसपर दो-एक निशान भी लगा दिये।

इतनेमे कमरेमे प्रवेश किया श्यामासुन्दरीने। भौहें सिकोडकर मधुसूदनने उसकी तरफ़ देखा। श्यामा बोली—"तुम यहा बैठे हो, बहू तुम्हें ढूँढती फिरती है।"

"ढूँढती फिरती है। कहा?"

"अभी तो देखकर आई हू, बाहर तुम्हारे आफिस-वाले कमरेमे गई है। सो इसमे इतना तअज्जुब क्यो करते हो—उसने समझा है कि शायद तुम वहीं—"

झटपट मधुसूदन वहासे निकलकर चला गया। उसके बाद ही चिट्ठी-वाली घटना हुई।

पालदार नावकी, अचानक पाल फट जानेसे जो दशा होती है, मधुसूदनकी भी वही हालत हुई। उस वक्त देर करनेका ज़रा भी मौक़ा न था। दफ्तर चल दिया, परन्तु सब काममे

भीतर-ही-भीतर उसकी असम्पूर्ण टूटी-फूटी चिन्ताकी तीखी नोंक बार-बार मानो उचक-उचककर छिदने लगी। इस मानसिक भूकम्पके अंदर मन लगाकर काम करना उसके लिए असम्भव हो उठा। आफिसमें कह दिया कि सिरमें बड़े जोरका दर्द हो रहा है, और काम खत्म होनेके बहुत पहले ही घर लौट आया।

[३४]

इधर नवीन और मोतीकी मा समझ गई कि अबकी भींत टूटी, भागकर जान बचानेका ठिकाना कहीं न रहा। मोतीकी माने कहा—"यहा जैसे मेहनत-मजूरी करके पेट भरती हू, इस तरह मेहनत-मजूरी करके गुज़र करनेकी जगह ससारमें मुझे मिल जायगी। मुझे दु ख सिर्फ़ इसी बातका है कि मेरे चले जानेपर इस घरमें जीजीकी देख-भाल करनेवाला कोई न रहेगा।"

नवीनने कहा—'तो सुनो, मझली बहू, मेरी भी सुन लो, यहा मैं बहुत सह चुका हू, इस घरके अन्न-जलसे मुझे बिलकुल अरुचि हो गई है, लेकिन अबकी असह्य हो रहा है। भइयाने ऐसी बहू पाकर भी कदर नहीं जानी—रखना नहीं आना—सब बना-बनाया खेल बिगाड़ दिया। अच्छी चीजके फूटे टुकड़ोंसे ही दरिद्रता अपना घर बनाती है।"

मोतीकी मा बोली—"इस बातको समझनेमें अब तुम्हारे भाई साहबको देर न लगेगी, लेकिन तब फूटा हुआ जुड़ेगा नहीं।"

"नवीन, तुम्हे तो मै वचपनसे देख रहा हू, यह वुद्धि तुम्हारी नहीं है। मुझे मालूम है, तुम्हें वुद्धि कहांसे मिलती है। खैर, कुछ भी हो, आज तो वक्त निकल गया, कल सवेरेकी गाडीसे तुम लोग देश रवाना हो जाना।"

"जी हाँ"—कह कर नवीन विना कुछ कहे-सुने जल्दीसे चला गया।

इतने सक्षेपमे "जी हाँ" कहना मधुसूदनको विलकुल ही अच्छा न लगा। नवीनको रोना-विलखना चाहिए था, यद्यपि उससे मधुसूदनके सकल्पमे कोई फर्क न आता। नवीनको फिरसे वुलाकर कहा—"तनखा चुकती ले जाओ, लेकिन अबसे हम तुम लोगोंका खर्च न दे सकेंगे।"

नवीनने कहा—"मुझे मालूम है, देशमे जो मेरे हिस्सेकी जमीन है, उसमे खेती-वाडी करके मैं अपनी गुजर कर लूँगा।"

यह कहकर, और किसी वातकी प्रतीक्षा न करके वह चला गया।

मनुष्यकी प्रकृति अनेक विरुद्ध धातुओंको मिलाकर वनाई गई है, इस वातका एक प्रमाण यह है कि मधुसूदनका नवीनपर वडा गहरा स्नेह है। उसके और दो भाई रजवपुरमें जमीन-जायदादके काममें गई-गाँवमें पडे हुए हैं, मधुसूदन उनकी कभी कोई खोज-खवर नहीं लेता। पिताके मरनेके वाद मधुसूदनने नवीनको कलकत्ता लाकर पढाया-लिखाया है और उसे वरावर अपने पास रखा है। घरके काममें नवीनमें स्वाभाविक पटुता है। उसका कारण, यह है कि वह सश्य

आदमी है। दूसरे, बातचीतमे, व्यवहारमें वह सबका प्रिय है। घरमें जब कोई झगडा-टटा हो जाता, तो नवीन उसे बडी आसानीसे निबटा देता। नवीन सब बातोंमें हँसना जानता है, और अपने आदमियोंके प्रति सिर्फ न्याय ही नहीं करता, बल्कि ऐसा व्यवहार करता है कि जिससे हरएक आदमी यही समझता है कि नवीनका उसके प्रति विशेष पक्षपात है।

नवीनको मधुसूदन हृदयसे चाहता है, इस बातका एक प्रमाण यह भी है कि मोतीकी माको मधुसूदन देख नहीं सकता। जिसपर उसकी ममता है, उसपर उसका एकाधिपत्य होना चाहिए। इसी कारण मधुसूदन केवल कल्पना करता रहता है कि मोतीकी मा सिर्फ नवीनका मन फाडनेको है। छोटे भाईपर उसका जो पैत्रिक अधिकार है, बाहरकी एक लडकी आकर बार-बार उसमें बाधा डाला करती है, नवीनपर मधुसूदनका अगर ज्यादा प्रेम न होता, तो बहुत दिन पहले ही मोतीकी माके लिए निर्वासन-दण्ड पक्का हो जाता।

मधुसूदनने सोचा था कि इतना काम करनेके बाद फिर एक बार आफिस हो आयेगा, परन्तु किसी भी तरह उसके मनमे इतनी शक्ति न आई। कुमुद जो उस चिट्ठीको फाडकर चली गई, वह तसवीर उसके मनपर गहराईके साथ अंकित हो गई है। वह एक आश्चर्यका दृश्य था, इसकी तो उसने कभी कल्पना भी न की थी। एक बार उसने अपने हमेशाके सन्दिग्ध स्वभावके कारण समझ लिया था कि अवश्य ही कुमुदने चिट्ठी पहले ही पढ़ ली होगी, किन्तु कुमुदके मुँहपर

ऐसी एक निर्मल सत्यकी दीप्ति है कि ज्यादा देर तक उसपर अविश्वास करना मधुसूदनके लिए भी असम्भव है।

कुमुदिनीपर कडाईके साथ शासन करनेकी शक्ति मधुसूदनने देखते-देखते खो दी है, अब उसकी अपनी तरफ जो अपूर्णताएं हैं, वही उसे दुःख दे रही है। उसकी उमर ज्यादा है, इस बातको आज वह भूलना चाहता है, लेकिन भूलती नहीं। यहा तक कि उसके अब बाल पकने लगे हैं, उन्हें भी वह किसी तरह छिपाना चाहता है। उसका रंग काला है, विधाताका यह अन्याय इतने दिनों बाद उसे बेतरह खटक रहा है। कुमुदका मन बार-बार उसकी मुट्ठीमेसे निकल जाता है, उसका कारण है मधुसूदनमे रूप और यौवनका अभाव, इसमे उसे सदेह नहीं। यहीं वह निरस्त्र है, दुर्बल है। उसने चटर्जियोंके घरकी लडकी ब्याहनी चाही थी, परन्तु इस बातका उसे स्वप्नमे भी खयाल न था कि उसे वहासे ऐसी लडकी मिलेगी, जिसके सामने विधाताने पहले ही से उसकी हार तय कर दी है। साथ ही उसके मनमें इतना जोर भी नहीं कि कह दे कि उसके लिए एक मामूली-सी लडकी होती तो अच्छा होता, जिसपर उसका शासन चल सकता।

मधुसूदन सिर्फ एक विषयमें टक्कर ले सकता है,—अपने धनसे। आज सबेरे घरपर जौहरी आया था। उससे तीन अँगूठियाँ लेकर रख ली हैं, देखना चाहता है कि उनमेसे कौनसी कुमुदको पसन्द है। उन अँगूठियोकी डिबियोको जेबमे डालकर वह ऊपर सोनेके कमरेमें गया। एक चुन्नीकी है, एक पन्नेकी और एक हीरेकी। मधुसूदन कल्पना-योगसे मन-ही-मन एक दृश्य देखने लगा। मानो पहले

उसने चुन्नीकी अँगूठीकी डिबिया खूब आहिस्तेसे खोली, कुमुदकी लुब्ध दृष्टि उज्ज्वल हो उठी। उसके बाद निकाली पन्नेको, उससे आँखें और भी फट गईं। उसके बाद हीरेकी, उसकी बहुमूल्य उज्ज्वलतासे रमणीके आश्चर्यकी सीमा न रही। मधुसूदनने राजकीय गम्भीरताके साथ कहा—"तुम्हें जो पसन्द हो, छाट लो।" हीरेकी अँगूठी ही कुमुदने पसन्द की, तब उसके लुब्धताके क्षीण साहसको देखकर मधुसूदन मुसकराया, उसने तीनों अगूठी कुमुदकी तीन उँगलियोंमें पहना दीं, उसके बाद ही रातको शयन-मचकी यवनिका उठी।

मधुसूदनका अभिप्राय था कि यह बात आज रातको खाने-पीनेके बाद की जायगी, परन्तु दोपहरकी दुर्घटनाके कारण मधुसूदनसे फिर रहा न गया। रातकी भूमिका आज दोपहरको ही तय कर डालनेके लिए वह भीतर गया।

जाकर देखा तो, कुमुद एक टीनका ट्रङ्क खोलकर उसमें अपने कपडे-लत्ते, चीज-वस्त सम्हाल-सम्हालकर रख रही है। आस-पास चीज-वस्त, कपडे-लत्ते बिखर रहे हैं।

"एँ, यह क्या ? कहीं जा रही हो क्या ?"

"हाँ।"

"कहाँ ?"

"रजबपुर।"

"इसके मानी ?"

"तुमने अपने दराज खोलनेके कसूरपर देवरजीको सजा दी है। वह सजा असलमें मुझे मिलनी चाहिए।"

'मत जाओ' कहकर मनाने बैठ जाना, मधुसूदनके स्वभावके बिलकुल खिलाफ बात है। उसका मन पहलेसे ही बोल उठा—'जाने दो, देखें तो कितने दिन रहती है।' एक क्षण भी देर न करके दनदनाता हुआ चला गया।

[३६]

मधुसूदनने बाहरवाले कमरेमे जाकर नवीनको बुलवाया, और कहा—"बडी बहूको तुम लोगोंने भडका दिया है।"

"भाई साहब, कल तो हम लोग जा ही रहे हैं, अब तुम्हारे सामने डरसे हिचकते हुए बात न करूंगा। मैं साफ-साफ कहता हूं, बडी बहूरानीको भडकानेके लिए घरमे दूसरे किसीकी जरूरत न पडेगी—तुम अकेले ही बहुत हो। हम लोग रहते, तो शायद कुछ शान्त भी रख सकते, लेकिन तुमसे यह सहा न गया।"

मधुसूदनने गरजकर कहा—"बस, ज्यादा बुजुर्गी न छांट। रजबपुर जानेकी बात तुम्हीं लोगोंने उसे सुझाई है।"

"इस बातको सोच भी नहीं सकता—सिखाना तो दूर रहा।"

"देख, इसी बातपर अगर उसे नाच नचाया, तो तुम लोगोंके लिए अच्छा न होगा, साफ कहे देता हूं।"

"भाई साहब, ये बातें कह किससे रहे हो? जहां कहनेसे कुछ नतीजा निकले, वहां कहो।"

"तुम लोगोंने कुछ नहीं कहा?"

"कसम खाकर कहता हूं—कल्पना भी नहीं की।'

"बड़ी बहू अगर जिद कर बैठें, तो क्या करोगे तुम लोग ?"

"तुम्हें बुलाऊँगा। तुम्हारे पास हरकारे, बर्कन्दाज, पियादे हैं, तुम रोक सकते हो। फिर अगर तुम्हारे शत्रुपक्षके लोग इस युद्धका समाचार अखबारोंमें छपावें, तो मझली बहूपर सन्देह न कर बैठना।"

मधुसूदनने फिर उसे धमकाकर कहा—"चुप रह। बड़ी बहू अगर रजबपुर जाना चाहती है तो जाने दो, मैं नहीं रोकता।"

"हम लोग उन्हें खिलायेंगे कहांसे ?"

"अपनी बहूके गहने बेचकर। जा जा, जा यहांसे। निकल जा अभी घरसे।"

नवीन निकल गया। मधुसूदन ओ-डि-कलोनकी पट्टी माथेसे बांधकर फिर एक बार आफिस जानेके संकल्पको दृढ़ करने लगा।

नवीनके मुँह जब मोतीकी माने सब बातें सुनीं, तो वह दौड़ी गई कुमुदके कमरेमें। देखा, अभी तक वह कपड़े-लत्ते सम्हाल रही है। बोली—"यह क्या कर रही हो बहू-रानी ?"

"तुम लोगोंके साथ चलूँगी।"

"तुम्हें ले चलनेकी सामर्थ्य क्या हममें हो सकती है !"

"क्यों ?"

"जेठजी फिर तो हम लोगोंका मुँह भी न देखेंगे।"

"तो फिर मेरा भी न देखेंगे।"

"खैर, यहां तक तो माना, पर हम लोग तो बड़े गरीब हैं।"

"मैं भी कम गरीब नहीं हूं, मेरी भी गुज़र हो जायगी।"

"लोग फिर जेठजीकी हँसी उड़ायेंगे।"

"इसमे क्या, मेरे लिए तुम लोग सजा पाओगे, इसे मैं बरदाश्त नहीं कर सकती।"

"लेकिन जीजी, तुम्हारे लिए क्यों, यह तो हमारे अपने ही पापोंकी सजा है।"

"कौनसा पाप किया है तुम लोगोने?"

"हम ही लोगोंने तो खबर दी है तुम्हें।"

"मैं अगर खबर जानना चाहूं और तुम दो, तो वह भी अपराध है?

"मालिकसे बिना कहे देना अपराध है।"

"अच्छा, यही सही, अपराध तुम लोगोंने भी किया है, मैंने भी किया है। दोनों एक ही साथ फल भोगेंगे।"

"अच्छी बात है, तो कहलवा दू ,तुम्हारे लिए पालकी आ जायगी। जेठजीका तो हुक्म हो गया है कि तुम्हें रोका नहीं जायगा। लाओ, में तुम्हारी चीज-वस्त ठीकसे लगा दू। तुम तो पसीनेमे लदबद हो गई हो।"

दोनों चीज-वस्त सम्हालनेमे लग गई।

इतनेमें बाहर किसीके जूतेकी मच-मच आवाज सुनाई दी। मोतीकी मा भागकर चली गई।

मधुसूदनने कमरेमें घुसते ही कहा—"बडी बहू, तुम नहीं जा सकतीं।"

"क्यों नहीं जा सकती?"

"इसलिए कि मेरा हुक्म है।"

"अच्छा तो नहीं आऊँगी। उसके बाद क्या हुक्म है, बताओ।"

"बन्द करो अपना सामान पैक करना।"

"यह लो, बन्द कर दिया।"—कहकर कुमुद कमरेसे बाहर निकल गई। मधुसूदनने कहा—"सुनो, सुनो।"

उसी वक्त कुमुदने लौटकर कहा—"कहो, क्या कहते हो।"

विशेष कुछ कहनेको था नहीं। फिर भी कुछ सोचकर बोला—"तुम्हारे लिए अँगूठी लाया हूं।"

"मुझे जिस अँगूठीकी जरूरत थी, उसे तुमने पहननेके लिए मना कर दिया है, अब मुझे अँगूठीकी जरूरत नहीं।"

"एक दफे देख तो लो आँखोंसे।"

मधुसूदनने एक-एक डिब्बी खोलकर दिखलाई। कुमुदने अपने मुँहसे कुछ न कहा।

"इनमें से जौनसी तुम्हें पसन्द हो, पहन सकती हो।"

"तुम जिसके लिए हुक्म दोगे, पहन लूँगी।'

"मेरा तो खयाल है, तीनों तीन उगलियोंमें अच्छी मालूम होंगी।"

"हुक्म दो, तीनों पहन लूँगी।"

"मैं पहनाये देता हूं।"

"लो, पहना दो।"

मधुसूदनने पहना दी। कुमुदने कहा—"और कुछ हुक्म है?"

"बड़ी बहू, तुम गुस्सा क्यों होती हो?"

"मैं जरा भी गुस्सा नहीं होती"—कहकर कुमुद फिर बाहर चल दी।

मधुसूदन चंचल होकर कहने लगा—"अरे-अरे, जाती कहाँ हो? सुनो तो सही।"

कुमुद तुरत लौट आई, बोली—"कहो, क्या कहते हो?"

सोच न सका, क्या कहे। मधुसूदनका मुँह लाल हो उठा। अपनेको धिक्कार कर बोला—"अच्छा, जाओ।"

गुस्सेमे बोला—"लाओ, अँगूठियाँ फेर दो।"

कुमुदने तीनों अँगूठिया खोलकर तिपाईपर रख दीं।

मधुसूदनने कड़ककर कहा—"जाओ, चली जाओ।"

कुमुद उसी वक्त चली गई।

इस बार मधुसूदनने दृढ़ प्रतिज्ञा की कि वह आफिस जायगा ही। तब कामका वक्त क़रीब-क़रीब बीत चुका था। अगरेज़ कर्मचारी सब चले गये थे टेनिस खेलने। बड़े-बाबुओंका दल उठनेकी तैयारीमें ही था। इसी समय मधुसूदन पहुँचा और जातेके साथ ही डटकर काममें लग गया। छँ बज चुके, सात बज गये, आठ बजनेवाले है, अब वह रजिस्टर बन्द करके उठ खड़ा हुआ।

[३७]

अब तक मधुसूदनकी जीवन-यात्रामें कभी कोई सिलसिला नहीं टूटा था। प्रत्येक दिनका प्रत्येक क्षण निश्चित नियमसे बँधा हुआ था। आज सहसा, एक अनिश्चित चीज़ने आकर सब गड़बड़ कर दिया। यह जो आज आफिससे घरकी ओर जा रहा है,

आजकी रात ठीक किस ढगसे कटेगी, यह बिलकुल अनिश्चित है। मधुसूदन डरते-डरते घर आया। धीरे-धीरे भोजन किया। भोजन करके उसी समय साहस न हुआ कि सोनेके कमरेमें जाता। पहले कुछ देर तो बाहरके दक्षिणके बरामदेमें टहलता रहा। जब सोनेका वक्त हुआ—नौ बजे—तो भीतर गया। आज उसकी दृढ प्रतिज्ञा थी—ठीक समयपर पलगपर जाकर सोऊँगा, किसी भी तरह इसका व्यतिक्रम न होगा। सूने कमरेमे घुसकर मशहरी उठाकर एकदम बिस्तरपर जाकर पड रहा, पर नींद नहीं आई। ज्यों-ज्यों रात बीतने लगी, त्यों त्यो भीतरका उपवासी जीव अन्धकारमे धीरे-धीरे बाहर निकलने लगा। तब उसका पीछा करनेवाला कोई न था, पहरेदार सब थके-मांदे पडे थे।

घडीमें एक बजा, पर आँखोंमें जरा भी नींद नहीं। अब उससे न रहा गया, बिछौनेसे उठकर सोचने लगा—कुमुद कहां है? बकू फर्राशको कडा हुक्म था, फर्राशखानेमें ताला लगा हुआ था। छतपर घूम आया, वहा कोई न था। पगेसे जूते निकालकर नीचेके बरामदेसे धीरे-धीरे चलने लगा। जब मोतीकी माके घरके सामने पहुचा, तो उसके कानमे कुछ भनक-सी पडी। हो सकता है, कल जानेवाले हैं, सो आज पति-पत्नीमें सलाह हो रही हो। बाहर चुपचाप कान लगाये खडा रहा। दोनों जने गुनगुनाकर बातचीत कर रहे हैं। बात सुनाई नहीं पडती, पर इतना स्पष्ट मालूम हुआ कि दोनों औरतोंकी आवाज है। तब तो विच्छेदकी पूर्व-रात्रिमें मोतीकी माके साथ कुमुदकी ही मनकी बातें हो रही हैं।

क्रोधसे क्षोभसे इच्छा होने लगी कि लात मारकर दरवाजा खोलकर एक दुर्घटना कर दे। लेकिन फिर नवीन कहाँ गया? जरूर बाहर ही होगा।

अन्तःपुरसे बाहर जानेके लिए दोनो ओर झिलमिलीसे घिरा हुआ रास्ता है, उसमे एक बत्ती जल रही है। वहा आते ही मधुसूदनने देखा कि लाल दुशाला ओढे श्यामा खडी है। उसके सामने लज्जित होकर मधुसूदन गुस्सेमे भर गया। बोला—"क्या कर रही हो यहां—इतनी रातमें?"

श्यामाने कहा—"सो रही थी। बाहर पैरोंकी आहट सुनकर दहशत हो गई—शायद कोई—"

मधुसूदनने गरजकर कहा—"देखता हू, तुम बहुत सिरपर चढ गई हो। मेरे साथ चालाकी मत चलो, सावधान किये देता हू। जाओ, सोओ जाकर।"

श्यामासुन्दरी कई दिनसे जरा अपने साहसके क्षेत्रको कुछ कुछ बढाती जा रही थी। आज वह समझ गई कि असमयमें अस्थानपर पैर पडा है। अत्यन्त करुण मुँह बनाकर एक बार उसने मधुसूदनकी ओर देखा—उसके बाद मुँह फेरकर आँचलसे आँखें पोंछीं। चले जानेको उद्यत होकर फिर वह पीछेकी ओर मुँडकर खड़ी हो गई, बोली—"चालाकी न चलूँगी देवरजी। जो कुछ देख रही हु, उससे, आँखोंमें नींद नहीं आती। हम तो आजकी यहा नहीं हैं, कितने दिनोंका सम्बन्ध है, हम लोगोंसे सहा कैसे जाय?"—कहकर श्यामा जल्दीसे चली गई।

मधुसूदन कुछ देर खडा रहा, फिर चल दिया बाहरकी तरफ़। आगे चलकर चौकीदारसे उसका सामना हो गया,—उस वक्त वह गश्त लगा रहा था। कानूनका ऐसा कडा जाल फैला रखा है कि अपने घरमे वह चुपचाप घूम-फिर भी नहीं सकता। चारों तरफ़ सतर्क-दृष्टिका व्यूह है। राजा बहादुर आधी रातमें बिछौनेसे उठकर अँधेरेमे नगे पैर बाहरके दालानमे भूतकी तरह चले आये, यह बिलकुल ही अभूतपूर्व बात है। पहले तो दूरसे जब वह पहचान नहीं पाया, बोल उठा—"कौन है ?" फिर पास आकर देखा, तो राजा साहब। दाँतों तले जीभ दबाकर लम्बा सलाम करके बोला—"क्या हुक्म है हजूर ?"

मधुसूदनने कहा—"देखने आया हू, इन्तजाम ठीक है या नहीं।" कमसे कम मधुसूदनके लिए यह बात कोई असगत भी नहीं।

उसके बाद मधुसूदनने बैठकखानेमें जाकर देखा, तो वही बात, जो उसने सोची थी,—नवीन एक लम्बे तकियेसे लिपटकर गद्दीपर पडा सो रहा है।

मधुसूदनने कमरेकी गैस-बत्ती जला दी, उससे भी उसकी नींद न छूटी। फिर उसे हाथसे पकडकर हिलाया, तब वह भडभडाकर उठ बैठा। मधुसूदनने उससे बिना किसी तरहकी कैफ़ियत तलब किये ही कहा—"जा अभी, बडी-बहूको जाकर कह कि मैं उसेऊपर बुला रहा हू।" इतना कहकर वह उसी वक्त भीतर चला गया।

थोडी देरमे कुमुदिनीने सोनेके कमरेमे प्रवेश किया। मधुसूदनने उसके मुँहकी ओर देखा। मामूली एक लाल किनारेकी साडी

पहने थी। माथेपर साडीका पल्ला जरासा खिंचा हुआ था। इस निर्जन घरके मन्द प्रकाशमें यह कैसा सुन्दर आविर्भाव है। कुमुदिनी कमरेके एक तरफ़ सोफेपर बैठ गई।

मधुसूदन चटसे उसके पैरोंके पास आकर बैठ गया। कुमुदिनीके मारे सकोचके झटपट वहासे उठनेकी कोशिश करनेपर मधुसूदनने उसे हाथ पकडकर बिठा लिया, कहा—"उठो मत, सुनो, मेरी बात सुनो। मुझे माफ़ करो, मैंने कसूर किया है।"

मधुसूदनके ऐसे विनय भावको देखकर, जिसकी कोई आशा न थी, कुमुदिनी दंग रह गई। मधुसूदनने फिर कहा—"नवीनको—मँझली बहूको रजबपुर जानेकी मनाई कर दूगा। वे यहीं तुम्हारी सेवामे ही रहेंगे।"

कुमुद क्या कहे, कुछ सोच न सकी। मधुसूदनने सोचा—अपना मान खोकर मैं बडी बहूका मान भग करूंगा। हाथ पकडकर विनतीके साथ बोला—"मैं अभी आता हू,—बताओ, तुम चली तो न जाओगी?"

कुमुदने कहा—"नहीं, जाऊँगी नहीं।"

मधुसूदन नीचे चला गया। मधुसूदन अब क्षुद्र बनता है—कठोर बनता है, तो वह अवस्था कुमुदिनीके लिए इतनी कठिन नहीं होती। परन्तु आज उसकी यह नम्रता—उसका इस प्रकार अपनेको छोटा बनाना,—इस विषयमें कुमुदको क्या करना चाहिए, उसकी कुछ समझमें नहीं आता। हृदयके जिस दानको लेकर वह आई थी, वह तो स्खलित होकर गिर गया, अब तो उसे धूलसे उठाकर

काममें नहीं लगाया जा सकता। फिर वह अपने देवताको पुकारने लगी—"प्रिय प्रियायाहसि देव सोढुम्।"

इतनेमें, नवीन और मोतीको माको साथ लेकर मधुसूदन आ पहुचा, दोनोंको उसने कुमुदिनीके सामने पेश किया। उन्हें सम्बोधन करके कहा—"कल तुम लोगोको रजबपुर जानेके लिए कहा था, लेकिन अब जानेकी ज़रूरत नहीं। कलसे तुम लोगोंको बड़ी बहूकी सेवामें नियुक्त किया जाता है।"

सुनकर दोनों दग रह गये। पहले तो उन्हे ऐसे हुक्मकी कोई उम्मीद ही न थी, उसपर सिर्फ़ इसी बातके लिए इतना रातमें उन्हे खुद जाकर साथ लिवा लाना। इसमे ऐसी कौनसी जरूरी बात थी।

मधुसूदनका धैर्य रोके रुकता न था। वह आज ही रातको कुमुदका मन फेरनेके लिए उपाय प्रयोग करनेमे कृपणता या सकोच न कर सका। इस तरह अपने सम्मानकी हानि उसने जीवनमें कभी न की थी। वह जो कुछ चाहता था, उसे पानेके लिए उसने अपनी समझसे सबसे बडा दु साध्य मूल्य दे दिया। अपनी भाषामे उसने कुमुदको समझा दिया कि तुम्हारे सामने मैं बिना किसी सकोचके हार मानता हूँ।

अब कुमुदके मनमे बडा-भारी सकोच आया, वह सोचने लगी—इस चीजको वह किस तरह अपनावे। इसके बदले वह क्या दे सकती है? जब जीवनमें बाहरसे बाधा आती है, तब लड़नेको जोर मिलता है—तब स्वय देवता ही सहाय होते हैं। सहसा उस बाहरके विरोधके रुक जानपर युद्ध रुक जाता है,

परन्तु सन्धि नहीं होती। तब निकल पडती है अपने भीतरकी प्रतिकूलता। कुमुदिनी एकाएक ऐसा अनुभव करने लगी कि मधुसूदन जब उद्धत था, तो उसके साथ व्यवहार करना—अप्रिय होनेपर भी—उसके लिए सहज अवश्य था, परन्तु मधुसूदन जब नम्र बनता है, तो उसके साथ व्यवहार करना कुमुदके लिए बडा कठिन हो जाता है। फिर तो उसके क्षुब्ध अभिमानकी ओट नहीं रहती, उसका वह फरांशखानेका आश्रय उड जाता है, फिर देवताके सामने हाथ जोडनेका कोई अर्थ नहीं होता।

मोतीकी माको किसी बहानेसे कुमुद यदि रोक सकती, तो वह बच जाती। परन्तु नवीन चला गया, हतबुद्धि मोतीकी मा भी चुपचाप उसके पीछे-पीछे चल दी। दरवाजेके पास पहुचकर उसने एक बार मुँह तिरछा करके उद्विग्नतासे कुमुदिनीके मुँहकी ओर देखा, फिर चली गई। पतिकी प्रसन्नताके पजेसे इस युवतीको अब कौन बचावे?

मधुसूदनने कहा—"बडी बहू, कपडे बदलकर सोओगी नहीं अब?"

कुमुदिनीने धीरेसे उठकर, बगलके नहानेके घरमे घुसकर भीतरसे दरवाजा बन्द कर लिया—मुक्तिकी मियाद, जितना बन सके, बढा लेना चाहती है। उस घरमे दीवालके पास एक चौकी पडी थी, उसीपर बैठी रही। उसकी व्याकुल देह मानो अपने अन्दर अपने लिए ओट ढूँढने लगी। मधुसूदन बीच-बीचमे दीवालकी घडीकी ओर देखता और हिसाब लगाता जाता है कि कपडे बदलनेके लिए कितने

समयकी जरूरत है। इसी बीचमे आईनेमे उसने अपना मुँह देखा, सिरके बीचमे जिस जगह कडे बाल बुरी तरह खडे रहते हैं, व्यर्थ उसपर कई बार ब्रुश फेरा, और कपडोपर बहुतसा लवेंडर उँडेल लिया।

पन्द्रह मिनट हो गये, कपडे बदलनेके लिए इतना वक्त काफ़ी है। मधुसूदन चुपके-से दरवाजेके पास जाकर कान लगाकर खडा हो गया, भीतर हिलने-डुलनेका कोई शब्द न था,—मनमे सोचा, शायद बालोकी शोभा बढा रही होगी, उसीमे मशगूल है। औरतोको शृंगार बहुत प्रिय होता है, यह बात मधुसूदन भी जानता था, इसलिए उसे सब्र करना पडा। आध घटा हो गया—मधुसूदनने फिर एक बार दरवाजेसे कान लगाया, अब भी कोई शब्द नहीं। आकर बेंतकी कुर्सीपर बैठ गया। पलगके सामने विलायती तसवीर लटक रही थी, बैठा हुआ उसकी ओर देखता रहा। थोडी देर बाद एकाएक भडभडाकर उठ खडा हुआ, और बन्द दरवाजेके पास जाकर बोला—"बडी बहू, अभी निबटी नहीं ?"

थोडी ही देरमे धीरेसे दरवाजा खुल गया। कुमुदिनी निकल आई, मानो उसपर स्वप्न सवार हो गया है। जो कपड पहने थी, वही हैं, यह तो रातकी सोनेकी पोशाक नहीं है। बदनपर पूरी बाँहकी खाकी रगकी सर्जकी फतूही है, उसपर लाल किनारीका एक दुशाला है, जिसका पल्ला माथे तक खिचा हुआ है। दरवाजेके एक पल्लेपर बाँया हाथ टेककर न जाने किस दुविधामें खडी रह गई—एक विचित्र तसवीर-सी। गोल-मटोल गोरे हाथोंमें मगर-मुँहकी घुडीदार

सोनेके चिकने कड़े हैं पुराने ढगके—शायद किसी जमानेमें उसकी माके थे। इन मोटे भारी कडोंने उसके सुकुमार हाथोंको जो ऐश्वर्यका सम्मान दिया है, वह उसके लिए इतना स्वाभाविक है कि वह अलंकार उसके शरीरमें ज़रा भी आडम्बरका सुर नहीं अलापता। मधुसूदनने मानो फिरसे उसे नये रूपमें देखा। उसकी महिमासे फिर वह विस्मित हो गया। मधुसूदनसे इस बातका गुमान किये बिना रहा न गया कि उस विराजित संपूर्ण सपदाने इतने दिनों बाद शोभा पाई है। मधुसूदनकी ऐसी आदत है कि जिन लोगोंसे उसकी हमेशाकी मेल-मुलाक़ात है, क़रीब-क़रीब उन सबोंसे वह अपनेको धन-गौरवमें बहुत बड़ा मानता है। आज गैसकी रोशनीमे दरवाजेके पास जो युवती चुपचाप खड़ी हुई है, उसे देखकर मधुसूदनको ऐसा मालूम होने लगा—मेरे पास काफी धन नहीं है, मालूम होने लगा—यदि मैं राज-चक्रवर्ती सम्राट् होता, तभी वह इस घरमें शोभा पाती। मानो वह प्रत्यक्ष देखने लगा कि इसका स्वभाव जन्मसे ही किसी विशुद्ध वंश-मर्यादाके भीतर पला-पनपा है—अर्थात् मानो यह अपने जन्मके पूर्ववर्ती बहुत दीर्घ समयपर अधिकार किए हुए खड़ी है। वहा बाहरसे कोई ऐसा-वैसा आदमी प्रवेश कर ही नहीं सकता—वहींपर अपना स्वाभाविक सत्त्व लिए विराजेंगे विप्रदास,—उन्हें भी कुमुदकी तरह ही एक आत्म-विस्मृत सहज गौरव सर्वदा घेरे हुए है।

मधुसूदनसे यही बात किसी तरह सही नहीं जाती। विप्रदासके अंदर औद्धत्य तनिक भी नहीं है, है सिर्फ़ एक दूरत्व। अत्यन्त

बड़ा आत्मीय या निकट-सम्बन्धी भी एकाएक आ कर उसकी पीठ ठोंककर यह कह सके कि "कहो जी, क्या हो रहा है ?"—यह बात मानो असम्भव-सी है। उसकी चिढ़ तो सिर्फ़ इसी बातपर है कि विप्रदासके सामने उसे मन-ही-मन छोटा बन जाना पड़ता है। उस एक ही सूक्ष्म कारणसे कुमुदपर उसका पूरा ज़ोर नहीं चलता—अपनी घर-गिरस्तीमें जहां उसे सबसे ज़्यादा कर्तृत्व करनेका अधिकार है, मानो वहींसे वह सबसे ज़्यादा हट गया है, परन्तु यहां उसे गुस्सा नहीं आता—कुमुदके प्रति उसका आकर्षण दुर्निवार वेगसे प्रबल हो उठता है। आज कुमुदको देखकर मधुसूदनने स्पष्ट समझ लिया कि वह तैयार होकर नहीं आई है—किसी अदृश्य ओटके पीछे खड़ी है। किन्तु कैसी सुन्दर है। कैसी दीप्यमान शुचिता है—शुभ्रता है। मानो निर्जन तुषार-शिखरपर निर्मल उषा दिखाई दे रही हो।

मधुसूदनने ज़रा पास आकर धीर-स्वरसे कहा—"सोओगी नहीं बड़ी-बहू ?"

कुमुद आश्चर्यमें आ गई। उसने निश्चित समझा था कि मधुसूदन गुस्सा होगा—उसे अपमानकी बात कहेगा। सहसा एक चिर-परिचित स्वरकी उसे याद उठ आई—उसके बापूजी स्निग्ध स्वरसे किस तरह उसकी माको बड़ी-बहू कहकर बुलाते थे। साथ-साथ माकी भी याद आ गई—मा उसके बापूजीको पास आनेमें बाधा देकर किस तरह चली गई थी। पल-भरमें उसकी आँखें डबडबा आईं—ज़मीनपर मधुसूदनके पैरोंके पास बैठ गई, बोली—"क्षमा करो मुझे।"

मधुसूदनने जल्दीसे उसे हाथ पकड़कर चौकीपर बिठाकर कहा—"क्या कसूर किया है तुमने, जो क्षमा करूँ ?"

कुमुदने कहा—"अभी तक मेरा मन तैयार नहीं हुआ है। मुझे जरा समय दो।"

मधुसूदनका मन कठोर हो उठा, बोला—"किस लिए समय देना होगा, ज़रा समझा तो दो।"

"ठीक कहते नहीं बनता, किसीको समझाना कठिन है—"

मधुसूदनके कंठमें अब रस न रहा। उसने कहा—"कुछ भी कठिन नहीं है। तुम कहना चाहती हो कि मैं तुम्हें अच्छा नहीं लगता।"

कुमुदके लिए बड़ी मुश्किल हुई। बात सच है भी, और नहीं भी। हृदय भरके नैवेद्य चढ़ानेके लिए वह प्रण किये बैठी है, परन्तु नैवेद्य अभी तक आया नहीं है। मन कह रहा है—जरा सब्र करनेसे ही, मार्गमें बाधा न देनेसे आ जायगा, देर हो, सो भी नहीं। फिर भी यह बात माननी ही पड़ेगी कि थाल अभी रीता है।

कुमुदने कहा—"तुम्हें धोखा देना नहीं चाहती, इसीलिए तो कहती हूँ कि जरा समय दो।"

मधुसूदन क्रमशः असहिष्णु होने लगा—कड़ाईके साथ ही बोला—"समय देनेसे फायदा। अपने भाईके साथ सलाह करके फिर पतिके साथ रहनेकी मन्शा है।"

मधुसूदनकी यही धारणा है। उसने सोच रखा है—विप्रदासकी प्रतीक्षामें ही कुमुदका सब-कुछ रुका हुआ है। भइया जैसे चलावेंगे,

बहन वैसे ही चलेगी। उसने व्यग्यमे कहा—"तुम्हारे भइया तुम्हारे गुरु हैं।"

कुमुदिनी चटसे उठ खडी हुई, बोली—"हां, भइया मेरे गुरु हैं।"

"बिना उनके हुक्मके आज कपडे न बदलोगी, बिस्तरपर न सोओगी क्यों। ऐसी बात? मुझे क्या मालूम था।"

कुमुदिनी हाथकी मुट्ठी कडी करके पत्थरकी तरह खडी रही।

"तो तार देकर हुक्म मगाऊ,—रात बहुत हो गई है।" कुमुदने कुछ जवाब न दिया, छतपर जानेके लिए वह दरवाजेकी ओर बढी।

मधुसूदनने कडककर धमकीके साथ कहा—"जाना मत, कहे देता हू।"

कुमुद उसी वक्त घूमकर खडी हो गई, बोली—"क्या चाहते हो, कहो भी।"

"अभी तुरत कपडे बदलकर आओ।" घडी निकालकर बोला—"पाँच मिनट समय दिया जाता है।"

कुमुद उसी वक्त बगलके गुसलखानेमे चली गई और कपडे उतारकर साडीके ऊपर एक मोटी चादर ओढ आई। अब वह दूसरे हुक्मकी प्रतीक्षामे आ खडी हुई। मधुसूदन देखकर खूब समझ गया कि यह भी युद्ध-वश है। गुस्सा बढ गया, पर करे क्या, कुछ समझमे नहीं आती। प्रबल क्रोधमे भी मधुसूदनकी व्यवस्था-बुद्धि काम देती है, इसीसे वह बढते-बढते झट रुक गया।

बोला—"अब तुम करना क्या चाहती हो, मुझसे कहो तो।"

"जो तुम कहोगे, सो करूंगी।"

मधुसूदन हताश हो कर बैठ गया चौकीपर। चादर ओढे इस युवतीको देखकर मालूम होने लगा—जैसे यह विधवाकी मूर्ति हो,—इसके और उसके पतिके बीचमे मानो एक निस्तब्ध मृत्युका समुद्र पडा है। डॉट-फटकारसे यह समुद्र पार नहीं किया जा सकता। पालमे कौन-सी हवा लगानेसे नाव चलती है ?—क्या किसी दिन वह चलेगी ?

चुपचाप बैठा रहा। घडीके टिक-टिक शब्दके सिवा घरमे और कोई शब्द सुनाई नहीं देता। कुमुदिनी कमरेसे बाहर नहीं गई—फिर लौट आई, और बाहर छतके अन्धकारकी ओर टकटकी बाँधे तसवीरकी तरह खडी रही। बाहर चौराहेपर नशेमें चूर किसी शराबीके गद्गद कठके गानेकी आवाज सुनाई दे रही है, और पडोसीके अस्तबलमे एक पिल्ला बँधा हुआ है, उसका अश्रान्त आर्तनाद रात्रिकी शान्तिमें खलल डाल रहा है।

समय मानो एक अथाह गड्ढेकी तरह शून्य हो कर मुह बाये पडा है। मधुसूदनकी घर-गिरस्तीकी मशीनके सारे पहिए ही मानो बन्द हैं। कल आफिसमे उसे बहुत काम है, डाइरेक्टरोंकी मीटिंग है,—कई एक कठिन प्रस्ताव, बहुतोंका विरोध होते हुए भी, कौशलसे पास करा लेने हैं। वे तमाम जरूरी काम आज उसकी निगाहमे बिलकुल छाया-से प्रतीत

हो रहे हैं। पहले वह एक दिन पहले ही से रातको बैठकर कलकी कार्य-प्रणाली अपनी नोट-बुकमें लिख लिया करता था। आज उसकी सब चिन्ताएँ दूर हट गईं, संसारमें उसके लिए जो कठिन सत्य सुनिश्चित है, वह है चादरसे ढकी हुई वह युवती, जो कमरेसे निकलनेके रास्तेमें स्तब्ध खडी है। थोडी देर बाद मधुसूदनने एक गहरी उसास छोडी, कमरा मानो ध्यान भंग कर चौंक पडा। जल्दीसे चौकीपर से उठकर कुमुदके पास आकर बोला—"बडी बहू, तुम्हारा हृदय क्या पत्थरसे बना है?"

यह 'बडी बहू' शब्द कुमुदके मनमें मन्त्रकी तरह काम कर जाता है। अपनेमें अपनी मा के जीवनकी अनुवृत्ति सहसा उज्ज्वल हो उठती है। इस सम्बोधनपर उसकी माने कितने ही दिन कितनी ही बार उत्तर दिया था, उसका अभ्यास मानो कुमुदके भी खूनमें है। इसीसे चटसे वह मुह फेरकर खडी हो गई। मधुसूदनने बडे दुःखके साथ कहा—"मैं तुम्हारे अयोग्य हू, लेकिन मुझपर क्या दया न करोगी?"

कुमुदिनी सिटपिटा-सी गई, बोली—"छि छि, ऐसा मत कहो।" जमीनपर पडकर मधुसूदनके पैरोंकी धूल माथेसे लगाकर बोली—"मैं तुम्हारी दासी हू, मुझे तुम आदेश दो।'

मधुसूदनने उसका हाथ पकडकर उसे उठाकर छातीसे लगा लिया, बोला—"नहीं, तुम्हें आदेश न दूंगा, तुम अपनी इच्छासे मेरे पास आओ।"

कुमुदिनी मधुसूदनके बाहु-बन्धनमें हाँपने लगी, किन्तु स्वयं

उसने अपनेको छुडानेकी चेष्टा न की। मधुसूदनने रुँधे हुए कंठसे कहा—"नहीं, तुम्हें आदेश न दूँगा, फिर भी तुम मेरे पास आओ।" यह कहकर कुमुदिनीको उसने छोड दिया।

कुमुदिनीके गोरे मुहपर सुर्खी आ गई। उसने नीची निगाह करके कहा—"तुम आदेश दो तो मेरा कर्तव्य सरल हो जाय। मुझसे अपने-आप कुछ करते नहीं बनता।"

"अच्छा, तुम अपनी यह चादर उतार दो—यह मुझे सुहाती नहीं।"

सकोचके साथ कुमुदिनीने चादर उतार दी। बदनपर एक डोरियाकी साडी रह गई—पतली किनारीकी। उसकी काली धारियाँ कुमुदिनीके शरीरको घेरे हुए हैं, जैसे रेखाओंके झरने हो—रुके हुए-से नहीं जान पडते, मानो लगातार झर रहे हों—मानो कोई एक काली दृष्टि अपनी अभ्रान्त गतिके चिह्न छोड़-छोड़कर उसके अंगको घेर-घेरकर उसकी प्रदक्षिणा कर रही हो, किसी तरह पूरी नहीं कर पाती। मुग्ध हो गया मधुसूदन, मगर फिर भी उसका ध्यान क्षण-भरके लिए उस साडीपर चला गया,—वह यहाकी दी हुई न थी। कुमुदिनीके बदनपर वह कितनी ही क्यों न खिलती हो, पर उसकी कीमत कुछ नहीं,—है तो उसके मायकेकी ही। उस नहानेके घरसे सटे हुए कपडे बदलनेके कमरेमें दराज़ोंवाली महोगनीकी जो बडी आलमारी है, जिसके आईनेदार पल्ले हैं, वह ब्याहके पहले ही तरह-तरहके क़ीमती कपडोंसे ठँसी पडी है। उनपर ज़रा भी लोभ नहीं, इस स्त्रीका इतना गर्व। याद उठ आई उन

तीन अगूठियोंकी बात, असह्य उपेक्षासे कुमुदने उन्हे लिया नहीं था, और एक कमबख्त नीलमकी अगूठीके लिए कितना आग्रह।

विप्रदास और मधुसूदनके बीच कुमुदकी ममताका कितना मूल्य-भेद है। चादर उतारते ही इन सब बातोंने आंधीके झपट्टेकी तरह मधुसूदनको बड़ा-भारी धक्का दिया। किन्तु हाय। कैसी गजबकी सुन्दर है। और यह दर्प-भरी अवज्ञा, वह भी तो मानो उसका अलकार है। यह युवती ही तो कर सकती है अवज्ञा ऐश्वर्यकी। स्वाभाविक सम्पदासे महीयसी होकर उत्पन्न हुई है, उसे धनकी कीमत नहीं जोड़नी पड़ती, हिसाब नहीं रखना पड़ता—मधुसूदन उसे किस चीजका लालच दिखा सकता है।

मधुसूदनने कहा—"चलो, तुम सोने चलो।"

कुमुदिनी पतिके मुँहकी तरफ देखती रही—नीरव प्रश्न यह था कि 'पहले तुम पलगपर न जाओगे?'

मधुसूदनने दृढ स्वरसे कहा—"चलो, अब देर मत करो।"

कुमुद जब पलगपर पहुच गई, तो मधुसूदन सोफेपर बैठ गया, बोला—"यहीं बैठा हू, मुझे बुलाओगी तभी आऊँगा। वर्षों इसी तरह इन्तजार करनेको राजी हू।"

कुमुदिनीका सारा बदन सिहर उठा—आज यह कैसी परीक्षा है उसकी। किसके दरवाजेपर आज वह सिर धुने? देवताने तो उसे आज उत्तर नहीं दिया। जिस मार्गसे वह यहां आई है, वह तो बिलकुल गलत रास्ता है। बिछौनेपर बैठी हुई मन-ही-मन वह कहने लगी—"भगवान, तुम मुझे कभी भुला नहीं

अब भी तुमपर मैं विश्वास करूँगी। ध्रुवको तुम्हीं वनमे ले गये थे—वनमे उसे दर्शन देनेके लिए।"

कमरेके अन्दर अब सन्नाटा-सा छा गया है, चौराहेपर अब उस शराबीकी आवाज़ नहीं सुनाई देती, सिर्फ कैदी पिल्ला, यद्यपि थक गया है, फिर भी बीच-बीचमें आर्तनाद कर उठता है।

थोडा समय भी बहुत समय-सा मालूम हुआ, स्तब्धताके भारग्रस्त प्रहरसे मानो हिला-डुला नहीं जाता। यही क्या उसके दाम्पत्यकी अनन्त कालकी तसवीर है। दो तटोंपर दोनो चुपचाप बैठे हुए हैं—रात्रिका अन्त नहीं—बीचमे एक अलघनीय निस्तब्धता है। अन्तमे, न जाने कब, कुमुदने अपनी सम्पूर्ण शक्तिको इकट्ठा करके, पलँगसे उतरकर कहा—"मुझे अपराधिनी न बनाओ।"

मधुसूदनने गम्भीर स्वरमे कहा—"क्या चाहती हो, बताओ, क्या करना होगा?" आखिरी लफ्ज तक, बिलकुल निचोडकर, उसके मुँहसे निकलवा लेना चाहता है।

कुमुदने कहा—"चलो, सोओ।"

परन्तु क्या इसीका नाम जीत है?

[३८]

दूसरे दिन सवेरे मोतीकी मा जब कुमुदके लिए कटोरेमे दूध लाई, तो उसने देखा कि कुमुदकी आखें लाल हो रही हैं—सूज गई हैं, चेहरेका रग फक पड गया है। उसने सोचा था कि सवेरे छतपर

जिस कोनेमे आसन बिछाकर कुमुद पूरबकी तरफ़ मुँह करके मानसिक पूजा करने बैठती है, वहींपर वह मिलेगी। परन्तु आज वह वहां नहीं थी, ज़ीनेके बगलसे ही जो जरासी छई हुई छत है, वहींपर दीवालके सहारे थकी हुई-सी बिना कुछ बिछाये यो ही बैठी है। शायद आज देवतासे गुस्सा हो गई है। निर्दोष लडकेको निष्ठुर बाप जब बिना कारण मारता है, तब जैसे उसकी समझमे कुछ नहीं आता—रूठकर मारको झेलता रहता है, प्रतिवाद करते भी हिचकिचाता है—देवतापर कुमुदका आज वैसा ही भाव है। जिस आह्वानको उसने दैव माना था, वह इस अशुचितामें है?—इस आन्तरिक असतीत्वमे? भगवान क्या नारी-बलि चाहते हैं, इसीलिए शिकारको बहका लाये हैं?—जिस शरीरमें मन नहीं है, उस मासपिंडको अपना नैवेद्य बनायेंगे? आज किसी भी तरह भक्ति नहीं जगी। इतने दिनोसे कुमुद बार-बार कहती रही है कि मुझे तुम सहन कर लो—आज उस विद्रोहिनीका मन कह रहा है कि में तुम्हें कैसे सह सकती हू? किस मुँहसे तुम्हारी पूजा करू? तुमने अपने भक्तको स्वय ग्रहण न करके उसे किस दासीकी हाटमें बेच दिया—जिस हाटमें मास-मच्छीके भावसे लडकियाँ बिकती हैं, जहा निर्माल्य लेनेके लिए कोई श्रद्धाके साथ पूजाकी प्रतीक्षा नहीं करता—फूलोंका उपवन काटकर बकरेको खिला दिया जाता है।

मोतीकी मान जब दूध पीनेके लिए अनुरोध किया, तो कुमुदने कहा—"रहने दो।"

मोतीकी माने दूधका कटोरा फिर एक बार कुमुदके आगे बढ़ाकर कहा—"जीजी, दूध ठंढा हुआ जा रहा है, पी डालो मेरी रानी जीजी।"

अबकी बार कुमुदने दूध पीनेमे आपत्ति नहीं की।

मोतीकी माने कानमे पूछा—"कोठारको चलोगी आज?"

कुमुदने कहा—"आज रहने दो,—गोपालको एक बार मेरे पास भेज दो।"

एक काला कठोर भूखा बुढापा बाहरसे कुमुदको निगल रहा है—राहुकी तरह। जो प्रौढ अवस्था शान्त, स्निग्ध, शुभ्र, सुगम्भीर होती है, यह तो वह नहीं है, जो लालायित है, जिसके सयमकी शक्ति शिथिल है, जिसका प्रेम ही विपयासक्तिकी जातिका है, उसीके स्नेहाक्त स्पर्शसे कुमुदको इतनी अरुचि है। पतिकी उमर ज्यादा है, इसका कुमुदको कोई दुःख नहीं, किन्तु उसे तो इस बातका खेद है कि उस उमरने अपनी मर्यादा क्यो भुला दी। सम्पूर्ण आत्म-निवेदन एक फलके समान है, प्रकाश और हवामें—मुक्त अवस्थामे—वह पकता है, कच्चे फलको चक्कीमे पीसनेसे ही तो वह पकता नहीं। समय न मिलनेके कारण ही आज उनका सम्बन्ध कुमुदको इस तरह सता रहा है—इतना अपमान कर रहा है। कहां भागे। मोतीकी मासे जो अभी कहा कि गोपालको बुला दो, सो भागनेका रास्ता ढूंढना ही तो है—वृद्ध अशुचिताके पाससे भागकर नवीन निर्मलताके पास जानेका—दूपित निश्वासकी भापसे

निकलकर कुसुम-काननकी पवनमे जानेका। पतली छींटका एक रूईदार कोट पहने हाबलू ज़ीनेके दरवाजेके पास आकर डरता-डरता खड़ा हो गया। माके समान ही उसकी बड़ी-बड़ी काली आँखें हैं, वैसा ही पानी-भरे बादलका-सा सरस साँवला रग है, गाल दोनो फूले-फूलेसे और सिरके बाल बारीक छँटे हुए।

कुमुद जाकर सकुचित हाबलूको पकड़ लाई, और उसे छातीसे लगा लिया, बोली—"पाजी लड़के, दो दिनसे तुम आये क्यो नहीं ?"

हाबलूने कुमुदके गलेमें बाह डालकर कानमें कहा—"ताईजी, तुम्हारे लिए मैं क्या लाया हू—बताओ तो ?"

कुमुदने उसके गालकी मिट्टी लेकर कहा—"मानिक लाये हो, गोपाल।"

"मेरी जेबमें है।"

"अच्छा, निकालो तो।"

"तुम बता नहीं सकीं।"

"मेरे बुद्धि नहीं है,—जो आँखोंसे देखती हू, उसे भी नहीं समझ पाती, जो दिखाई नहीं देता, उसे तो और भी उल्टा समझ जाती हू।"

तब हाबलूने बड़ी सावधानीसे आहिस्ता-आहिस्ता जेब में से ब्राउन कागजका एक ठोंगा निकाला, और उसे कुमुदकी गोदमे रखकर भाग जानेकी कोशिश करने लगा।

"नहीं, तुम भाग नहीं सकते।"

कुमुदके कमरमें एक रेशमी रूमाल खुसा हुआ था, उसमें फूल बांधकर, बच्चेका चूमा लेकर, कुमुदने कहा—"ये लो।" मन-ही-मन बोली—'चलो, मेरा भी पूजा-पूजा खेल हो गया।' बच्चेसे बोली—"गोपाल, इनमेंसे कौनसा फूल तुम्हें सबसे ज़्यादा अच्छा लगता है—बताओ तो?"

हाबलूने कहा—"जवा-फूल।"

"क्यों जवा अच्छा लगता है, बताऊँ?"

"अच्छा, बताओ।"

"वह सवेरा होनेसे पहले ही जटाई-बूढ़ीकी इंगुरकी डिबियामें से रंग चुरा लाता है।"

हाबलू कुछ देर तक गम्भीर होकर बैठा सोचता रहा। एकाएक बोल उठा—"ताईजी, जवा-फूलका रंग ठीक तुम्हारी साड़ीकी इस लाल पाड़के समान है।" बस, इतने ही मे वह अपने मनकी सब बात कह चुका।

इतनेमें सहसा पीछे फिरकर देखा तो मधुसूदन। पैरोंकी आहट तक न सुनाई दी थी, और उसका अन्तःपुरमे आनेका यह समय भी नहीं है। इस समय बाहरके आफिस-रूममे व्यापार-सम्बन्धी कार्यके लिए दुनिया-भरके उच्छिष्ट-परिशिष्ट आकर इकट्ठे होते हैं—इस समय दलाल आते हैं, उम्मेदवार आते हैं, अनेक फुटकर,

[३९]

जिस भिखारीकी झोलीमें सिर्फ भूसी-ही-भूसी जम गई है—अनाज नहीं जुटा, उसका-सा मन लिये आज सवेरे मधुसूदन बहुत ही रूखे-भावसे बाहर चला गया था। परन्तु अतृप्तिका आकर्षण बड़ा प्रचंड होता है। बाधापर बाधा चली ही आती है।

मधुसूदनको देखते ही हावलूका चेहरा सूख गया, हृदय काँप उठा, भागनेको तैयार हो गया। कुमुदने उसे जोरसे दाब लिया, उठने न दिया।

मधुसूदन यह ताड़ गया। हावलूको जोरसे धमकाकर कहा—"यहा क्या कर रहा है? पढ़ने नहीं जायगा?"

पंडितजीके आनेका समय नहीं हुआ, यह बात कहनेकी हावलूमे हिम्मत न थी—धमकीको उसने चुपचाप सह लिया और धीरेसे उठकर चल दिया।

कुमुद उसे रोकनेके लिए तैयार हुई, पर तुरत ही रुक गई। बोली—"अपने फूल तो तुम छोड़ ही चले, लोगे नहीं?" यह कहकर रूमालमें बँधी हुई पोटली उसके सामने बढ़ा दी। हावलूने उसे लिया नहीं—डरता हुआ वह अपने ताऊजीके मुहकी ओर ताकता रहा।

मधुसूदनने झटसे कुमुदके हाथसे पोटली छीन ली, बोला—"यह रूमाल किसका है?"

पल-भरमें कुमुदका चेहरा लाल हो उठा बोली—"मेरा।"

इसमे सन्देह नहीं कि रूमाल पूर्ण रूपसे उसीका है—अर्थात् उसके विवाहके पहलेकी सम्पत्ति है, उसपर जो रेशमकी कामदार पाड है, वह भी कुमुदकी अपनी रचना है।

मधुसूदनने फूल निकालकर जमीनपर डाल दिये और रूमाल अपनी जेबमे रख लिया, बोला—"इसे मैं ही लिये लेता हू—बचा है, इसे लेकर क्या करेगा?" हाबलूसे बोला—"जा तू।"

मधुसूदनकी इस रुखाईसे कुमुदिनी एकदम दग रह गई। हाबलू अपना व्यथित मुह लिये चला गया। कुमुदने कुछ भी न कहा।

उसके चेहरेका भाव देखकर मधुसूदनने कहा—"दूसरोंके लिए तो तुम दानशाला खोले बैठी हो, और मेरे लिए ठेंगा? यह रूमाल अब मेरा हो गया, याद रहेगी कि कुछ मिला था तुमसे।"

मधुसूदन जो बात चाहता है, उसे ठीक ढंगसे प्राप्त करनेके विरुद्ध उसके स्वभावमे ही बाधा है।

कुमुदिनी आखें नीची किये सोफेपर एक किनारेसे चुपचाप बैठी रही। साडीकी लाल किनारी उसके माथेको घेरकर चेहरेको वेष्टन करती हुई नीचे उतर आई है, उसके साथ-साथ उतर आये हैं उसके बिखरे हुए भीगे बाल। गलेकी गोल-मटोल कोमलताको घेरे हुए है एक सोनेका हार। यह हार उसकी माका है, इसीसे हमेशा पहने रहती है। अभी तक उसने फतूही न पहनी थी, भीतर सिर्फ एक समीज है, बांहें दोनों खुली हुई हैं, हाथपर हाथ धरे बैठी है। अत्यन्त सुकुमार शुभ्र हाथ हैं, सम्पूर्ण देहकी वाणी मानो वहाँ आकर उद्वेलित हो रही है। मधुसूदन आंखें नीची करके अभिमानिनीकी तरफ निगाह

गडा-गडाकर देखने लगा, सोनेके मोटे कडे पहने हुए उन हाथोपरसे उसकी निगाह हटना ही नहीं चाहती। सोफेपर उसके पास बैठकर उसका एक हाथ खींच लेनेकी कोशिश की—मालूम हुआ कि कोई विशेष बाधा है। कुमुदिनी हाथ हटाना नहीं चाहती—उसके हाथके नीचे एक कागजका ठोंगा दबा हुआ है।

मधुसूदनने पूछा—"इस कागजमे क्या है?"

"मालूम नहीं।"

"मालूम नहीं, इसके माने?"

"इसके माने मुझे मालूम नहीं।"

मधुसूदनको इस बातपर विश्वास न हुआ, बोला—"मुझे दो, मैं देखूँगा।"

कुमुदने कहा—"यह मेरी गुप्त चीज है, दिखा नहीं सकती।"

तीरकी तरह एक तीक्ष्ण क्रोध क्षण-भरमें मधुसूदनके सिरमें प्रवेश कर गया। बोला—"क्या कहा। इतनी हिमाकत।" कहते हुए जबरदस्ती कुमुदके हाथसे ठोंगा छीनकर उसे खोल डाला,—देखा तो उसमें कुछ नहीं, थोडेसे इलायचीदाने पडे है। माताके सन्ते इन्तजाममे हाबलूके लिए जो कलेवा बँधा हुआ है, उसमे शायद यही चीज हाबलूके लिए सबसे ज्यादा लोभकी है—इसीसे वह इसे बडी हिफाजतके साथ ठोंगेमे बन्द करके लाया था।

मधुसूदन ठग रह गया। माजरा क्या है। सोचने लगा—मायकेमे इस तरहके जलपान करनेकी आदत होगी, इसीसे छिपाकर मगा लिये है, शर्मके मारे प्रकट नहीं करना चाहती। मन-ही-मन

इसमे जरा किनारा-कसीका भाव था। विप्रदास इलाजके लिए ही कलकत्ते आ रहे हैं—इसके मानी ही यह होते हैं कि उनकी तबीयत ठीक नहीं है।

"भइयाकी क्या चिट्ठी आई है ?"

"चिट्ठीका वक्स तो अभी खोला नहीं है, अगर होगी तो तुम्हारे पास भेज दूगा।"

कुमुदिनीने अभी तक मधुसूदनकी वातपर अविश्वास करना प्रारम्भ नहीं किया, इसलिए यह वात भी उसने मान ली।

"भइयाकी चिट्ठी आई है या नहीं, एक वार जरा देखोगे ?"

"अगर आई होगी, तो भोजन करनेके वाद दोपहरको मैं खुद ही लेकर आऊँगा।"

कुमुदिनी अधैर्यको दवाकर चुपचाप इस वातपर राजी हो गई। तव फिर एक वार मधुसूदनने कुमुदका हाथ अपनी ओर खींचना चाहा, इतनेमे सहसा श्यामा कमरेके अन्दर चली आई, और घुसतेके साथ ही वोल उठी—"अरे! यहा तो लालाजी है!" कहकर तुरत ही उलटे पाँव लौटने लगी।

मधुसूदनने कहा—"क्यो, क्या कुछ काम है तुम्हे ?"

"वहूको कोठारके लिए वुलाने आई थी। राजरानी होनेपर भी घरकी तो लक्ष्मी ही है।—तो आज रहने दो।"

मधुसूदन सोफेपरसे उठकर विना कुछ कहे-सुने जल्दीसे वाहर चला गया।

खाने-पीनेके वाद नियमानुसार ऊपरके कमरेमे जाकर पलगपर

नकियेके सहारे पड़कर पान चबाते हुए मधुसूदनने कुमुदिनीको बुलवा भेजा। कुमुदिनी जल्दीसे चली आई। आज भइयाकी चिट्ठी मिलेगी। भीतर जाकर पलंगके पास खड़ी रही।

मधुसूदनने हुक्केको सटकको रखकर बगलसे बैठनेका इशारा करके कहा—"बैठ जाओ।"

कुमुद बैठ गई। मधुसूदनने उसे जो चिट्ठी दी, उसमें सिर्फ इतना ही लिखा था —

"प्राणप्रतिमासु

शुभाशीर्वादराशय सन्तु

चिकित्साके लिए मैं शीघ्र ही कलकत्ते आ रहा हूँ। तबियत ठीक होनेपर तुमसे मिलने आऊँगा। घरके काम-धन्धेसे अवकाश निकालकर कभी-कभी कुशल-समाचार देती रहना, जिससे मैं बेफिक्र रह सकूँ।"

इस छोटीसी चिट्ठीके पाते ही कुमुदको पहले एक धक्का-सा लगा। मन-ही-मन बोली—'अब मैं पराई हो गई हूँ।' अभिमान प्रबल होते-न-होते मनमें आया—'भइयाकी शायद तबियत ठीक नहीं, मेरा कैसा ओछा मन है। अपनी ही बात सबसे पहले सोचने लगता है।'

मधुसूदन समझ गया कि कुमुदिनी उठना ही चाहती है बोला—"कहाँ जा रही हो, ज़रा बैठो।"

कुमुदको तो बैठने कह दिया, लेकिन क्या बात करे कुछ दिमागमें ही नहीं आती। और जल्दी ही कुछ कहना

इसलिए सवेरेसे जो वात उसके मनमें खटक रही थी, वही मुंहसे निकल गई। बोला—"अच्छा, उस इलायचीदाने वाली वातपर तुमने इतना झमट क्यों किया था? उसमें शरमानेकी कौनसी बात थी।"

"वह मेरी गुप्त वात है।"

"गुप्त वात। मुझसे भी नहीं कही जा सकती?"

"नहीं।"

मधुसूदनकी आवाज कड़ी हो गई, बोला—"यह तुम्हारी नूरनगरी चाल है, भइयाके स्कूलमें सीखी हुई।"

कुमुदने कोई उत्तर न दिया। मधुसूदन तकिया पटककर उठकर बैठ गया—"यह चाल तुम्हारी अगर न छुड़ा दूं, तो मेरा नाम मधुसूदन नहीं।"

"क्या तुम्हारा हुक्म है, बताओ।'

"वह ठोंगा तुम्हें किसने दिया था, बताओ।"

"हाबलूने।"

"हाबलूने। लेकिन इसके लिए इतना दुबका-चोरी क्यों?"

"ठीक नहीं कह सकती।"

"किसी औरने उसके हाथसे भिजवाया था?"

"नहीं।"

"तो?"

"बस, यही बात थी, और कुछ नहीं।"

"तो इतनी दुबका-चोरी क्यों?"

"तुम समझोगे नहीं।"

कुमुदका हाथ दबाकर, झकझोरकर मधुसूदनने कहा—"अब तो सही नहीं जातीं तुम्हारी ज्यादतियाँ।"

कुमुदके चेहरेपर सुर्खी आ गई। शान्त स्वरसे बोली—"क्या चाहते हो तुम, समझाकर कहो तो सही। तुम लोगोंकी चालसे मैं वाकिफ नहीं हू, यह बात मैं मानती हू।"

मधुसूदनके माथेकी नसें दोनों फूल उठीं। कुछ जवाब देते न बना, तो इच्छा हुई कि कुमुदको पीट डाले। इतनेमे बाहरसे पुकारनेकी अवाज सुनाई दी, साथ ही सुन पड़ा—"आफिसका साहब आकर बैठा है।" याद आई कि आज डाइरेक्टरोंकी मीटिंग है। लज्जित हुआ कि वह उसके लिए अभी तक तैयार नहीं हुआ—सवेरेका वक्त तो लगभग बिलकुल व्यर्थ ही चला गया। इतनी बड़ी शिथिलता उसके स्वभाव और अभ्यासके लिए इतनी विरुद्ध है कि उसे देखकर वह खुद ही दंग रह गया कि यह असम्भव बात हुई कैसे।

[४०]

मधुसूदनके जाते ही कुमुदिनी पलगसे उतरकर जमीनपर बैठ गई। जीवन-भर क्या उसे ऐसे ही समुद्रमें तैरना पड़ेगा, जिसका कहीं पारावार नहीं? मधुसूदनने ठीक ही कहा है, उन लोगोंके साथ उसके चलनका मेल नहीं है। और-सब अन्तरोंकी अपेक्षा यही सबसे दुःसह है। क्या उपाय है इसका?

सहसा न-जाने क्या मनमें आई, कुमुद उठकर नीचेको चल

दी—मोतीकी माके कमरेकी तरफ। जीनेसे उतरते समय देखा कि श्यामासुन्दरी ऊपर आ रही है।

"क्यों बहू, कहाँ चलीं? मैं तो तुम्हारे ही पास आ रही थी।"

"कोई काम है क्या?"

"नहीं, ऐसा विशेष कोई काम नहीं। देखा कि देवरजीका मिजाज कुछ गरम है, सोचा, चलो जरा पूछ आऊँ बहूसे—नये प्रणयमें खटका कहा आकर लगा। याद रखना बहू, उनके साथ किस तरह निभाकर चलना चाहिए, इस बातकी सलाह मैं ही दे सकती हूं। बकुल-फूलके पास जा रही हो क्या? हाँ, सो चली जाओ, मनको खुलासा कर आओ।"

आज एकाएक कुमुदको मालूम हुआ कि श्यामासुन्दरी और मधुसूदन दोनों एक ही मट्टीसे बनाये गये हैं—एक ही कुम्हारके चाकमें। क्यों यह बात दिमागमें आई, यह बतलाना कठिन है। चरित्र-विश्लेषण करके कुछ समझा हो, सो नहीं, आकार-प्रकारमें विशेष कोई मेल हो, सो भी नहीं, फिर भी दोनोंके रंग-ढंगमें एक अनुप्रास है, मानो श्यामासुन्दरीकी दुनियामें और मधुसूदनकी दुनियामें एक ही हवा चलती है। श्यामासुन्दरी जब मित्रता करने आती है, तो उसका वह व्यवहार कुमुदको उल्टी दिशामें ढकेल देता है, जी न-जाने कैसा होने लगता है।

मोतीकी माके सोनेके कमरेमें घुसते ही कुमुदने देखा कि नवीन और वह दोनों मिलकर किसी चीजके लिए छीना-झपटी कर रहे हैं। लौटना ही चाहती थी कि इतनेमें नवीन कह उठा—

"भाभी, जाना नहीं, जाना नहीं। तुम्हारे ही पास मैं आ रहा था—एक फ़रियाद है।"

"कैसी फ़रियाद ?"

"जरा बैठो तो अपने दुःखकी बात कहूं।"

कुमुद तख़्तपोशपर बैठ गई।

नवीनने कहा—"बड़ा अत्याचार है। इस भद्र-महिलाने मेरी किताब दुबका रखी है।"

"ऐसी गलती क्यों ?" कुमुदने कहा।

"डाह है,—क्योंकि ख़ुद तो अंग्रेजी जानती नहीं। मैं स्त्री-शिक्षाका हिमायती हूं, लेकिन आप स्वामि-जातिके एडुकेशनकी विरोधिनी हैं। मेरी बुद्धिकी ज्यों-ज्यों उन्नति हो रही है, त्यों-त्यों उनकी बुद्धिके साथ मेल न बैठनेसे उन्हें मुझपर डाह होता जाता है। बहुत समझाया कि इतनी बड़ी सीता, वे भी रामचन्द्रके पीछे ही पीछे चलती थीं, विद्या-बुद्धिमें मैं तुमसे आगे बढ़कर चल रहा हूं, इसमें तुम बाधा मत दो।"

"तुम्हारी विद्याकी बात तो माता सरस्वती ही जानती होंगी, लेकिन बुद्धिकी बड़ाई मत करना मेरे सामने, कहे देती हूं।"

नवीनने ऐसा मुंह बना लिया, जैसे उसपर कोई बड़ी-भारी आपत्ति आ पड़ी हो, जिसे देखकर कुमुद खिलखिलाकर हँस उठी। इस घरमें आनेके बाद वह आज पहली ही बार जी खोलकर हँसी है। यह हँसी नवीनको बड़ी मीठी लगी। उसने मन-ही-मन कहा—"यही मेरा काम है, मैं बऊ-रानीको हँसाया करूँगा।"

कुमुदने हसते-हँसते पूछा—"क्यो बहन, तुमने लालाजीकी किताब दुबका रखी है?"

"अच्छा, देखो जीजी, सोनेके कमरेमे क्या उनको पाठशालाके गुरुजी बैठे है? दिन-भर काम-धन्धा करके रातको घरमे आकर देखूँ, तो—एक तो दिया जलता ही है—उसपर आपने एक शमादान और जला दिया है, महा-पंडित बैठे-बैठे पढ रहे है। भोजन ठडा हुआ जा रहा है, ताकीदपर ताकीद की जा रही है, वहाँ कुछ होश ही नहीं।"

"सची बात है, लालाजी?" कुमुदने कहा।

"बऊ-रानी, भोजनसे प्रेम न हो, इतना बडा तपस्वी तो मैं नहीं हू, लेकिन उससे भी बढकर मुझे प्यारी लगती है उनके मुँहसे मीठी ताकीद, इसीलिए जान-बूझकर खानेमे देर हो जाया करती है, किताब पढनेका तो एक बहाना-मात्र है।"

"इनके साथ बातोंमे तो मैं हार मानती हू।"

"और मैं हार मानता हू तब, जब कि ये बोलना बन्द कर देती है।"

"ऐसा भी हो जाता है क्या कभी-कभी?" कुमुदने कहा।

"तो फिर दो-एक ताजे दृष्टान्त दे ही डालूँ, क्यों? मेरे हृदयपर आँसुओंकी उजली स्याहीसे साफ हरूफोंमे लिखे हुए हैं।"

"अच्छा, अच्छा, तुम्हे अब दृष्टान्त देनेकी जरूरत नहीं। मेरा तालियोंका गुच्छा कहाँ है, बताओ।—देखो तो जीजी, मेरी तालियाँ दुबका रखी हैं।"

'घरके आदमियोंपर तो पुलिस-केस नहीं कर सकता, इसीसे चोरको चोरीके जरिये ही सजा देनी पडती है।—पहले मेरी किताब दे दो।"

"तुम्हे नहीं दूगी, जीजीको दूगी।"

कोनेमे एक टोकनी पडी थी—जिसमें रेशमी और ऊनी कपडोंकी कतरन, फटे मोजे वगैरह जमा हो रहे थे—उसके नीचेसे एक अंग्रेजीकी सक्षिप्त इन्साइक्लोपीडियाका दूसरा खड निकालकर मोतीकी माने कुमुदकी गोदमें रख दिया, और बोली—"इसे तुम अपने यहाँ ले जाओ, जीजी, इन्हे मत देना, देखू तुम्हारे साथ ये कैसे झगडते हैं।"

नवीनने मसहरीपरसे तालियोंका गुच्छा उठाकर कुमुदके हाथमे दिया, और कहा—"और किसीको मत देना, भाभी, देखू और कोई तुम्हारे साथ कैसा सलूक करती हैं।"

कुमुदने किताबके पन्ने उलटते हुए कहा—"लालाजीको इसी किताबका शौक है क्या?"

"ऐसी किताब ही नहीं, जिसका उन्हे शौक न हो। उस दिन देखू तो, कहींसे एक 'गो-पालन' उठा लाये हैं, उसे ही पढने बैठ गये हे।"

"मैं अपने शरीर-रक्षार्थ तो उसे पढ नहीं रहा था, फिर उसमे लज्जा किस बातकी।"

"जीजी, तुम मुझसे कुछ कहना चाहती थीं न। कहो तो, बाहरी आदमीको यहाँसे विदा कर दिया जाय।"

"नहीं, इसकी कोई जरूरत नहीं। मैंने सुना है, भइया दो-ही-एक दिनमे आनेवाले हैं।" कुमुदने कहा।

"हां, कल ही आयेंगे।" नवीनने कहा।

"कल ही।"—विस्मित होकर कुमुद कुछ देर चुपचाप बैठी रही। गहरी सांस लेकर बोली—"कैसे उनसे भेंट होगी?"

मोतीकी माने पूछा—"तुमने जेठजीसे कुछ कहा नहीं?"

कुमुदने सिर हिलाकर जनाया कि नहीं।

नवीनने कहा—"एक दफे कहोगी तो सही?"

कुमुद चुप बनी रही। मधुसूदनके आगे भइयाका जिक्र करना कठिन काम है। इस घरमे उसके भइयाके लिए तो अपमान तैयार खड़ा है, उसे जरा भी उकसानेमे कुमुदको असह्य संकोच होता है।

कुमुदके चेहरेका भाव देखकर नवीनका मन व्यथित हो उठा। बोला—"चिन्ता मत करो भाभी, हम सब ठीक कर लेंगे, तुम्हे कुछ कहना सुनना न होगा।"

भाई साहबके सामने नवीन लड़कपनसे ही बहुत डरता आया है। भाभीने आकर आज उसके मनसे वह डर निकाल दिया मालूम होता है।

कुमुदिनीके चले जानेपर मोतीकी माने अपने पतिसे कहा—"अब क्या उपाय करोगे, बताओ? मैं तो तभी समझ गई थी, उस दिन रातको जब तुम्हारे भाई साहबने हम दोनोंको लिवा ले जाकर बहूके सामने अपनेको छोटा बनाया था कि यह अच्छा नहीं हुआ। उसके बादसे वे तुम्हे देखते ही मुँह फेरकर चले जाते हैं।"

"भाई साहबने समझा है कि वे ठगाये गये, जोशमें आकर पहलेसे थैली रीती करके पेशगी दाम दे तो दिये, मगर पीछेसे तौलके माफ़िक ठीक सौदा नहीं मिला। हम लोगोंने उनकी इस बेवक़ूफ़ीको प्रत्यक्ष देखा था, इसलिए अब उनसे हमारा रहना सहा नहीं जाता।"

मोतीकी माने कहा—"न सही, पर उनके ऊपर तो विप्रदास बाबूके प्रति एक क्रोध पागलपनकी तरह सवार हो गया है—दिनों-दिन बढ़ता ही जाता है। यह कौन-सी रीति है, पूछो भला।"

नवीनने कहा—"ऐसे आदमियोंका भक्तिका प्रकाश इसी तरहका होता है। इस श्रेणीके लोग भीतरसे जिसे श्रेष्ठ समझते हैं, बाहरसे उसे मारते हैं। कोई-कोई कहते हैं कि रामचन्द्रपर रावणकी असाधारण भक्ति थी, इसीलिए वह बीस हाथोंसे नैवेद्य चलाता था। मैं तुमसे आज कहे देता हूं, बड़-रानीकी भइयासे भेंट सहजमें नहीं होनेकी।"

"ऐसा कहनेसे तो काम नहीं चलेगा, कोई-न-कोई उपाय तो करना ही होगा।"

"उपाय दिमाग़में आ गया।"

"क्या, बताओ?"

"कह नहीं सकता।"

"क्यों भला?"

"शरम मालूम होती है।"

"मुझसे भी शरम?"

"हाँ, तुम्हींसे शरम है।"

"नूवजह क्या, सु तो सही?"

रिश्तेदारोमे गेब जमानेका गौरव। जिनका अयोग्य दामाद ट्रेजररके पदसे वचित है, उन्होंने बडी खोजके साथ मधुसूदनके स्वजन-वात्सल्यके प्रमाण आविष्कार किये हैं और उनका यथास्थानमे प्रचार भी किया है। इसके सिवा गुप-चुप इस मिथ्या सन्देहको सचारित करनेका भार भी उन्होंने लिया था कि मधुसूदन हरएक तरहकी खरीद-बिक्रीमे भीतर-ही-भीतर कमीशन लिया करता है। इन सब निन्दाओंका सबूत कोई नहीं चाहता, क्योकि स्वयं उनके अन्दर जो लोभ है, वही उनके लिए अन्तरतम और प्रबलतम साक्षी है। लोगोका मन बिगाड देना और भी एक कारणसे सहज था, वह कारण था मधुसूदनकी असाधारण श्री-वृद्धि और उसके असली चरित्रकी असह्य सुख्याति। 'मधुसूदन भी भीतर-ही-भीतर डकारा करते हैं'—इस अपवादसे उन लोलुपोंको बडी शान्ति मिली, जिनका मन गहरी डकार लेनेकी आकाक्षासे बगुलेकी तरह हो रहा था और जिनके आस-पास कहीं भी जलाशय न था।

मालिकको मधुसूदन पक्की जबान दे चुका था। नुकसानके डरसे वायदा-खिलाफी करनेवाला वह नहीं है। इसीसे उसने उसे खुद खरीदनेका निश्चय किया, और प्रण कर लिया है कि कम्पनीको दिखा दूगा कि न खरीदकर उसने अपना नुकसान किया है।

मधुसूदन देरसे घर वापस आया। अपने भाग्यपर मधुसूदनको अन्ध-विश्वास पैदा हो गया था, आज उसे डर मालूम हुआ कि उसका अदृष्ट उसकी जीवन-यात्राकी गाडीको एक लाइनसे दूसरी लाइनपर चालान किये दे रहा है। पहले झंझटोंमें ही उसका

सीना धड़क उठा। मीटिंगसे लौटकर आफिस-रूममें आकर वह आरामकुर्सीपर पड़ रहा, और हुक्केकी नली हाथमें लिये उसके धूम-कुंडलके साथ अपनी काले रंगकी चिन्ताको कुंडलायित करने लगा।

नवीनने आकर खबर दी—"विप्रदासके यहाँसे आदमी आया है मुलाक़ात करने।" मधुसूदन झल्लाकर बोल उठा—"कह दो, चले जायँ, अभी मुझे फ़ुरसत नहीं है।"

नवीनने मधुसूदनका रंग-ढंग देखकर समझ लिया कि मीटिंगमें कोई अनहोनी बात हो गई है। समझ गया कि भाई साहबका मन अभी दुर्बल है। दुर्बलता स्वभावतः अनुदार होती है, और दुर्बलकी आत्म-गरिमा क्षमा-हीन निष्ठुरताका रूप धारण कर लेती है। भाई साहबका चोट खाया हुआ मन बड़-रानीको कठोरतासे चोट पहुँचाना चाहेगा, इसमें नवीनको ज़रा भी सन्देह न था। इस चोटको, जिस तरह हो सके, दूर करना ही होगा। इसके पहले उसके मनमें दुविधा थी, अब वह बिलकुल दूर हो गई। नवीनने कुछ देर तक घूम-फिरकर फिर कमरेमें आकर देखा कि उसके भाई साहब पतो-वाली नोट-बुकके पन्ने उलट रहे हैं। नवीनके आकर खड़े होते ही मधुसूदनने मुँह उठाकर रूखे स्वरमें पूछा—"फिर क्या जरूरत पड़ गई? शायद अपने विप्रदास बाबूकी तरफ़से वकालत करने आये होगे—क्यों?"

नवीनने कहा—"नहीं, भाई साहब, इसकी चिन्ता न कीजिये। उनका आदमी यहाँसे ऐसी फटकार खाकर गया है कि तुम अगर खुद उसे बुलाओ, तो भी वह इधरकी ओर मुँह न करेगा।"

यह बात भी मधुसूदनको सह्य न हुई। बोल उठा—"छगुनी हिलाते ही पैरोंके पास आकर पड़ना होगा। किस लिए आया था वह ?"

"तुम्हे खबर देने कि विप्रदास बाबूका कलकत्ते आना दो दिन पिछड़ गया है। तबीयत जरा और सुधर जानेपर आयेंगे।"

"अच्छा, अच्छा, उसके लिए मुझे जल्दी नहीं है।"

नवीनने कहा—"भाई साहब, कल सवेरे घंटे-दो-घंटेके लिए जरा छुट्टी चाहिए।"

"क्यों ?"

"तुम सुनोगे तो गुस्सा होंगे।"

"न सुननेसे और भी गुस्सा होऊँगा।"

"कुम्भकोनम्से एक ज्योतिषी आये हैं, उनसे एक बार भाग्य-परीक्षा कराना चाहता हू।"

मधुसूदनका सीना धड़क उठा, उसकी इच्छा हुई कि वह अभी दौड़ा जाय उसके पास। ऊपरसे डपटकर बोला—"तुम विश्वास करते हो ज्योतिषमें ?"

"स्वाभाविक अवस्थामें तो नहीं करता, पर डर मालूम होनेपर करता हू।"

"किस बातका डर, सुनू तो सही ?"

नवीन कुछ जवाब न देकर अपना सिर खुजाने लगा।

"किसका डर, आखिर बताओ भी ?"

"इस दुनियामें तुम्हारे सिवा मैं और किसीको नहीं डरता। कुछ दिनसे तुम्हारा बर्ताव देखकर मेरा मन चंचल हो उठा है।"

मधुसूदनको इस बातसे बड़ी तृप्ति हुई कि उससे लोग ऐसे डरते हैं जैसे शेरसे। नवीनके मुँहकी ओर देखकर वह चुपचाप गम्भीर भावसे हुक्केकी नली गुड़गुड़ाता हुआ अपने माहात्म्यका अनुभव करने लगा।

नवीनने कहा—"इसीसे, एक बार स्पष्ट जानना चाहता हूं कि ग्रह क्या करना चाहते हैं मेरे बारेमें। और कब तक उनसे छुटकारा मिलेगा।"

"तुम जैसे नास्तिक, तुम तो कुछ मानते ही नहीं, फिर तुम कैसे—"

"देवताओंपर विश्वास होता तो ग्रहोंपर विश्वास न करता, भाई साहब। जो डाक्टरको नहीं मानता, उसे कभी-कभी नीम-हकीमको मानना पड़ता है।"

मधुसूदनको अपने ग्रहकी जाँच करानेके लिए जितना आग्रह हुआ, उतनी ही झुंझलाहटके साथ वह बोला—"पढ़-लिखकर तुम रहे गधे-के-गधे ही। जो जैसा कह दे, उसीपर विश्वास करोगे तुम?"

"उसके पास जो भृगुसंहिता है—उसमें, जहाँ भी कोई जिस किसी समयमें पैदा हुआ है या होगा, सबकी जन्मपत्री बिलकुल तैयार रखी है—संस्कृत भाषामें लिखी हुई, इसके ऊपर और क्या कहा जा सकता है? हाथो हाथ परीक्षा करके देख लो।'

"जो लोग बेवकूफोंको बहकाकर पेट भरते हैं, उनके लिए विधाता तुम जैसे बेवकूफ भी काफी तादादमें उत्पन्न कर देता है।"

"और उन बेवकूफोंको बचानेके लिए तुम सरीखे बुद्धिमानोंकी सृष्टि करता है। मारनेवालेपर उसकी जितनी दया है, मार खानेवाले

पर भी उतनी ही है। भृगुसंहितापर तुम अपनी तीक्ष्ण बुद्धि चलाकर देख न लो।"

"अच्छी बात है, कल सवेरे ही हमे ले चलना, देखू तो सही तुम्हारे कुम्भकोनमकी चालाकी।"

"भाई साहब, तुम्हारा ऐसा जबरदस्त अविश्वास है कि उससे गणनामे गड़बड़ हो सकती है। ससारमे देखा जाता है कि आदमीपर विश्वास करनेसे आदमी विश्वस्त हो जाता है। ग्रहोकी भी ठीक यही दशा है, साहब लोगोंको देखो, वे ग्रहको नहीं मानते, इसलिए उनपर ग्रहोंका फल कुछ असर ही नहीं करता। उस दिन त्र्यहस्पर्शके दिन जाकर तुम्हारा छोटा-साहब घुड-दौड़मे बाजी मार लाया—मैं होता तो बाजी जीतना तो दूर रहा, शायद उसमें से कोई घोडा छिटककर मेरे पेटमे दुलत्ती जमा जाता। भाई साहब, इन सब ग्रह-नक्षत्रोंके हिसाबमे तुम अपनी बुद्धि न चलाना, जरा विश्वास भी करना।"

मधुसूदन खुश होकर मुसकराता हुआ हुक्का गुडगुडाने लगा।

दूसरे दिन सवेरे सात बजेके भीतर मधुसूदन नवीनके साथ एक पतली गलीमेंसे कूडे-कचडेमे होकर वेंकट शास्त्रीके घर पहुचा। नीचेके तल्लेमे अंधेरी बन्द कोठरी है, लोन-लगी टूटी फूटी दीवाल ऐसी मालूम पड रही है, मानो वह घातक चर्मरोगसे बुरी तरह तंग है। तख्तके ऊपर मैली-कुचैली फटी दरी बिछी हुई है। किनारेसे कुछ पोथी-पत्रे बिखरे पडे हैं। दीवालपर शिव-पार्वतीका एक चित्रपट टंगा है। नवीनने आवाज दी—"शास्त्रीजी।" छींटकी मैली फर्द ओढे एक

काला नाटा दुबला आदमी कोठरीमे घुसा। उसका सिर घुटा हुआ था और उसके बीचमें पंडिताऊ ढंगकी विशाल चोटी थी। नवीनने उसे बड़े विनयके साथ प्रणाम किया। शास्त्रीजीकी शक्ल-सूरत देखकर मधुसूदनको ज़रा भी भक्ति न आई—परन्तु दैवके साथ दैवज्ञकी थोड़ी-बहुत घनिष्टता होगी ही, इस खयालसे डरते-डरते ज़रासा सिर झुकाकर जल्दीसे आधा-परधा नमस्कार करके वह बैठ गया। नवीनने मधुसूदनकी जन्मपत्री ज्योतिषीके हाथमे दी, परन्तु शास्त्रीजीने उसकी कुछ कद्र न करके मधुसूदनका हाथ देखना चाहा। काठकी सन्दूकचीमें से कागज-कलम निकालकर उन्होंने स्वयं एक चक्र बनाया। मधुसूदनके मुँहकी तरफ देखकर बोले—"पचमवर्ग।" मधुसूदन खाक भी न समझा। ज्योतिषीजी पोरोंपर उंगली रखते हुए कहने लगे—कवर्ग, चवर्ग, टवग, तवर्ग। इतनेपर भी मधुसूदनकी बुद्धि खुलासा न हुई। ज्योतिषीजीने कहा—"पचमवर्ण।" मधुसूदन धैर्यपूर्वक चुप रहा। ज्योतिषी कहने लगा—"प, फ, ब, भ, म।" मधुसूदन इससे सिर्फ इतना समझ सका कि भृगुमुनिने व्याकरणके प्रथम अध्यायसे ही उसकी संहिता शुरू कर दी है। इतनेमें वेंकट शास्त्री बोल उठे—"पचाक्षरक।"

नवीनने चौंककर मधुसूदनके कानके पास मुँह ले जाकर चुपकेसे कहा—"मैं समझ गया, भाई साहब।

"क्या समझे ?"

"पचमवर्गका पचम वर्ण म, उसके बाद पंच अक्षर म धु सू द न। जन्म-ग्रहकी अद्भुत कृपासे तीनों 'पांच' आकर एक जगह मिले हैं।"

[४२]

मधुसूदनके मनसे एक बोझा-सा उतर गया, आत्म-गौरवका बोझा—जो कठोर आत्माभिमानके रूपमें उसकी विकसोन्मुख अनुरक्तिको बार-बार पत्थरसे दबाता आ रहा था। कुमुदके प्रति उसका मन जब मुग्ध था, तब भी उस विह्वलताके विरुद्ध भीतर ही भीतर उसकी लड़ाई चल रही थी। ज्यों-ज्यों वह अनन्योपाय होकर कुमुदकी ओर खिंचता गया है, त्यों-त्यों अपने अगोचरमें कुमुदपर उसका क्रोध बढ़ता ही गया। इतनेमें खास नक्षत्रोंके यहाँसे जब हुक्म आया कि लक्ष्मीजी आई हैं घरमें, उन्हें खुश करना होगा, तो सब द्वन्द्व दूर होकर उसका शरीर-मन मानो रोमांचित हो उठा, बार-बार वह अपने मनमें कहने लगा—'लक्ष्मी, मेरे ही घर लक्ष्मी, मेरे भाग्यका परम दान।' जी चाहने लगा—अभी सब संकोच दूरकर कुमुदके पास जाकर स्तुति कर आवे, कह आवे कि 'यदि कुछ भूल हुई हो, तो उसपर ध्यान मत देना।' परन्तु आज अब समय कहाँ, व्यापारकी दरार जोड़नेके लिए अभी आफिस जाना होगा, भीतर जाकर खा आता, इतनी भी फुरसत न हुई।

इधर तमाम दिन कुमुदिनीके मनमें उथल-पुथल होती रही। उसे मालूम है कि कल भइया आयेंगे, तबीयत उनकी ठीक नहीं है। उनके साथ भेंट हो सकेगी या नहीं, यह बात निश्चित रूपसे जाननेके लिए उसका मन उद्विग्न हो रहा है। नवीन किसी कामसे कहीं गया है,

अभी तक आया नहीं। वह निःसन्देह जानता था कि आज स्वयं मधुसूदन जाकर बऊरानीको सब तरहसे प्रसन्न करेगा, पहलेसे किसी प्रकारका आभास देकर वह रस-भग नहीं करना चाहता।

आज छतपर बैठनेका मौक़ा न था। कल शामसे ही बादल घिरे हुए हैं, आज दोपहरसे थोडी-थोडी वर्षा भी शुरू हो गई है। शीतऋतुके बादल हैं, अनिच्छित अतिथिकी तरह बुरे मालूम होते हैं। बादलोमे कोई रग नहीं, वर्षामें कोई ध्वनि नहीं, भारी ठढी हवा मानो उदास-सी हो रही है, और सूर्यालोक-हीन आकाशकी दीनतासे पृथ्वी मानो सकुचित हो रही है। सीढियोपर से चढकर ज़ीना खत्म होते ही, सोनेके कमरेमे जानेके रास्तेपर जो छई-हुई छत है, वहींपर कुमुद बैठी है। रह-रहकर उसकी देहपर पानीकी बौछार पड रही है। आज इस छायासे मलिन गीले दिनमें कुमुदको ऐसा मालूम होने लगा कि मानो उसके जीवनने अजगरकी तरह उसे निगल लिया है, उस अजगरका गन्दा पेट ठसाठस भरा हुआ है और उसमे कहीं भी जरा सँधि नहीं है। जिस देवताने उसे फुसलाकर आज इस निरुपाय नैराश्य-सागरमे ला पटका है, उसपर उसका जो अभिमान उसके मनमे घुमड रहा था, वह आज क्रोध-रूपी आगसे जल उठा। सहसा वह जल्दीसे उठ खडी हुई। डेस्क खोलकर उसने वहीं अपना युगल-रूपका चित्रपट निकाला। वह एक रगीन रेशमी छींटके टुकडेमे लिपटा हुआ था। उस चित्रपटको वह आज नष्ट कर देना चाहती है, मानो जोरसे चिल्लाकर कहना चाहती है कि तुमपर मै ज़रा भी विश्वास नहीं करती। हाथ कॉप रहे हैं, इसीसे गॉठ नहीं खुल रही

है, खींचातानी करते-करते वह और भी कडी हो गई, अधीर होकर उसने उसे दाँतोंसे फाड डाला। ज्यों ही उस चिरपरिचित मूर्तिके उसे दर्शन हुए, उससे रहा न गया, उसने चटसे उसे छातीसे लगा लिया और रोने लगी। लकडीका फ्रेम उसकी छातीमे ज्यों-ज्यों चुभने लगा, त्यों-त्यों वह उसे और भी दूने आवेगसे चिपटाने लगी।

इतनेमे आ गया मुरली बैरा—बिछौना करने। मारे ठंढके उसके हाथ काँप रहे थे। सिर्फ एक फटी-पुरानी मैली चद्दर ओढे था। चाँद उसकी गजी थी, कनपटियाँ बैठी हुई, गाल पिचके हुए और दाढी बढी हुई भद्दी मालूम होती थी। अभी थोडे दिन हुए, वह मलेरिया बुखारसे उठा है, देहमे खून बस कहने-भरको रह गया है। डाक्टरने नौकरी छोडकर देशमे जाकर रहनेके लिए कहा था, परन्तु पेट बुरी बला है।

कुमुदने कहा—"जाडा लगता है, मुरली?"

"हाँ, माजी, बादल हो रहे हैं, सो जाडा बडे जोरका पडा है।"

"गरम कपडे नहीं है तुम्हारे पास?"

"खिताब मिलनेके दिन महाराजा सा'बने दिये तो थे, माजी, लेकिन नातीकी बीमारीमे डाक्टरके कहनेसे मैंने उसे ही दे दिये।"

कुमुद बगलके कमरेमें जाकर आलमारीमें से एक खाकी रंगका पुराना अलवान निकाल लाई, और बोली—"मैं अपनी यह चद्दर तुम्हे देती हू।"

मुरलीने नमस्कार करके कहा—"कसूर माफ करना, माजी, महाराजा सा'ब गुस्सा होंगे।"

कुमुदको याद उठ आई—इस घरमें दया करनेका मार्ग बहुत ही संकीर्ण है, परन्तु देवतासे अपने लिए भी तो उसे दया चाहिए, पुण्य-कर्म ही उसका मार्ग है। कुमुदने क्षोभके साथ उस अलवानको जमीनपर पटक दिया।

मुरलीने हाथ जोड़कर कहा—"रानी-माई, तुम लक्ष्मी माता हो, गुस्सा मत होना। ऊनी कपड़ोंकी मुझे जरूरत नहीं पड़ती। मैं रहता हूं हुक्केबरदारकी कोठरीमें, वहाँ अंगीठीमें हरदम आग सुलगती रहती है, सो मैं खूब भरकता रहता हूं।"

कुमुदने कहा—"मुरली, नवीन-बाबू अगर आ गये हों, तो उन्हें जरा भेज देना।"

नवीनके कमरेमें पैर रखते ही कुमुदने कहा—"देवरजी, तुम्हें एक काम करना ही होगा। बताओ, करोगे?"

"अपना अनिष्ट हो तो अभी करनेको तैयार हूं, लेकिन तुम्हारा अनिष्ट हो तो हरगिज़ न करूँगा।"

"मेरा और कितना अनिष्ट होगा? मैं नहीं डरती।"

कहकर अपने हाथोंके उसने सोनेके मोटे भारी चूड़े उतार लिये, बोली—"मेरे इन चूड़ोंको बेचकर भइयाके लिए स्वस्त्ययन कराना होगा।"

"कोई जरूरत नहीं है, बऊ-रानी, तुम उनकी जैसी भक्ति करती हो, उसीके पुण्यसे क्षण-क्षणमें उनके लिए स्वस्त्ययन हो रहा है।"

"देवरजी, भइयाके लिए अब और कुछ भी न कर सकूंगी।

अगर कुछ कर सकती हू, तो सिर्फ इतना ही कि देवताके द्वारपर उनके लिए कुछ 'सेवा' पहुचा दू।"

"तुम्हे कुछ न करना होगा, बऊ-रानी। हम सब सेवक हैं किस लिए?"

"तुम लोग क्या कर सकते हो, बताओ?"

"हम लोग पापी हैं, पाप कर सकते हैं। वही करके अगर तुम्हारे किसी काम आऊँ, तो अपनेको धन्य समझू।"

"देवरजी, इस बारेमे मजाक मत करो।"

"जरा भी मज़ाक नहीं करता। पुण्य करनेकी अपेक्षा पाप करना बहुत कठिन काम है, देवता यदि इस बातको समझ जायँ, तो पुरस्कार देंगे।"

नवीनकी बातोंसे देवताके प्रति उसकी उपेक्षा-बुद्धिकी कल्पना करके कुमुदका जी दुखना स्वाभाविक था, किन्तु उसके भइया भी तो मन-ही-मन देवताकी श्रद्धा नहीं करते, इस अभक्तिपर तो वह गुस्सा नहीं हो सकती। छोटे बच्चेकी शरारतपर माका जैसा सकौतुक स्नेह होता है, इस तरहके अपराधपर उसका भी वैसा ही भाव है।

कुमुदने जरा म्लान हँसी हँसकर कहा—"देवरजी, संसारमे तुम लोग अपने जोरसे काम कर सकते हो, हम तो वह ज़ोर चला नहीं सकतीं न? जिनपर प्रेम है, किन्तु पहुच नहीं, उनका काम करें तो कैसे करें? दिन तो कटते ही नहीं, कहीं भी तो रास्ता ढूढे नहीं मिलता। हमपर दया करनेवाला क्या कहीं भी कोई नहीं है?"

नवीनकी आंखोंमे आंसू भर आये।

"भइयाके लिए मुझे कुछ करना ही होगा, देवरजी, कुछ तो देना ही होगा। ये चूड़े मेरी माके हैं, इन्हे मैं अपनी माकी ओरसे ही देवताको चढाऊगी।"

"देवताको हाथोंसे नहीं दिया जाता, बऊरानी, वे ऐसे ही ले लेते है। दो दिन ठहर जाओ, फिर भी अगर देखो कि वे प्रसन्न नहीं हुए, तो तुम जैसा कहोगी, वैसा ही करूगा। जो देवता तुमपर दया नहीं करते, उन्हें भी भोग चढा आऊगा।"

रात हो चुकी थी,—बाहर जीनेमे परिचित जूतोंका शब्द सुनाई दिया। नवीन चौंक उठा, समझ गया कि भाई साहब आ रहे हैं। भागा नहीं, हिम्मत करके भाई साहबकी बाट जोहने लगा। इधर कुमुदका मन क्षण-भरमे अत्यन्त सकुचित हो उठा। जब इस अदृश्य विरोधके धक्केने बडे जोरसे उसकी प्रत्येक नाडीको चौंका दिया, तो उसे बडा डर मालूम हुआ। इस पापने क्यों उसे इतनी कड़ाईके साथ धर दबाया?

सहसा कुमुद नवीनसे कह उठी—"देवरजी, किसी ऐसेको तुम जानते हो, जो मुझे गुरुकी तरह उपदेश दे सके?"

"क्या होगा उससे, बऊरानी?"

"अपने मनसे अब मुझसे जूझा नहीं जाता।"

"इसमे तुम्हारे मनका दोष नहीं है।"

"विपत्ति बाहरकी है और दोष मनका, भइयासे तो मैंने ऐसा ही सुना है बार-बार।"

"तुम्हारे भइया ही तुम्हें उपदेश देंगे,—घबराओ मत।"

"भला, ऐसे दिन अब नसीब होंगे !"

मधुसूदनकी आर्थिक वृद्धिके साथ उसके प्रेमका समझौता हो जानेके बाद ही वह प्रेम उसके सारे काम-धन्धोंपरसे मानो उफन-उफनकर फैलने लगा। कुमुदके सुन्दर मुखपर उसके भाग्यका वराभय दान है। पराभव दूर हो जायगा, आज ही उसे इस बातका आभास मिला है। कल जिन लोगोंने विरोधमे राय दी थी, आज उन्हींमेसे किसी-किसीने सुर बदलकर मधुसू ! चिट्ठी लिखी है। मधुसूदनने ज्यों ही उस इलाकेको अपने नामसे खरीदनेका प्रस्ताव किया, त्यों ही किसीने ऐसा भी भाव दिखाया कि इस बातपर फिर एक बार विचार करना चाहिए।

गैरहाजिर होनेके कसूरपर आफिसके दरवानकी आधी तनख्वाह काट ली गई थी, आज टिफिनके वक्त वह मधुसूदनके पैरों पड गया। उसने उसी वक्त उसे माफ कर दिया। माफ करनेके मानी यह कि उसने अपनी पाकेटसे दरवानको रुपये दे दिये, पर रजिस्टरमे जुर्माना बना ही रहा, क्योंकि नियम भग नहीं हो सकता।

आजका दिन मधुसूदनके लिए बडे आश्चर्यका दिन है। बाहर आकाशमे बादल घिरे हुए हैं, रिमझिम-रिमझिम वर्षा हो रही है, किन्तु इससे उसके भीतरका आनन्द और भी बढ गया। आफिससे लौटकर रातको भोजन करनेके पहले तक मधुसूदन बाहरके मकानमें ही रहता था। ब्याहके बाद, कुछ दिन तक नियमके विरुद्ध असमयमें अन्त पुरमें जाते समय लोगोंकी निगाह भी बचाई है, परन्तु आज वह बेधडक क़दम रखता हुआ घर-भरको जतला देना चाहता है कि वह

जा रहा है कुमुदके पास, उससे मिलनेके लिए। आज उसने समझा कि इतना बडा उसका सौभाग्य है कि संसार-भरके लोग उससे ईर्षा कर सकते हैं।

थोडी देरके लिए मेह थम गया है। अभी तक सब कमरोंमें बत्तियाँ नहीं जल पाईं। आनन्दी बुढिया धूपदानी हाथमें लिये सब कमरोंमें धूप देती फिरती है। एक चमगादड आँगनके ऊपरसे लेकर अन्तःपुरके रास्ते तक लालटेनके उजालेमें चक्कर काट रहा है। दासियाँ बरामदेमें पैर पसारे बैठी हुई अपनी-अपनी जाघोंपर रुईकी बत्तियाँ बना रही थीं, राजा-साहबको आते देख झटपट घूँघट खींचकर भाग गईं। पावकी आहट सुनकर श्यामासुन्दरी अपने कमरेमे से बाहर निकल आई, हाथमें पानका डिब्बा था भरा हुआ। मधुसूदनके आफिससे वापस आनेपर नियमानुसार वह उसे बाहर भिजवा देती थी। सभी जानते हैं कि ठीक मधुसूदनकी रुचिके पान तो सिर्फ श्यामासुन्दरी ही लगा सकती है, इतना जाननेमें और भी जरा-कुछ जाननेका इशारा था। उसी बलपर रास्तेमें श्यामाने मधुसूदनके सामने पानका डब्बा खोलकर कहा—"देवरजी, तुम्हारे पान लगे हुए हैं, लेते जाओ।" पहलेकी-सी बात होती, तो इसी बहाने दो-चार बातें हो जातीं, और उन बातोंमें जरा-कुछ मधुर रसका आमेज़ लगा रहता। आज क्या हो गया, कौन जाने, दूरसे भी कहीं श्यामाकी छूत न लग जाय, इस डरसे पान बिना लिये ही मधुसूदन जल्दीसे निकल गया। श्यामाकी बडी-बडी दोनों आँखें अभिमानसे जल उठीं, फिर टपकने लगीं उनमें से आँसुओंकी

बड़ी-बड़ी बूँदें। अन्तर्यामी जानते होंगे, श्यामासुन्दरी मधुसूदनसे प्रेम करती है।

मधुसूदनके कमरेमे घुसते ही नवीन कुमुदके पैरोंकी धूल माथेसे लगाकर उठ खड़ा हुआ, और बोला—"गुरुकी बात याद है, तलाशमें रहूंगा।" फिर भाई साहबसे बोला—"बऊ-रानी गुरुके मुँहसे शास्त्रोपदेश सुनना चाहती हैं। अपने गुरुजी हैं तो सही, लेकिन—"

मधुसूदन उत्तेजनाके स्वरमे कहने लगा—"शास्त्रोपदेश। अच्छी बात है, देखा जायगा, तुम्हें इसके लिए कुछ न करना होगा।"

नवीन चला गया।

मधुसूदन आज तमाम रास्तेमे मन-ही-मन रटता आया था—"बड़ी बहू, तुम्हारे आनेसे मेरे घरमे उजेला हुआ है।" इस तरहकी बात करना उसकी आदतके बिलकुल खिलाफ है। इसीसे उसने निश्चय किया था कि घरमे घुसते ही बिना दुविधा किये पहली ही झोंकमे वह उसे कह डालेगा, परन्तु नवीनको देखते ही उसकी बात रुक गई। उसपर छिड़ गया शास्त्रोपदेशका प्रसग, उसने उसका मुह बिलकुल ही बन्द कर दिया। हृदयके भीतर जो तैयारियाँ हो रही थीं, इस ज़रासी बाधासे वह सब ज्यों-की-त्यों रह गईं। उसके बाद कुमुदिनीके चेहरेपर देखा एक तरहका भयका भाव—देह और मनका एक तरहका सकोच। और किसी दिन इस बातपर उसकी निगाह न पड़ती। आज जो उसके हृदयमे प्रकाशका उदय हुआ है, उससे उसकी देखनेकी शक्ति प्रबल हो गई है, कुमुदके विषयमें चित्तका स्पर्श-ज्ञान हो गया है सूक्ष्म। आजके दिन भी कुमुदके मनमें ऐसी विमुखता—

यह उसे बड़ा निष्ठुर अन्याय मालूम होने लगा। फिर भी मन ही मन प्रण किया कि विचलित न होऊंगा, परन्तु जो सहज ही में हो सकता था, वह अब सहज न रहा।

ज़रा चुप रहकर मधुसूदनने कहा—"बड़ी बहू, चली जाना चाहती हो? ज़रा ठहरोगी नहीं?"

मधुसूदनकी बात और उसके गलेका सुर सुनकर कुमुद अचम्भेमें आ गई। बोली—"नहीं तो, जाऊंगी क्यों?"

"तुम्हारे लिए एक चीज लाया हू, खोलकर देखो।" कहकर कुमुदके हाथमें उसने एक सोनेकी डिब्बी दे दी।

डिब्बी खोलकर कुमुदने देखा कि भइयाकी दी हुई नीलमकी अगूठी है। छाती धडक उठी, क्या करे, कुछ समझमें न आया।

"यह अगूठी मैं तुम्हे पहना देना चाहता हू, पहनाने दोगी?"

कुमुदने अपना हाथ बढा दिया। मधुसूदन कुमुदका हाथ अपनी गोदमें रखकर खूब आहिस्ते-आहिस्ते अगूठी पहनाने लगा। जान-बूझकर ही उसने कुछ ज्यादा समय लगाया। उसके बाद हाथ उठाकर चूम लिया, बोला—"मैंने गलती की थी तुम्हारे हाथसे अगूठी खोलकर। तुम्हारे हाथमें कोई भी रत्न हो, कुछ दोष नहीं।"

कुमुदको अगर वह धरके पीटता, तो उसे इतना आश्चर्य न होता। छोटे बच्चेकी तरह कुमुदके इस आश्चर्यके भावको देखकर मधुसूदनको लगा तो अच्छा। कुमुदके चेहरेके भावसे यह बात बिलकुल स्पष्ट झलक रही थी कि उसका यह दान मामूली दान नहीं है, परन्तु

मधुसूदनने और भी कुछ हाथमें रस छोड़ा है, उसे उसने प्रकट किया, बोला—"तुम्हारे यहाँका काल्लू मुरार्जी आया है, मिलोगी उससे ?"

कुमुदका चेहरा चमक उठा। बोली—"काल्लू भइया !"

"यहीं बुलाये देता हूं। तुम लोग बातचीत करना, तब तक मैं भोजन कर आऊँ।"

कृतज्ञतासे कुमुदकी आँखें डबडबा आईं।

[४३]

चटर्जी-जमींदारोंके साथ काल्लूका पुराना वंशगत सम्बन्ध है। जितने भी विश्वासके काम होते हैं, वे सब काल्लूके ही हाथसे कराये जाते हैं। उसके पुरखोंमें से किसीको चटर्जियोंके लिए जेल जाना पड़ा था। काल्लू आज विप्रदासकी तरफसे सूदकी किश्त चुकाकर रसीद लेनेके लिए मधुसूदनके आफिसमें आया था। कद उसका नाटा, रंग गोरा और भरा हुआ चेहरा था, आँखें कुछ कञ्जी, बड़ी-बड़ी और उसपर काले सफेद बालोंवाली मोटी-मोटी भौंहे झुक रही थीं, बड़ी-बड़ी घनी सफेद मूंछे थीं, लेकिन सिरके बाल करीब-करीब सब काले थे, बढ़िया देशी शान्तिपुरकी धोती पहने हुए था और मालिकोंकी इज्जतके मुवाफिक पुरानी कीमती जामेवारकी अचकन पहने हुए था। दाहने हाथकी उँगलीमें एक अगूठी है, उसका पत्थर भी कुछ कम कीमतका नहीं है।

काल्लूके कमरेमें घुसते ही कुमुदने उसे प्रणाम किया। दोनों

कार्पेटपर बैठ गये। कालूने कहा—"छोटी लली, अभी तो उस दिन आई हो तुम, लेकिन मालूम होता है कि मानो वर्षोंसे तुम्हें नहीं देखा।"

"भइयाकी कैसी तबीयत है, पहले बताओ।"

"बड़े बाबूके कारण बड़ी चिन्तामें दिन कटे हैं। तुम जिस रोज़ चली आई, उसके दूसरे दिनसे ही बीमारी बहुत बढ़ गई है, लेकिन शरीरमें बहुत ज्यादा ताकत थी, देखते-देखते सब झेल गये। डाक्टरोंको बड़ा आश्चर्य हुआ।"

"भइया कल आ गये?"

"कल आ जानेकी बात तो थी, लेकिन अभी दो-एक दिनकी और देर होगी। पूनो पड़ गई, सबने मना किया, शायद फिर बुखार आने लगे, सो रह गये। खैर, यह तो हो गया, लेकिन तुम्हारी तबीयत अब कैसी है, सो बताओ?"

"मैं तो खूब अच्छी ही हूं।"

कालूने कुछ कहना न चाहा, लेकिन कुमुदके चेहरेका वह लावण्य कहां गया? आंखोंके नीचे यह कालिख कैसी? उसका ऐसा चमकता हुआ सुन्दर चेहरा फीका क्यों पड़ गया? कुमुदके मनमें एक प्रश्न उठ रहा था, लेकिन उससे वह मुँह खोलकर कहते नहीं बनता—"भइयाने मुझे याद करके क्या कुछ कहला नहीं भेजा?" उसके उस अव्यक्त प्रश्नके उत्तरमें ही मानो कालूने कहा—"बड़े बाबूने मेरी मार्फ़त तुम्हारे लिए एक चीज भेजी है।"

कुमुदने व्यग्र होकर कहा—"क्या भेजा है, कहाँ है वह?"

"उसे मैं बाहर ही छोड आया हू।"

"लाये क्यों नहीं ?"

"घबराओ मत, बहन। महाराजने कहा है, उसे वे खुद ही लायेंगे।"

"क्या चीज़ है, मुझे बताओ न ?"

"लेकिन उन्होंने तो मुझसे कहनेकी मनाही कर दी है।"

घरके चारो तरफ अच्छी तरह देख-भालकर कालूने कहा—खूब आदरसे तुम्हे रखा है—बडे बाबूसे जाकर कहूगा, कितने खुश होंगे। पहले-ही-पहल तुम्हारी चिट्ठी पहुचनेमे दो दिनकी देर हो गई थी, सो वे बडे घबराये थे। डाककी कुछ गडबडी हो गई थी, पीछे तीन चिट्ठियाँ उन्हे एक साथ मिलीं।"

डाककी गडबडी कहाँ हुई थी, कुमुदको इस बातका अन्दाज लगानेमे देर न लगी।

कालू भइयाको कुमुद कुछ जलपान करनेके लिए कहना चाहती है, लेकिन हिम्मत नहीं पडती। जरा कुछ संकोचके साथ बोली—"कालू-भइया, अभी तक तुमने कुछ खाया तो होगा नहीं।"

"नहीं, मुझे कलकत्तेमे शामके बाद खाना बर्दाश्त नहीं होता बहन, इसीसे अपने रामसदय वैद्यराजसे मकरध्वज मगाकर खा रहा हू। कुछ विशेष फायदा तो नहीं मालूम होता।"

कालूने समझा था कि अभी घरकी नई बहू है, सब इन्तजामका भार उसके हाथमे नहीं आया है, इसलिए मुँह खोलकर खानेकी बात कह न सकेगी, सिर्फ मन मसोसकर रह जायगी।

इतनेमे मोतीकी माने दरवाजेकी ओटमेसे इशारा करके कुमुदको बुलाकर कहा—"तुम्हारे यहाँसे जो मुकर्जी महाशय आये हैं, उनके लिए भोजन तैयार है। नीचेके कमरेमें उन्हें ले चलो, खिला देना।"

कुमुदने तुरन्त ही आकर कहा—"कालू भइया, चलो, भोजन कर आओ, वैद्यराजकी आज्ञा तुम यहाँ रहने दो, तुम्हें आज खाना ही होगा।"

"बड़ी मुश्किल है। यह तो तुम जबरदस्ती करती हो, बहन, आज रहने दो, और किसी दिन देखा जायगा।"

"नहीं, सो नहीं होगा,—चलो।"

अन्तमें जाकर पता लगा कि मकरध्वजसे काफी फायदा पहुचा है, भूखकी ज़रा भी कमी नहीं पाई गई।

कालू भइयाको खिला-पिलाकर कुमुद अपने ऊपरके कमरेमें चली आई। आज उसका हृदय मायकेकी यादसे भर आया है। अब तो नूरनगरके पीछेवाले बगीचेमें आमके पेडोमे बौर लग गये होंगे। फूले हुए जामुनके पेडके नीचे तालाबके किनारे पक्के घाटके चबूतरेपर बाँहका सिरहाना बनाकर कितनी ही दोपहरियाँ उसने सोकर निताई हैं—मधुमक्खियोंके गुंजनसे, धूप और छायासे चित्रित कैसी अच्छी लगती थीं वे दोपहरियाँ। हृदयमें अकारण एक तरहकी व्यथा-सी मालूम होने लगी, वह जानती न थी कि उसका अर्थ क्या है। उस व्यथाने सन्ध्या-समयकी व्रजकी गोधूलिसे उसके स्वप्नको रंगीन बना दिया। वह समझ नहीं पाई है कि उसके यौवनके अप्राप्त साथीने जल-स्थलमें माया मिला दी है, उसकी युगल-रूपकी उपासनामें वही अप्राप्त साथी दुबका-चोरी खेल रहा है, उसीको वह खींच लाई है अपने चित्तसे

अदृश्यपुरमे 'इसराज'के मुलतानी रागके स्पन्दनमे। मायकेमें उसे अपने प्रथम यौवनके उस अप्राप्त मन-चाहे आदमीका आभास मिलता था—खासकर ऊपरके उस कोठेमें, जहांसे गाँवकी टेढ़ी-मेढ़ी सड़क और सरसोंके फूले हुए खेत दिखाई देते थे, वहाँ बैठकर दीवालकी हरी-काली काईकी रेखाओंके साथ वह अपनी किसी विस्मृत-कहानीकी अस्पष्ट तस्वीर देखा करती थी, सवेरे उठकर ही दुमजिलेपर वह अपने सोनेके कमरेमेंसे दूरके रंगीन आकाशमे नावके सादे पाल देखा करती, मानो दिगन्तके किनारेसे हृदयकी निरुद्देश-कामना चली हो। प्रथम यौवनकी उस मरीचिकाके साथ-ही-साथ वह कलकत्ते आई—अपनी पूजामें, अपने संगीतमे मग्न होकर। वही मरीचिका तो दैवके बहाने उसे अन्धेकी तरह इस विवाहके फन्देमे खींच लाई है, लेकिन कड़ी धूपमें वह खुद ही तो विलीन हो गई।

इस बीचमे न-जाने कब आकर मधुसूदन उसके पीछे खड़ा-खड़ा दीवालमे लगे आईनेमें कुमुदके मुँहका प्रतिबिम्ब देख रहा था। समझ गया कि कुमुदका मन जहाँ भटक रहा है, उस अदृश्य अपरिचितके साथ प्रतियोगिता हरगिज नहीं चल सकती। और कोई दिन होता, तो कुमुदके इस अनमने भावपर वह गुस्सा होता। आज शान्त-विषादके साथ वह कुमुदके पास आकर बैठ गया, बोला—"क्या सोच रही हो, बड़ी-बहू?"

कुमुद चौंक पड़ी। चेहरेका रंग फक हो गया। मधुसूदनने उसका हाथ पकड़कर झकझोर डाला, बोला—"तुम क्या किसी भी तरह मुझे पकड़ाई न दोगी?"

इस बातका उत्तर कुमुदको कुछ सूझ न पडा। क्यों पकड़ाई नहीं देती, यह प्रश्न तो उसके भी मनमे जारी है। मधुसूदन जब कठोर व्यवहार करता था, तब उसके लिए उत्तर सहज था, किन्तु जब वह अपनी हीनता स्वीकार कर लेता है, तो कुमुदसे अपनी निन्दा करनेके सिवा और कुछ जवाब ही देते नहीं बनता। पतिको हृदय-मन अर्पण न कर सकना महापाप है, इस विषयमें कुमुदको ज़रा भी सन्देह नहीं, फिर भी उसकी ऐसी दशा क्यो हुई ? स्त्रियोका एकमात्र लक्ष्य है सती सावित्री होना। उस लक्ष्यसे भ्रष्ट होनेकी दुर्गतिसे वह अपनेको बचाना चाहती है—इसीसे आज व्याकुल होकर उसने अपने पतिसे कहा—"तुम मुझपर दया करो।"

"किस बातके लिये दया करनी होगी ?"

"मुझे तुम अपनी बना लो—हुक्म चलाओ, मुझे सजा दो। मुझे मालूम होता है, मैं तुम्हारे योग्य नहीं।"

सुनकर बड़े दुःखसे मधुसूदनको हँसी आई। कुमुद सतीका कर्त्तव्य पालन करना चाहती है। कुमुद अगर साधारण गृहिणी मात्र होती, तो इतना ही काफी था, लेकिन वह तो उसके लिए मन्त्र-पढ़ी स्त्रीसे बहुत ऊँची है, उस रचनाको पानेके लिए वह जो कुछ भी मूल्य लगाता है, वह सब-कुछ व्यर्थ हो जाता है। बार-बार उसीका रूखापन पकड़ाई दे जाता है। कुमुदके साथ वह अपनी अलघनीय असाम्य व्याकुलताको उत्तरोत्तर बढ़ाता ही जा रहा है।

एक गहरी साँस लेकर मधुसूदनने कहा—"तुम्हे एक चीज दूं, तो तुम क्या दोगी, बताओ ?"

कुमुद समझ गई, भइयाकी दी हुई वही चीज है, वह व्यग्रताके साथ मधुसूदनके चेहरेकी तरफ देखती रही।

"जैसी चीज होगी, दाम भी वैसे ही लिये जायँगे, याद रखना।"—कहकर उसने पलगके नीचेसे रेशमकी खोलीमे बंद इसराज निकाला, और उसकी खोली अलग कर डाली। कुमुदका वही चिर-परिचित इसराज था, हाथी दाँतसे जडा हुआ। मायकेसे आते समय इसे वह छोड आई थी।

मधुसूदनने कहा—"चलो, खुश तो हुई। लाओ, अब दाम चुकाओ।"

मधुसूदन क्या दाम चाहता है, कुमुद कुछ समझ न सकी, उसके चेहरेकी तरफ देखती रही। मधुसूदनने कहा—"इसे बजाकर सुनाओ मुझे।"

यह कोई बडी बात न थी, लेकिन फिर भी उसके लिए यह बहुत ज्यादा था। कुमुदने समझ लिया है कि मधुसूदनके हृदयमें सगीतका रस नामको भी नहीं। उसके सामने इसराज बजानेमे उसे सकोच होता है, उस सकोचको दूर करना कठिन है। कुमुद नीचेको मुह किये इसराजकी छडी लेकर हिलाने लगी। मधुसूदनने कहा—"बजाती क्यों नहीं, बडी बहू, मेरे सामने शरमानेकी क्या बात है ? शरमाओ मत।"

कुमुदने कहा—"स्वर बँधा हुआ नहीं है।"

"तुम्हारे मनका स्वर बँधा हुआ नहीं,—साफ क्यों नहीं कहतीं ?"

बात सच थी, कुमुदके दिलपर तुरन्त चोट पहुची, बोली—"पहले इसे ठीक कर लूँ, तुम्हें और किसी दिन सुनाऊंगी।"

"कब सुनाओगी, ठीक-ठीक बताओ।—कल ?"

"अच्छा, कल सुनाऊगी।"

"शामको, आफिससे लौटनेपर ?"

"हाँ, तभी।"

"इसराज पाकर खूब खुशी हुई है न ?"

"हाँ, बहुत खुशी हुई है।"

दुशालेके भीतरसे एक चमडेका केस निकालकर मधुसूदन बोला—"तुम्हारे लिए म मोतीका हार लाया हु, इसे पाकर तुम उतनी खुश न होगी ?"

इस तरहका पेचीदा प्रश्न क्यों किया जा रहा है ? कुमुद चुपचाप बैठी हुई इसराजकी छडी हिलाती रही।

"समझ गया दरख्वास्त नामजूर !"

कुमुद बातको ठीक समझ न सकी।

मधुसूदनने कहा—"तुम्हारे सीनेके पास अपने दिलकी दरख्वास्त लटका देना चाहता था—लेकिन यहाँ तो पहले ही से मामला डिसमिस हो गया।"

कुमुदके सामने मेजपर हार खुला पडा रहा। दोनोंमें से कोई भी कुछ बोला नहीं—चुप बने रहे। कभी-कभी कुमुदकी

जैसी सपनेकी-सी हालत हो जाया करती थी, वैसी ही अब हो गई। कुछ देर बाद, मानो सचेत होकर कुमुदने हार उठाकर गलेमें पहन लिया, और मधुसूदनको प्रणाम किया। बोली—"तुम मेरा गाना सुनोगे ?"

मधुसूदनने कहा—"हाँ, सुनूगा।"

"अभी सुनाती हू।"—कहकर कुमुदने इसराजका सुर बाँधा। केदारामें अलाप शुरू किया, भूल गई घरमे कोई है या नहीं, केदार अलापते-अलापते पहुच गई छाया नटमें। जो गाना उसे अच्छा लगता था, उसीको गाना शुरू कर दिया—"ठाडे रहो मेरी आँखिनके आगे।" सुरके आकाशमे उस अपूर्व आविर्भावकी रंगीन छाया पड गई, जिसे वह संगीतमे पाती थी—हृदयमे पाती थी, लेकिन सिर्फ आँखोंसे देखनेकी तृष्णा उसको हमेशा लगी रहती थी,—"ठाडे रहो मेरी आँखिनके आगे।"

मधुसूदन संगीतका रस नहीं जानता, लेकिन कुमुदके विश्व-विस्मृत मुखमंडलपर जो सुर खिला हुआ था, इसराजके पर्दे पर कुमुदकी उँगलियोके स्पर्शसे जो छन्द नाच रहा था, उससे उसका हृदय भूमने लगा—मालूम होने लगा कि मानो उसे कोई वरदान दे रहा है। बजाते-बजाते कुमुद सहसा ठिठक गई, देखा कि मधुसूदन उसके मुँहपर आँखें गडाये बैठा है, उसका हाथ रुक गया, सहम गई, बजाना बन्द कर दिया।

मधुसूदनका मन सौजन्यसे भर गया, बोला—"बडी बहू, तुम क्या चाहती हो, बताओ।" कुमुदिनी अगर कहती कि कुछ दिन भइयाकी सेवा करना चाहती हू, तो मधुसूदन उसके लिए भी राजी

हो सकता था, क्योंकि आज वह कुमुदके शील-मुग्ध मुखकी ओर बार-बार देखता हुआ मन-ही-मन अपनेको कह रहा था—"यही तो है, मेरे घरमे आ तो गई लक्ष्मी, कैसा आश्चर्यकारी सत्य है।"

कुमुद इसराजको जमीनपर रखकर, छडी नीचे पटककर चुपचाप बैठी रही।

मधुसूदनने फिर एक बार अनुनयके साथ कहा—"बडी बहू, तुम मुझसे कुछ मांगो। जो तुम चाहोगी, दूँगा।"

कुमुदने कहा—"मुरली बैराको एक जाडेका कपडा देना चाहती हू।"

कुमुद यदि कहती कि कुछ नहीं चाहती, तो भी अच्छा था, परन्तु मुरली बैराके लिए कम्बल। जो सिरका ताज दे सकता है, उससे जूतेका फीता मांगना।

मधुसूदन दग रह गया। मुरलीपर बडा गुस्सा आया। बोला—"नालायक मुरलीने शायद तुम्हें तग किया होगा।"

"नहीं तो, मैंने खुद ही उसे एक अलवान देना चाहा, उसने लिया नहीं। तुम अगर हुक्म दो, तो वह हिम्मत करके ले सकता है।"

मधुसूदन सन्नाटेमे आ गया। कुछ देर चुप बैठा रहा, फिर बोला—"भीख देना चाहती हो। अच्छा देखूँ, कहाँ है तुम्हारा अलवान?"

कुमुद अपने उस ओढे हुए पुराने बादामी रगके अलवानको उठा लाई। मधुसूदनने उसे लेकर खुद ओढ लिया। तिपाई ऊपर

हिम्मत है किसमे। ऊपर जाकर दरवाजेके पास पहुंचते ही उसकी निगाह पडी ताऊके जूतोंपर, वह जहाँ-का-तहा ठिठककर रह गया। भागना ही चाहता था, इतनेमे मालूम हुआ कि उसकी ताई बजा रही है, फिर उससे भागा न गया। दरवाजेकी ओटमे छिपकर सुनने लगा। पहलेसे ही वह ताईको जानता था, फिर आज तो उसके आश्चर्यकी सीमा न रही। मधुसूदनके चले जाते ही मनकी फूलको वह रोक न सका—कमरेमे घुसते ही कुमुदकी गोदमे जाकर उसके गलेसे लिपटकर कानोके पास मुँह ले जाकर बोला—"ताईजी।"

कुमुदने उसे छातीसे लगाकर कहा—"अरे, यह क्या, तुम्हारे हाथ इतने ठडे क्यो हैं। ठंडी हवामे घूम रहे थे मालूम होता है।"

हावलूने कोई जवाब न दिया, वह डर गया। सोचने लगा—ताईजी अभी कहती हैं बिस्तरपर जाकर सोनेके लिए। कुमुदने उसे दुशालेमे लपेटकर अपनी देहकी गरमीसे भरका कर कहा—"अभी तक तुम सोने नहीं गये, गोपाल?"

"तुम्हारा बाजा सुनने आया था। कैसे बजाती हो ताईजी?"

"तुम जब सीख लोगे, तो तुम भी बजा सकोगे।"

"मुझे सिखा दोगी?"

इतनेमे मोतीकी मा आ गई आँधीकी तरह, कमरेमे घुसते ही बोली—"अच्छा, डाकू, तू यहां आ छिपा है क्यो, मैं ढूँढते ढूँढते बावली हो गई। कहाँ तो शामको ज़रा कमरेसे बाहर निकलनेमें डर लगता

है, और अब ताईजीके पास आनेमें डर कहाँ चला गया? चल, सो जाकर।"

हावलू कुमुदको अकड़े रहा।

कुमुदने कहा—"अरे नहीं, रहने दो ज़रा।"

"इस तरह उसकी हिम्मत बढ़ जानेपर आगे चलकर बड़ी मुश्किल होगी, जीजी। इसे सुलाकर मैं अभी आती हूँ।"

कुमुदकी बड़ी इच्छा थी कि वह हावलूको कुछ दे—खानेकी या खेलनेकी कोई चीज। परन्तु देने लायक कुछ है नहीं, इसलिए उसकी मिट्टी लेकर बोली—"आज जाकर सोओ, तुम तो राजा-बेटा हो, कल दोपहरको तुम्हें बाजा सुनाऊँगी, अच्छा।"

हावलू करुण मुँह बनाकर माके साथ सोने चला गया।

थोड़ी देर बाद मोतीकी मा लौट आई। नवीनके षड्यन्त्रका क्या फल हुआ, यह जाननेको उसका मन चंचल हो रहा है। कुमुदके पास आकर बैठते ही निगाह पड़ी नीलमकी अँगूठीपर। समझ गई कि काम हो गया। बात छेड़नेके लिए बोली—"जीजी, तुम्हें यह बाजा किस तरह मिला?"

कुमुदने कहा—"भइयाने भेज दिया है।"

"जेठजीने लाकर दिया होगा तुम्हें?"

कुमुदने संक्षेपमें कहा—"हाँ।"

मोतीकी माको कुमुदके चेहरेपर हर्ष या आश्चर्यका कोई चिह्न ढूँढ़े न मिला।

"अपने भइयाके बारेमें तुमसे कुछ नहीं कहा?"

"नहीं तो।"

"परसो तो वे आ ही जायंगे, उनके पास जानेकी कोई बातचीत नहीं हुई ?"

"नहीं, भइयाके बारेमें कोई बात नहीं हुई।"

"तुमने खुद ही क्यों नहीं कहा, जीजी ?"

"मैं उनसे और सब-कुछ मांग सकती हू, लेकिन यह मुझसे न होगा।"

"तुम्हे मांगना न होगा, तुम यो ही चली जाना, जेठजी कुछ न कहेगे।"

मोतीकी माको अभी तक एक बात मालूम नहीं हुई है कि मधुसूदनकी अनुकूलता कुमुदके लिए एक सकट-सी दिखाई दे रही है, इसके बदले मधुसूदन जो-कुछ चाहता है, कुमुदसे उतना चाहनेपर भी दिया नहीं जाता। उसका हृदय हो गया है दिवालिया, इसीलिए मधुसूदनसे दान लेकर ऋण बढानेमे उसे इतना सकोच होता है। कुमुदिनीकी ऐसी भी इच्छा हुई कि भइया अगर और कुछ दिन ठहरकर आवें, तो वह भी अच्छा हो।

कुछ देर ठहरकर मोतीकी माने कहा—"आज तो ऐसा मा होता है कि जेठजी मानो प्रसन्न हैं।"

सशयसे व्याकुल दृष्टिसे कुमुदिनी मोतीकी माके मुँहकी देखने लगी, बोली—"यह प्रसन्नता किस लिए है, कुछ समझमे आता, इसीसे मुझे डर लगता है। क्या करूँ, कुछ समझमे आता।"

कुमुदिनीकी ठोडी पकडकर मोतीकी माने कहा—"कुछ न करना होगा, इतना भी नहीं समझती तुम, इतने दिनों तक तो वे कारोबारमें ही लगे रहे, तुम जैसी देवियोंको कभी देखा तक नहीं,—अब ज्यों-ज्यों तुम्हें पहचान रहे हैं, त्यों-त्यों तुम्हारा आदर बढ रहा है।"

"ज्यादा देखनेसे ज्यादा पहचानेंगे, ऐसी तो मुझमें कोई चीज है नहीं बहन। मैं खुद ही देख रही हूं, मेरे भीतर बिलकुल पोल है। वह पोल ही दिनपर दिन खुलती रहेगी, इसीलिए अचानक जब देखा कि वे खुश हुए हैं, मुझे मालूम हुआ कि वे ठगे गये। ज्यों ही उन्हें पोलका पता लगेगा, वे और भी गुस्सा हो जायगे। वह गुस्सा ही तो सत्य वस्तु है, इसीसे मैं उनसे उतनी डरती नहीं।"

"तुम अपनी कीमत क्या जानो, जीजी। जिस दिन तुम उनके घर आई हो, उस दिन ही तुम्हारी तरफसे जो कुछ दिया गया है, वे सब मिलकर उसे कभी चुका नहीं सकते। तुम्हारे लालाजीको तो भाभीके लिए सागर-लंघन किये बिना चैन ही नहीं पड रहा है। मैं अगर तुमसे न प्रेम करती, तो इसी बातपर उनके साथ मेरा झगडा हो जाता।"

कुमुद हँसकर बोली—"बड़े भाग्यसे ऐसे देवर मिले हैं।"

"और तुम्हारी यह दौरानी शायद भाग्यकी जगह राहु या केतु होगी, क्यों?"

"तुम दोनोंमें से एकका नाम लेनेसे ही दोनोंका मतलब निकल आता है। दूसरेका नाम लेनेकी जरूरत ही नहीं पडती।"

जायगी, तब शायद सब सह जायगा, परन्तु जीवनमें कभी आनन्द तो नहीं पा सकती।"

"कैसे कहा जा सकता है?"

"बड़ी आसानीसे। आज मेरे मनमें जरा भी मोह नहीं। मेरा जीवन एकदम निर्लज्जकी तरह स्पष्ट हो गया है। अपनेको बहलाये रखनेकी मुझे कहीं भी जरा गुंजाइश नहीं मिलती। मौतके सिवा क्या और कहीं भी स्त्रियोंके लिए सरककर बैठनेकी जरा भी जगह नहीं? उनकी दुनियाको निष्ठुर विधाताने इतना तंग तैयार किया है।"

आज तक ऐसी उत्तेजनाकी बातें कुमुदके मुँहसे मोतीकी माने कभी नहीं सुनीं। खासकर आजके दिन, जब कि जेठजी इतने प्रसन्न हो गये हैं, कुमुदके इस तीव्र अधैर्यको देखकर मोतीकी मा डर गई। समझ गई कि लताकी जड़में जाकर कुल्हाड़ी लगी है, ऊपरसे अनुग्रहका पानी सींचकर माली उसे अब हरी नहीं कर सकता।

जरा ठहरकर कुमुद बोली—"मैं जानती हू, मैं जो पतिको श्रद्धाके साथ आत्म-समर्पण नहीं कर सकी हू, यह मेरे लिए महापाप है, लेकिन उस पापसे भी मुझे उतना डर नहीं, जितना श्रद्धाहीन आत्म-समर्पणकी ग्लानिकी याद करके हो आता है।"

मोतीकी मासे कुछ जवाब देते न बना, वह किं-कर्तव्य-विमूढ़ होकर बैठी रही। जरा देर चुप रहकर कुमुदने कहा—"तुम भाग्यवान हो बहन, न जाने तुमने कितना पुण्य किया

होगा, तभी तो तुम देवरजीको सम्पूर्ण हृदयसे प्रेम कर सकी हो। पहले मैं समझती थी कि प्रेम करना सहज है—सभी स्त्रियां सभी पतियोंसे अपने-आप ही प्रेम करती होंगी। आज देख रही हूं कि प्रेम कर सकना ही सबसे दुर्लभ है, वह तो जन्म-जन्मान्तरकी तपस्यासे ही हो सकता है। अच्छा बहन, सच-सच कहना, सभी स्त्रियां क्या पतिको प्रेम करती हैं?"

मोतीकी मा जरा हंसकर बोली—"बिना प्रेमके भी अच्छी स्त्री बना जा सकता है, नहीं तो संसार चलेगा कैसे?"

"यही दिलासा देती रहो मुझे। और कुछ बन सकूं चाहे नहीं, कमसे कम अच्छी स्त्री तो बन सकूं। पुण्य इसीमें ज्यादा है, कठिन तपस्या तो यही है।"

"बाहरसे उसमें भी बाधाएं पड़ती हैं।"

"अन्तरसे उन बाधाओंको दूर किया जा सकता है। मैं कर सकूंगी, मैं हार न मानूंगी।"

"तुम न कर सकोगी तो कर कौन सकेगा?"

पानी जोरसे पड़ने लगा। हवासे लैम्पका उजेला रह-रहकर चौंक पड़ने लगा। एक साथ जोरकी हवा मानो भीगे निशाचर पक्षीकी तरह पर फटकारकर घरमें घुस आने लगी। कुमुदका शरीर और मन सिहर उठा। उसने कहा—"अपने देवताके नामसे अब मुझे बल नहीं मिल रहा। मन्त्र पढ़ती जाती हूं, लेकिन मन मेरा मुंह फेर लेता है, किसी तरह बोलता ही नहीं। इसीसे मुझे बड़ा डर मालूम होता है।"

बनावटी बातसे झूठा भरोसा देना मोतीकी माको रुचा नहीं। कुछ उत्तर न देकर उसने कुमुदको छातीसे लगा लिया। इतनेमें बाहरसे आवाज आई—"मझली बऊ।"

कुमुदने प्रसन्न होकर कहा—"आओ, आओ देवरजी! भीतर चले आओ।"

"शामको रोशनी मुझे घरमे दिखाई नहीं दी, इसीसे ढूढने निकला हू।"

मोतीकी माने कहा—"बलिहारी है। बिना मणिका फणी देखना हो तो देख लो, जीजी।"

"कौन मणि है और कौन फणी, सो तो फुसकारसे ही मालूम पड जाता है, क्यों बऊरानी।"

"मुझे गवाह मत बनाओ, देवरजी।"

"जानता हू मैं, इसमें मैं ही ठगा जाऊंगा।"

"तो तुम अपनी खोई चीजको उठा ले जाओ, मैं रोकूगी नहीं।"

"खोई चीजके लिए वे बेचैन थोडे ही हैं जीजी, वे इस बहानेसे बऊरानीके चरणोंके दर्शन करने आये हैं।"

"बहानेकी जरूरत क्या है? चरण तो अपने-आप ही पकडाई दे चुके हैं। सबसे बढ़कर जो असाध्य है, उसके लिए तपस्या करेगा कौन? वह जब आता है तो सहज ही मे आ जाता है। दुनियामें हजारों-लाखों आदमी मुझसे कहीं योग्य हैं, लेकिन ऐसे सुन्दर चरणोंको छू सकनेका सौभाग्य मुझे ही हुआ, वे तो नहीं छू सके। नवीनका जन्म यों ही बिना-मूल्य सार्थक हो गया।"

"ओह, तुम न जाने क्या कहते रहते हो देवरजी, जिसका ठीक नहीं। तुम अपनी इन्साइक्लोपीडियासे शायद यह—"

"ऐसी बात नहीं कह सकतीं, बऊरानी। 'चरण' का क्या अर्थ है, सो वे क्या जान सकते हैं ? बकरीके खुरकी तरह पतली एडियों-वाले जूतोंमे देवियोंके पैर उन्होंने कडे जनानखानेमें कैद कर रखे हैं। 'इन्साइक्लोपीडिया' वालोंकी क्या ताक़त है कि वे इन पैरोंकी महिमा समझें। लक्ष्मणने निर्वासनके चौदह वर्ष सिर्फ़ सीताके पैरोंकी तरफ़ देखते हुए ही बिता दिये, इसका अर्थ हमारे देशके देवर ही समझ सकते हैं। सो तुम पैरोंपर साडी ढके देती हो तो दो। डरनेकी कोई बात नहीं, पद्म रातको बन्द रहता है, सो क्या हमेशाके लिए थोडे ही,—पखडियाँ तो फिर खुलती ही हैं।"

"भई 'मनकी बात', इसी तरह स्तुति करके शायद देवरजीने तुम्हारे मनको मोहा होगा ?"

"अरे, बिलकुल नहीं जीजी, ये वो आदमी ही नहीं जो मीठी बातोंका फिजूल-खर्च करते फिरें।"

"स्तुतिकी शायद जरूरत नहीं पडती होगी ?"

"बऊरानी, देवियोंकी स्तुतिकी भूख तो किसी भी तरह नहीं मिटती, इसकी उन्हें सख्त जरूरत है, लेकिन शिवकी तरह मैं कुछ पचानन तो हू नहीं, सिर्फ एक मुखकी स्तुति तो अब उनके लिए पुरानी पड गई है, उससे देवीको अब रस नहीं मिलता।"

इतनेमें मुरली बैराने आकर नवीनको खबर दी—"राजा साहब आफिसमें बैठ आपको याद कर रहे हैं।"

सुनकर नवीनका मन खराब हो गया। उसने सोचा था कि मधुसूदन आज आफिससे आकर सीधे ऊपरके कमरेमे आवेंगे, परन्तु फिर मालूम होता है नाव टापूमे हिल्ग गई।

नवीनके चले जानेपर मोतीकी माने धीरेसे कहा—"लेकिन जेठजी तुम्हें प्यार करते हैं, यह बात याद रखना।"

कुमुदने कहा—"यही तो मुझे आश्चर्य मालूम होता है।"

"कहती क्या हो। तुम्हें प्यार करना आश्चर्य है। क्यो ? वे क्या पत्थरके हैं ?"

"मैं उनके योग्य नहीं हू।"

"तुम जिनके योग्य नहीं, वह पुरुष है कहाँ ?"

"उनकी कितनी शक्ति है, कितना सम्मान है, कितनी पकी हुई बुद्धि है, वे कितने बडे आदमी हैं। मुझमे वे कितना पा सकते हैं ? मैं कैसी कची हू, यह बात मैं दो ही दिनमे यहाँ आकर समझ गई हू, इसीलिए जब वे प्रेम करते हैं, तभी मुझे सबसे ज्यादा डर लगता है। अपनेमे मैं तो कुछ पाती ही नहीं। इतनी बडी पोल लेकर मैं उनकी सेवा करूं तो किस तरह ? कल रातको बैठी-बैठी सोचने लगी—मानो मैं एक बैरग लिफाफा हू, मुझे पैसे देकर लेना पडा है, खोलते ही झट पकडी जाऊंगी कि भीतर चिट्ठी भी नहीं है।"

"जीजी, तुम्हारी बातोंपर तो मुझे हसी आती है। माना कि जेठजीका बडा-भारी कारोबार है, व्यवसाय-बुद्धिमे उनकी बराबरीका नहीं, लेकिन तुम क्या उनके कारबारकी मैनेजरी करने आई हो

जो योग्यता नहीं जानकर डरती हो? जेठजी अगर मनकी बात खोलकर कहें, तो जरूर कहेंगे कि वे भी तुम्हारे योग्य नहीं।"

"यह बात तो उन्होने मुझसे कही थी।"

"विश्वास नहीं हुआ, क्यों?"

"नहीं। मुझे तो उलटा डर मालूम हुआ था। मैंने समझा कि वे मेरे विषयमें गलती कर रहे है, वह भूल कभी न कभी पकड जायगी।"

"क्यो तुमने ऐसा समझा? बताओ।"

"बताऊँ? यह जो सहसा मेरा ब्याह हो गया, यह तो सब कुछ मैंने अपने आप ही रच डाला—परन्तु कैसे अद्भुत मोहसे, कैसे लडकपनसे? जिस बातने उस दिन मुझे भुला रखा था, उसमें तो सब-कुछ पोल-ही-पोल थी। फिर भी ऐसा दृढ विश्वास, ऐसी विलक्षण जिद थी कि उस दिन मुझे कोई भी किसी तरहसे न रोक सकता था। भइया तो निश्चित जानते थे, इसीसे व्यर्थ उन्होंने कोई बाधा नही दी, लेकिन कितने डरे थे, कितने उद्विग्न हुए थे, सो क्या मैं समझती नहीं थी? समझकर भी अपनी जिदको मैंने जरा भी नहीं रोका, इतनी वही नासमझ हू मे। आजसे हमेशा मैं केवल कष्ट ही पाऊँगी, कष्ट दूगी और प्रतिदिन मनमें समझूगी कि यह सब कुछ मेरा अपना बनाया हुआ है।"

मोतीकी मा क्या कहे, उसकी कुछ समझमें ही न आया। कुछ देर चुप रहकर उसने पूछा—"अच्छा जीजी, तुम्हें ब्याह करना है, इस बातका तुमने निश्चय किया क्या सोचकर?

"तब मैं निश्चित जानती थी कि पति भला-बुरा कैसा भी क्यों न हो, स्त्रीके सतीत्व-गौरवके प्रमाणके लिए वह एक उपलक्ष्य-मात्र है। इस विषयमें मुझे जरा भी सन्देह न था कि प्रजापतिने जिसको स्वामी निश्चित कर दिया है, उसीको मैं प्रेम करूँगी। बचपनसे मैंने सिर्फ अपनी माको देखा है, पुराणमें पढा है—कितनी ही कथाएँ सुनी हैं, मुझे मालूम हुआ कि शास्त्रके अनुसार अपनेको चलाना बहुत आसान बात है।"

"जीजी, उन्नीस वर्षकी कुमारीके लिए शास्त्र नहीं लिखे गये हैं।"

"आज समझी हूं कि संसारमें प्रेम तो एक 'ऊपरी आमदनी' है। उसे अलग रखकर ही धर्मको जकडकर संसार-समुद्रमें बहना पडेगा। धर्म यदि सरस होकर फूल न दे—फल न दे, तो कमसे कम वह सूखा बनकर बहाता तो रहे।"

मोतीकी मा स्वयं विशेष कुछ न कहकर कुमुदके मुँहसे ही सब बातें कहला लेने लगी।

[४५]

मधुसूदनने आफिसमे जाकर सुना तो वहाँ भी खबर अच्छी नहीं थी। मद्रासका कोई बडा बैंक फेल हो गया है, जिसके साथ उसकी कम्पनीका व्यापारिक सम्बन्ध था। उसके बाद सुना कि किसी डिरेक्टरकी तरफसे कोई-कोई कर्मचारी

मधुसूदनको बिना जताये ही रजिस्टर वगैरह देख रहे हैं। अब तक मधुसूदनपर सन्देह करनेकी किसीने भी हिम्मत न की थी, एकने ज्यों ही जरा इशारा किया कि मानो चटसे कोई मन्त्रशक्ति-सी छूट गई। बड़े कामकी छोटी त्रुटियाँ पकड़ना बहुत आसान है, जो मातबर सेनापति होते हैं, वे फुटकर हारोंमें ही कुल मिलाकर बहुत ज्यादा जीतते हैं। मधुसूदन हमेशासे ऐसी ही जीतमें रहा है,—इसीसे चुन-चुनकर उन्हीं हारोंपर किसीकी दृष्टि ही नहीं पड़ी। लेकिन, चुन-चुनकर उनकी एक लिस्ट बनाकर अगर साधारण लोगोंके सामने रखी जाय, तो वे अपनी बुद्धिकी तारीफ करते हैं, कहते हैं—हम होते तो ऐसी ग़लती हरगिज न करते। कौन उन्हें समझावे कि टूटी नावपर बैठकर ही मधुसूदन पार हो रहा है, नहीं तो पार होना ही मुश्किल था, दरअसल बात तो यह है कि नाव किनारे तक पहुंच गई। आज, नावको पानीसे बाहर निकालकर उसके छेदोंपर विचार करते समय, उनके तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं, जो सकुशल बाहर आ लगे हैं। इस तरहकी टूक-टूक बिखरी हुई समालोचनासे अनाड़ियोंको चकमा देना सहज है। साधारणत अनाड़ियोंको कुछ सुनाना काफी ही इच्छा रहती है, वे विचार करना नहीं चाहते। लेकिन अगर कहीं वह विचार करने बैठ, तो मामला सुस्पष्ट हो जाता है। इन सब बेवकूफोंपर मधुसूदनको बहुत ही क्रोध आया, जिसमें अवज्ञा भी मिली हुई थी, लेकिन [illegible] [illegible] प्रधानता है, वहां उनके साथ समझौता किये बिना [illegible]

नहीं। पुरानी नसेनी चर्राती है, डगमगाती है, टूट जानेका डर दिखाती है, इसलिए जो उसपर पैर रखकर चढता है, उसे उसकी रक्षा करनी ही पडती है। गुस्सा तो ऐसा आता है कि दे एक लात, सो टूट जाय, लेकिन इससे तो विपत्ति और भी बढ जानेकी सम्भावना है।

अपने बच्चेपर आफत आनेपर सिंहिनी जैसे अपने शिकारका लोभ भूल जाती है, व्यापारके विषयमे मधुसूदनके मनकी अवस्था भी ठीक वैसी ही है। यह तो उसकी अपनी सृष्टि है, इसपर जो उसका दर्द है, वह खासकर रुपयेका दर्द नहीं है। जिसमे रचना-शक्ति है, वह अपनी रचनामे अपनेको ही ज्यादातर पाता है। उतना पानेमे भी जब आफत मालूम होने लगती है, तो उसके लिए जीवनके और सब सुख-दु:ख और कामनाए तुच्छ हो जाती हैं। कुमुदने कुछ दिनोसे उसे प्रबलतासे अपनी ओर आकर्षित किया था, वह आकर्षण आज यकायक ढीला पड गया। जीवनमे प्रेमकी आवश्यकताको मधुसूदनने प्रौढ वयमे बडे जोरोंके साथ अनुभव किया था। यह उपसर्ग जब असमयमे दिखाई देता है, तो निरकुशता (या व्यग्रता) आ ही जाती है। मधुसूदनको कुछ कम चोट नहीं पहुची थी, परन्तु आज उसकी वह वेदना गई कहाँ ?

नवीनके घर आते ही मधुसूदनने उससे पूछा—"मेरी प्राइवेट जमा-खर्चकी बही बाहरके किसी आदमीके हाथ पडी थी क्या, मालूम है तुम्हे ?"

नवीन चौंक उठा, बोला—"यह क्या बात ?"

"तुम्हें इसकी खोज करनी होगी—खजांचीके पास कोई आता-जाता है या नहीं।"

"रतिकान्त तो विश्वस्त आदमी है, वह क्या कभी—"

"उसके अनजानमे मुहर्रिरोंसे कोई बातचीत चला रहा है, सन्देहका यही कारण है। खूब सावधानीसे पता लगाना है, किन लोगोंका हाथ है इसमे।"

नौकरने आकर खबर दी कि रसोई ठंडी हुई जा रही है। मधुसूदन उसकी बातपर कुछ ध्यान न देकर, नवीनसे कहने लगा— "जल्दीसे हमारी गाड़ी तैयार करनेके लिए कह दो।"

नवीनने कहा—"खाकर नहीं जाओगे ? रात हो गई।"

"बाहर ही खा-पी लूंगा, काम है।"

नवीन सिर झुकाये कुछ सोचता हुआ बाहर चला गया। उसने जो चाल चली थी, वह भी शायद खुल जायगी।

यकायक फिर मधुसूदनने नवीनको बुलाकर कहा—"यह चिट्ठी कुमुदको दे आओ।"

नवीनने देखा कि विप्रदासकी चिट्ठी है। समझ गया कि चिट्ठी आज सवेरे ही आई है, शामको अपने हाथसे कुमुदको देनेके लिए उसे इन्होंने अपने पास रख लिया था। इसी तरह हर बार मिलनेके लिए कुछ अर्घ्य हाथमें ले चलनेकी इन्हें इच्छा रहती है। आज आफिसके काममे सहसा तूफान उठ खड़ा होनेसे इनका यह प्रेमोपहार बीच ही मे डूब गया।

मदरासका जो बैंक फेल हुआ

नवीनने कहा—"नहीं-नहीं, बऊरानी, तुमने जरूर समझनेमे भूल की है।"

कुमुदने जोरसे सिर हिलाकर जता दिया कि उसने जरा भी गलती नहीं की।

नवीनने कहा—"तुमने कहाँ गलती की है, बताऊं? विप्रदास बाबूने समझा है कि भाई साहब तुम्हे वहाँ भेजना नहीं चाहेंगे, इसीसे, कहीं तुम्हे अपमानित न होना पडे, उन्होंने तुम्हे बुलानेकी कोशिश नहीं की। कहीं पीछे तुम्हे कष्ट न पहुचे, तुम व्यथित न हो, इस खयालसे, तुम्हें बचानेके लिए उन्होंने अपनी तरफसे ही तुम्हारा रास्ता साफ़ कर दिया है।"

कुमुदको क्षण-भरमे बडा आराम मालूम हुआ। अपनी भीगी आँखोंकी पलकोंको नवीनके मुँहकी ओर उठाकर चुपचाप स्निग्ध दृष्टिसे देखती रही। नवीनकी बात पूर्णतया सत्य है, इस बातमें अब उसे जरा भी सन्देह न रहा। भइयाके स्नेहको समझनेमें क्षण-भरके लिए भी उसने गलती की, इसपर उसने अपनेको मन-ही-मन धिक्कारा। हृदयको एक प्रकारका बल मिल गया। अभी तुरत ही भइयाके पास दौडी न जाकर उनके आनेकी वह प्रतीक्षा जो कर सकेगी, यही अच्छा है।

मोतीकी माने ठोडीसे हाथ लगाकर कुमुदका मुँह उठाया, बोली—"ओ.फ्हो। भइयाकी बातकी जरा भी आडी हवा लगी नहीं कि एकदम अभिमानका समुद्र उमड उठा।"

नवीनने कहा—"बऊरानी, तो कलके लिए तुम्हारे चलनेकी तैयारियाँ करूँ न?"

"नहीं, इसकी कोई जरूरत नहीं।"

"वाह, जरूरत कैसे नहीं? तुम्हे जरूरत नहीं तो न सही, मुझे तो है।"

"तुम्हें जरूरत किस बातकी?"

"वाह। हमारे भइयाको तुम्हारे भइया जैसा कुछ समझेंगे, वैसा ही समझ लेने देंगे हम। अपने भइयाकी तरफसे मैं उनसे लड़ूँगा। तुम्हारे मुकाबिले हार नहीं माननेका। कल तुम्हें उनके यहाँ जाना ही होगा।"

कुमुदिनी हँसने लगी।

"बड़रानी, यह मजाककी बात नहीं है। हमारे घरानेकी अपकीर्तिसे तुम्हारा गौरव घटता है। अब तुम मुँह-हाथ धोओ, खाओ, भोजन करना है। भाई साहबका तो आज मैनेजर साहबके यहाँ न्योता है। मैं समझता हूँ, शायद आज वे भीतर सोने भी न आयेंगे, मैं देख आया हूँ, बाहरके कमरेमें उनके बिस्तर लग गये हैं।'

इस समाचारसे कुमुदको भीतर-ही-भीतर कुछ आराम मिला, उसके दूसरे ही क्षण आराम मिलनेपर उसे शरम मालूम हुई।

रातको, सोते समय, मोतीकी माके साथ नवीनकी इस बारेमें बातचीत होने लगी। मोतीकी माने कहा—"तुमने तो जीजीको दिलासा दे दी, लेकिन अब?"

"लेकिन अब क्या? नवीनकी जबान और काम एक है। बड़रानीको जाना ही पड़ेगा, फिर जो होगा सो देखा जायगा।'

नये-बने राजाओंको पारिवारिक सम्मानका ज्ञान बहुत ही कम होता है। ये निश्चयपूर्वक समझ लेते हैं कि विवाह हो जानेके बाद नववधू अपने पूर्व पदसे बहुत ऊपर चढ़ गई है, इसलिए उसके मायका नामकी कोई बला है, इस बातको भूलने देना ही ठीक है। ऐसी दशामें दोनों ओर रक्षा करना यदि असम्भव मालूम हो, तो कम-से-कम एक ओरकी रक्षा तो करनी ही चाहिए। वह 'ओर' कौनसी है, उसका नवीनने मन-ही-मन निर्णय कर लिया। कुछ दिन पहले वह इस बातकी स्वप्नमें भी कल्पना न कर सकता था कि जहाँ भाई साहबका चरम अधिकार है, वहाँ भी किसी दिन भाई साहबके साथ लड़ाई छेड़नेका साहस वह कर सकेगा।

पति-पत्नीने परामर्श करके निश्चय किया कि यह प्रस्ताव मधुसूदनके सामने रखा जाय कि कल सवेरे कुमुद सिर्फ एक दफे विप्रदासके साथ कुछ देरके लिए भेंट कर आवे। अगर भाई साहब राजी हुए और कुमुदको वहाँ भेजा गया, तो दो-चार दिन कुमुदके वहीं बने रहनेका कयासमें आने लायक बहाना बनानेमें नवीनको कुछ भी कठिनाई न होगी।

मधुसूदन बहुत रात बीते घर आया, साथमें था कागज-पत्रोंका बोझा। नवीनने झाँककर देखा भाई साहब सोनेकी तैयारी न करके नाकपर चश्मा लगाकर नीली पेन्सिल हाथमें लिये आफिस-रूमकी टेबिलपर किसी दस्तावेजपर निशान लगा रहे हैं और बीच-बीचमें नोट-बुकमें कुछ नोट भी करते जाते हैं।

नवीन हिम्मत बाँधकर कमरेमें घुस पड़ा, और बोला—"भाई साहब, मैं भी कुछ काम करवाऊँ तुम्हारे साथ?"

मधुसूदनने संक्षेपमें कहा—"नहीं।" व्यापारके इस संकटको मधुसूदन पूरी तौरसे स्वयं समझ लेना चाहता है, सब बातोंपर उसकी दृष्टि पड़ना आवश्यक है, इस काममें औरकी दृष्टिकी सहायता लेना अपनेको कमजोर बनाना है।

नवीनको कुछ कहनेका बहाना न मिला, तो वापस चला आया। और यह बात भी उसकी समझमें आ गई कि जल्दी कोई मौका भी नहीं मिलनेका। नवीनकी प्रतिज्ञा है कि कल सबेरे ही बड़ी रानीको रवाना कर देगा। आज रात ही को उसके लिए सम्मति वसूल कर लेनी चाहिए।

कुछ देर बाद एक लैम्प भाई साहबकी टेबिलपर रखकर नवीनने कहा—"रोशनी बहुत कम थी।"

मधुसूदनने अनुभव किया—इस दूसरे लैम्पसे उसके काममें बहुत कुछ सुभीता हुआ, परन्तु इस बहानेसे भी कोई बात न हो सकी, और नवीनको फिर बाहर चला आना पड़ा।

थोड़ी देर बाद नवीनने गुड़गुड़ीपर सुलगी हुई चिलम रखकर मधुसूदनके अभ्यासके अनुसार उसे चौकीके बाईं तरफ़ रखके आहिस्तेसे उसकी नली टेबिलपर धर दी। मधुसूदनने उसी वक्त महसूस किया कि इसकी भी जरूरत थी। क्षण-भरके लिए पेन्सिल रखकर वह हुक्का पीने लगा।

मौका पाकर नवीनने बात छेड़ दी—"भाई साहब, सोन नहीं

जाओगे ? बहुत रात हो चुकी है। बऊरानी तुम्हारे लिए शायद बैठी जाग रही होंगी।"

"बैठी जाग रही होगी"—यह बात क्षण-भरमें मधुसूदनके कलेजेमें जाकर चुभ गई। पानीकी ऊँची लहरोंपर जहाज जब डगमगाता हुआ चल रहा था, एक छोटीसी चिड़िया आकर मानो उसके मस्तूलपर बैठ गई। क्षुब्ध समुद्रके भीतर क्षण-भरके लिए मानो श्यामल द्वीपकी एकान्त वनच्छायाका दृश्य सामने आ गया, परन्तु इन सब बातोंपर ध्यान देनेके लिए अभी समय नहीं—जहाज चलाना होगा।

मधुसूदन अपने मनकी इस जगसी चंचलतासे डर गया। उसी समय उसने उसे धर दबाया, और बोला—"बड़ी बहूसे कह दो कि सो जायँ, मैं आज बाहर सोऊँगा।"

"नहीं तो उन्हे यहीं भेज दूँ"—कहकर नवीन गुड़गुड़ीकी चिलम फूँकने लगा।

मधुसूदनने यकायक झुँझलाकर कहा—"नहीं, नहीं।"

नवीन इतनेपर भी विचलित न हुआ, बोला—"वे जो बैठी हैं तुम्हारे साथ दरबार करनेको।"

रूखे स्वरमे मधुसूदनने कहा—"अभी दरबारके लिए वक्त नहीं।"

"तुम्हारे पास तो वक्त नहीं, भाई साहब, लेकिन उनके पास भी तो समय थोड़ा है।"

"क्या, हुआ क्या है ?"

"खबर आई है कि विप्रदास कलकत्ते आ गये हैं, इसीसे बड़रानी कल सवेरे—"

"सवेरे जाना चाहती हैं ?"

"ज्यादा देरके लिए नहीं, सिर्फ एक बार जा—"

मधुसूदनने जोरसे हाथ हिलाकर कहा—"हाँ, सो जाती क्यों नहीं, जायँ, चली जायँ। बस, अब नहीं, तुम जाओ।"

हुक्म वसूल होते ही नवीन वहाँसे भागा। बाहर निकला ही था कि मधुसूदनकी आवाज कानोंमें पहुची—"नवीन।"

डर मालूम हुआ कि फिर शायद भाई साहब हुक्म वापस न ले लें। कमरेमें आकर खडे होते ही मधुसूदनने कहा—"बडी बहू अभी कुछ दिन अपने भइयाके यहाँ ही जाकर रहेंगी, तुम सब इन्तजाम कर देना।"

नवीनको भय हुआ कि भाई साहबके इस प्रस्तावपर उसके चेहरेसे कहीं उत्साह न प्रकट हो जाय। यहाँ तक कि वह जरा दुविधाका भाव दिखाकर सिर खुजाने लगा। बोला—"बड़रानीके चले जानेसे घर सूना-सूना-सा मालूम देगा।"

मधुसूदन कुछ जवाब न देकर पेचवानकी नली रखकर अपने काममें जुट गया। समझ गया कि प्रलोभनका रास्ता अभी तक खुला हुआ है—उधर बिलकुल नहीं।

नवीन खुश होकर चला गया। मधुसूदनका काम चलता रहा, परन्तु कब इस 'काम' की धाराके पाससे और एक उल्टी मानस-धारा खुल पड़ी, इस बातको बहुत देर तक वह खुद ही

न समझ सका। मालूम नहीं कब, नीली पेन्सिलने जरूरत पूरी होनेसे पहले ही रुख़सत ले ली, पेचवानकी नली पहुंच गई मुहमे। दिनसे मधुसूदनके मनने जब कुमुदकी चिन्ताके विषयमे बिलकुल छुट्टी ले रखी थी, तब पिछले दिनोंकी तरह अपनेपर अपना एकाधिपत्य पुन. प्राप्त हो जानेसे मधुसूदन बहुत खुश हुआ था, परन्तु अब ज्यों-ज्यो रात बीतती जाती है, त्यों-त्यो उसे सन्देह होने लगा कि शत्रु दुर्ग छोडकर अभी भागा नहीं है—सुरगकी कोठरीमे दुबका हुआ है।

वर्षा थम गई है, कृष्णपक्षका चन्द्रमा बगीचेके एक कोनेमे खडे पुराने सीसमके पेडके ऊपर आकाशमे चढकर भीगी हुई पृथ्वीको विह्वल कर रहा है। ठंडी हवा चल रही है। मधुसूदनका शरीर रजाईके भीतर किसी गरम कोमल स्पर्शके लिए मॉग पेश करने लगा, नीली पेन्सिलको जोरसे दबाकर वह रजिस्टरोपर झुक पडा, परन्तु उसके हृदयके गम्भीर आकाशमे एक बात क्षीण किन्तु स्पष्ट आवाजके साथ गूँजने लगी—"बडरानी शायद बैठी जाग रही होंगी।"

मधुसूदनने प्रतिज्ञा की थी कि कोई एक खास काम आज वह रातको पूरा कर ही रखेगा। वह कल सवेरे तक पूरा होता, तो भी कोई हानि न थी, लेकिन प्रतिज्ञाका पालन करना उसके व्यवसायकी धर्मनीति है। किसी भी कारणसे यदि उससे वह भ्रष्ट हो जाय, तो अपनेको वह किसी भी तरह माफ नहीं कर सकता। अब तक उसने अपने धर्मकी रक्षा बडी कठोरतासे ही की है। उसका पुरस्कार भी उसे काफी मिला है, परन्तु

इधर कुछ दिनोंसे दिनके मधुसूदनके साथ रातके मधुसूदनका सुर नहीं मिलता—एक वीणाके दो तारोंकी तरह। जिस दृढ़ प्रतिज्ञाको करके वह इसपर झुककर जमके बैठा था—जब बहुत रात हो गई, तो उस प्रणकी किसी एक संधमेंसे एक उक्ति भौंरेकी तरह भनभनाने लगी—"बड़-रानी शायद बैठी जाग रही होगी।"

उठ बैठा। बत्ती बिना बुझाये, कागजात रजिस्टर वगैरह ज्यों-के-त्यों छोड़कर चल दिया ऊपर अपने सोनेके कमरेकी तरफ। अन्तःपुरमें, तिमंजिलेपर जानेके रास्तेमें आँगनको घेरे हुए जो बरामदा पड़ता है, उस बरामदेमें रेलिंगके किनारे श्यामासुन्दरी बैठी थी। चन्द्रमा उस समय बीच आकाशमें था, उसकी चाँदनीने आकर उसे घेर लिया है। उस समय वह ऐसी दिखाई दे रही थी, मानो किसी उपन्यासके भीतरकी तसवीर हो, अर्थात् मानो वह रोजमर्राकी आदमिन नहीं है, बहुत पासके अत्यन्त परिचयके आवरणसे निकलकर मानो वह बहुत दूर आ पहुँची है। वह जानती थी कि मधुसूदन इसी रास्तेसे सोनेके लिए ऊपर जाता है—जानेका यह दृश्य उसके लिए अत्यन्त तीव्र वेदनामय है, इसीसे उसका आकर्षण इतना प्रबल है, परन्तु केवल व्यर्थ वेदनासे अपने कलेजेको छलनी कर डालनेका पागलपन ही उसकी इस प्रतीक्षाका कारण नहीं, बल्कि उसमें एक आशा भी है—शायद क्षण-भरके लिए कुछ हो जाय, असम्भव कब सम्भव हो जाय, इसी आशासे रास्तेके किनारे बैठकर वह जगना है।

"तुम जो मेरे इस बिस्तरपर लेट सकी हो, इसलिए।"

कुमुद उसी वक्त बिस्तरेसे उठकर बगलके कमरेमे चली गई।

मधुसूदन बाहर चल दिया—रास्तेमे देखा कि श्यामासुन्दरी उसी तरह बरामदेमे औंधी पड़ी हुई है। मधुसूदनने पास जाकर झुककर उसे उठाना चाहा, बोला—"क्या कर रही हो, श्यामा?" सुनते ही श्यामा झटसे उठकर बैठ गई, मधुसूदनके पैरोंको छातीसे लगाकर गद्गद कंठसे बोली—"मुझे मार डालो तुम।"

मधुसूदनने हाथ पकड़कर उसे खड़ा कर दिया, बोला—"अरे तुम्हारी देह तो बिलकुल ठंडी हो रही है। चलो तुम्हे सुला आऊँ।" कहकर उसे अपने दुशालेमें लेकर दायाँ हाथ जोरसे दबाकर उसके कमरेमे ले गया। श्यामाने चुपकेसे कहा—"जरा बैठोगे नहीं?"

मधुसूदनने कहा—"काम है मुझे।"

रातको न जाने कहाँसे भूत सवार हो गया, जो मधुसूदनका तमाम काम चौपट कर देना चाहता है,—बस, अब नहीं। इतना तो वह समझ गया कि कुमुदकी तरफसे उसको जो उपेक्षा हुई है, उसकी क्षति-पूर्तिका भंडार और भी कहीं जमा है। प्रेमके भीतर मनुष्य अपना जो परम मूल्य अनुभव करता है, आज रातको उसके अनुभव करनेकी जरूरत मधुसूदनको थी। श्यामासुन्दरी सारे जीवन और मनसे उसके लिए प्रतीक्षा किये हुए है, इस सान्त्वनाको पाकर मधुसूदनमें आज रातमे काम करनेका जोर आ गया। जिस अपमानका काँटा उसके कलेजेमे चुभ रहा है, उसका दर्द बहुत कुछ कम हो गया।

इधर रातको कुमुदको जो धक्का पहुंचा, उसमें उसकी एक सान्त्वना थी। जितनी बार मधुसूदनने उससे प्रेम दिखाया है, उतनी ही बार कुमुदके हृदयमें खींचतान मची है। प्रेमके मूल्यसे ही यह कर्ज अदा करना चाहिए, इस कर्तव्यकी समझने उसे बहुत ही चंचल कर दिया है। इस लड़ाईमें कुमुदको जीतनेकी कोई आशा न थी, परन्तु यह पराजय बड़ी भद्दी है, कुमुदने उसे दबाये रखनेकी बार-बार और जी जानसे कोशिश की है। कल रातको वह दबी हुई पराजय एक ही क्षणमें बिलकुल पकड़ाई दे गई। कुमुदकी असावधान दशामें मधुसूदनने स्पष्टतया देख लिया कि कुमुदकी सारी प्रकृति मधुसूदनकी प्रकृतिके विरुद्ध है, यह अच्छा ही हुआ कि निश्चित-रूपसे जान लिया। इसके बाद परस्पर एक दूसरेके साथ अकपट भावसे अपना कर्तव्य पालन तो भी कर सकेंगे। मधुसूदन जहाँ उसे चाहता है, समस्या तो उसी जगह है, क्षोभके साथ जहाँ वह उसे वर्ज्जन करना चाहता है, सत्य वहीं है। सचमुच ही मधुसूदनके बिस्तरपर सोनेका अधिकार उसे नहीं है। सोकर वह सिर्फ उसे धोखा दे रही है। इस घरमें उसका जो पद है, वह तो विडम्बना है।

आज रातको बस यही एक प्रश्न बार-बार उसके मनमें उठ रहा है—"मेरे कारण उन्हें इतनी अड़चन क्यों?" बात-बातमें मधुसूदन नूरनगरी चालका जिक्र करके कुमुदपर चुटकी लिया करता है, इसके मानी यह हुए कि कुमुदका स्वभाव उन लोगोंसे बिलकुल अलग है, जात अलग है, लेकिन फिर क्यों मधुसूदन उससे प्रेम दिखाता है? यह क्या कभी सच्चा प्रेम हो सकता है? कुमुदका दृढ़ विश्वास है कि

यहाँ तुम्हारा यथार्थ सम्मान है, उन्हींके यहाँ रहो तुम। जब कभी किसी कारणसे नवीनकी जरूरत हो, याद करना।"

मोतीकी माने अपने हाथकी बनी अमावट, अचार वगैरह एक मट्टीके बरतनमें रखकर उसे पालकीमें रख दिया। विशेष कुछ बोली नहीं, लेकिन मनमें उसके आपत्ति बहुत ज्यादा थी। जब तक बाधा स्थूल थी, जब तक मधुसूदनने कुमुदका बाहरसे अपमान किया है, तब तक मोतीकी माका सारा हृदय कुमुदके पक्षमें था, लेकिन जो बाधा सूक्ष्म है, जो मर्मगत है, विश्लेषण करके जिसके नामका निर्णय करना कठिन है, उसकी शक्ति इतनी प्रबलतम है, यह बात मोतीकी माके लिए सहज नहीं है। स्वामी जिस क्षणमें प्रसन्न होंगे, उसी क्षण शीघ्र ही स्त्री उसे अपना सौभाग्य समझेगी, मोतीकी मा इसीको स्वाभाविक मानती है, इसके व्यतिक्रमको ज्यादती। और तो क्या, इस बातपर भी उसे गुस्सा आता है कि अभी तक बऊरानीके विषयमें नवीनके हृदयमें दर्द है। कुमुदकी स्वाभाविक अरुचि बिलकुल अकृत्रिम है, जिसमें अहंकार नहीं, यहाँ तक कि इसीके कारण कुमुदको अपने ही साथ अपना दुर्जय विरोध है, साधारणतः स्त्रियोंके लिए यह बात मान लेना कठिन है। जिस चीनी लड़कीने वहाँकी प्रथाके अनुसार अपने पैर विकृत करनेमें आपत्ति नहीं की, वह अगर सुने कि संसारमें ऐसी लड़कियाँ भी हैं जो अपने इस पद-सङ्कोचकी पीड़ाको स्वीकार करना अपमानजनक समझती हैं, तो अवश्य ही वह उन छिपकिचाहटको हँसके उड़ा दे—

विप्रदास और अबके विप्रदास—दोनोंमें मानों कई युगोंका अन्तर है। भइयाके पैरों तले सिर रखकर कुमुद रोने लगी।

"अरे, कुमुद! आ गई तू? आ, यहाँ आ।"—कहकर विप्रदासने उसे पासमें खींच लिया। यद्यपि चिट्ठीमें विप्रदासने उसे आनेको एक तरहसे मनाई की थी, फिर भी उन्हें आशा थी कि कुमुद आयेगी। जब देखा कि कुमुद आ सकी है, तो उन्होंने समझा कि शायद अब कोई बाधा नहीं रही—कुमुदके लिए उसकी घर-गिरस्ती अब सहज हो गई है। कुमुदको लिवानेके लिए इनकी तरफ़से ही प्रस्ताव, पालकी और आदमी भेजनेकी व्यवस्था होनी चाहिए थी—नियम तो ऐसा ही है—लेकिन ऐसा न होनेपर भी कुमुद चली आई, विप्रदासने इससे उसकी जितनी स्वाधीनताकी कल्पना कर ली, उतनी स्वाधीनताकी प्रत्याशा उन्होंने मधुसूदनके घर कभी भी किसी हालतमें नहीं की थी।

कुमुदने दोनों हाथोंसे विप्रदासके बिखरे हुए बालोंको ज़रा सम्हालते हुए कहा—"भइया, तुम्हारा चेहरा कैसा हो गया है।"

"मेरा चेहरा अच्छा हो, इधर ऐसी तो कोई घटना हुई नहीं—लेकिन तेरी यह क्या हालत हो गई। बिल्कुल फ़र्क़ पड़ गई है।"

इतनेमें खबर पाकर क्षेमा-बुआ आ पहुचीं। साथ ही दरवाज़ेके पास नौकर-नौकरानियोंकी भीड़ जमा हो गई। क्षेमा-बुआको प्रणाम करते ही बुआने उसे छातीसे चुपटाकर माथा चूमा। नौकर-चाकरोंने आकर पैर छुए। सबके साथ कुशल सम्भाषण हो जानेके बाद कुमुदिनीने कहा—"बुआ, भइयाका चेहरा बहुत खराब हो गया है।"

"यों ही थोड़े ही हो गया है। तुम्हारे हाथकी सेवा न मिलनेसे उनकी देह किसी भी तरह सुधरना ही नहीं चाहती। कितने दिनोंका अभ्यास है, कोई ठीक है।"

विप्रदासने कहा—"बुआ, कुमुदको खानेके लिए न कहोगी?"

"खायगी नहीं तो क्या। उसकी भी कहनी पड़ेगी क्या? पालकीवालों और दरवान वगैरह सबको बिठा आई हू, जाऊँ, उन्हें खिला आऊँ। तब तक तुम दोनों बैठे बातें करो, मैं जाती हू।"

विप्रदासने क्षेमा-बुआको इशारेसे पास बुलाकर उनके कानमें कुछ कह दिया। कुमुदने समझा कि उसकी ससुरालसे आये हुए आदमियोंकी किस ढंगसे विदा की जायगी, उसीका परामर्श किया गया है। इस परामर्शमें कुमुद आज दूसरे पक्षकी हो गई है। उसकी कोई राय ही नहीं। यह उसे जरा भी अच्छा न लगा। कुमुद भी इसका बदला लेनेपर उतारू हो गई। इस घरमें उसका जो चिरकालसे स्थान चला आया है, उसपर उसने दुबारा दखल जमानेका काम शुरू कर दिया।

पहले तो भइयाके खानसामा गोकुलको फुस-फुस करके कुछ हुक्म दिया, फिर लगी अपने मनका-सा घर सजाने। प्लेट, प्याला, लैम्प, सोडा-वाटरकी खाली बोतल, फटी बेंतकी चौकी, मैले तौलिये और बनियाइनें—एक तरफसे सब हटाकर बरामदेमें रख दिये। सेल्फपर किताबें ठीकसे सजा दीं, भइयाके हाथके पास एक तिपाई सरकाकर रख दी, और उसपर सजा दीं पढ़नेकी किताबें, कलमदान, ब्लाटिंग-पैड, पीनेके पानीकी कांचकी सुराही और गिलास, छोटासा एक शीशा, कंघी और ब्रुश।

इतनेमें गोकुल एक पीतलके 'जग' मे गरम पानी, पीतलकी एक चिलमची और साफ तौलिया ले आया और उसने ये चीजें पँलंगके मूढ़ेपर रख दीं। भइयाकी सम्मतिकी जरा भी प्रतीक्षा न करके कुमुदने गरम पानीमे तौलिया भिगोकर उनका मुँह-हाथ अगोछकर बाल काढ दिये, विप्रदासने शिशुकी तरह चुपचाप सह लिया। कब कौनसी दवा पिलाना और पथ्यके नियम सब जानकर वह इस तरह मुस्तैद होकर बैठी कि मानो उसके जीवनमें और कहीं भी कोई दायित्व नहीं है।

विप्रदास मन ही मन सोचने लगे—इसका क्या अर्थ? सोचा था—मिलने आई है, फिर चली जायगी, लेकिन लक्षण तो एसे नहीं दिखाई देते। विप्रदास जानना चाहते हैं कि ससुरालमें कुमुदका सम्बन्ध कैसा और कहाँ तक पहुचा है, मगर साफ-साफ पूछनेमें उन्हे सकोच मालूम हो रहा है। कुमुद अपने ही मुहसे सुनायगी, इस आशामें रहे। सिर्फ आहिस्तेसे एक बार पूछा—"आज तुझे जाना कब होगा?"

कुमुदने कहा—"आज नहीं जाना होगा मुझे।"

विप्रदासने विस्मित होकर पूछा—"इसमे तेरे ससुराल-वालोंको कोई आपत्ति तो नहीं है?"

"नहीं तो, मेरे पतिकी सम्मति है।"

विप्रदास चुप बने रहे। कुमुद घरके एक कोनेमे टेबिलपर चादर बिछाकर उसपर दवाकी शीशी, बोतल आदि ठीक ढगसे सजा कर रखने लगी। थोडी देर बाद विप्रदासने पूछा—"तो क्या तुझे कल जाना पडेगा?"

"नहीं तो, अभी तो मैं कुछ दिन तुम्हारे ही पास रहूगी।"

टाम कुत्ता कोचके नीचे शान्त होकर निद्रा देवीकी साधनामें नियुक्त था, कुमुदने उसपर लाड करके उसके प्रीतिउच्छ्वासको असंयत कर दिया। उसने उछलकर कुमुदकी गोदके ऊपर दोनों पैर उठाकर अपनी भाषामें ऊंचे स्वरमें अलापना शुरू कर दिया। विप्रदासने समझ लिया कि कुमुदने यकायक कोई गोलमालकी सृष्टि करके उसके पीछे अपनी आड कर ली है।

कुछ देर बाद कुत्तेके साथ खेलना बन्द करके कुमुदने मुँह उठाकर कहा—"भइया, तुम्हारा बार्ली पीनेका वक्त हो गया, ले आऊं?"

"नहीं, वक्त नहीं हुआ"—कहकर इशारा करके कुमुदको खाटके पास चौकीपर बिठा लिया। अपने हाथपर उसका हाथ लेकर कहा—"कुमुद, मुझसे तू खोलकर कह, कैसे चल रहा है तेरे यहाँ?"

तुरत ही कुमुद कुछ कह न सकी। सिर नीचा किये बैठी रही, देखते-देखते चेहरा हो गया सुर्ख, बचपनकी तरह भइयाके प्रशस्त वक्षस्थलपर मुँह रखकर रो उठी, बोली—"भइया, मैंने सब-का-सब ग़लत समझा, मैं कुछ जानती न थी।"

विप्रदास धीरे-धीरे कुमुदके माथेपर हाथ फेरने लगे। थोडी देर बाद बोले—"मैं तुझे ठीकसे शिक्षा नहीं दे सका। मा होतीं, तो तुझे ससुराल जाने लायक बना देतीं।"

कुमुदने कहा—"मैं शुरूसे केवल तुम्हीं लोगोंको जानती हूं, यहासे दूसरी जगह जाकर इतना फरक पाऊंगी, इसकी मैंने कल्पना भी न की थी। बचपनसे मैंने जितनी भी कल्पना की है, सब तुम्हीं लोगोंके सांचेमें। इसीसे जरा भी मनमें डरी नहीं। मैं जानती हूं,

मामाको बहुत बार बाबूजीने कष्ट दिये हैं, लेकिन वह उनका था उपद्रव, उसकी चोट बाहरी थी, भीतरी नहीं। यहां तो सारा-का-सारा मानो भीतरी अपमान है मेरा।"

विप्रदास कोई बात न कहकर, लम्बी सांस भरकर, चुपचाप बैठे-बैठे सोचते रहे। यह बात तो वे उस विवाहके अनुष्ठानके आरम्भमें ही समझ गये थे कि मधुसूदन उन लोगोंसे बिलकुल अलग दूसरी ही दुनियाका आदमी है। उसीके विषम उद्वेगसे ही, मालूम होता है, उनका शरीर किसी भी तरह स्वस्थ नहीं हो रहा है। इस दिङ्नागके स्थूल हस्तावलेपसे कुमुदके उद्धार करनेका तो कोई उपाय नहीं है। सबसे ज्यादा मुश्किल यह है कि इस आदमीके हाथ ऋणसे उनकी सम्पत्ति रहनमें पड़ी है। इस अपमानित सम्बन्धकी मार कुमुदको भी सता रही है। इतने दिनों रोग-शय्यापर पड़े-पड़े विप्रदास बार-बार केवल यही सोचा करते हैं कि मधुसूदनके इस ऋणके बन्धनसे किस तरह छुटकारा मिले। कलकत्ते आनेकी उनकी इच्छा नहीं थी, इसलिए कि कहीं कुमुदकी ससुरालमें उनका सहज (स्वाभाविक) व्यवहार असम्भव न हो जाय। कुमुदपर उनका जो स्वाभाविक स्नेहका अधिकार है, कहीं वह पद-पदपर लाञ्छित न होने लगे, इसीसे निश्चय किया था कि नूरनगरमें ही रहेंगे। कलकत्ते आनेके लिए मजबूर हुए इसलिए कि किसी महाजनसे कर्ज़ मिल जाय तो अच्छा हो। जानते हैं कि यह बड़ा मुश्किल काम है, इसीसे इसकी दुश्चिन्ताका बोझ उनकी छातीपर सवार है।

कुछ देर बाद, कुमुदने विप्रदासकी ओरसे गरदनको ज़रा दूसरी

ओर फेरकर कहा—"अच्छा, भइया, पतिपर किसी भी तरह मैं मनको प्रसन्न नहीं कर पाती,—यह क्या मेरा पाप है ?"

"कुमुद, तू तो जानती है, पाप-पुण्यके सम्बन्धमें मेरा मत शास्त्रोंसे नहीं मिलता।"

अन्यमनस्क होकर कुमुद एक सचित्र अंग्रेजी मासिक पत्रके पन्ने उलटने लगी। विप्रदासने कहा—"भिन्न-भिन्न मनुष्योंका जीवन अपनी घटनाओं और अवस्थाओंमें परस्पर इतना अधिक भिन्न हो सकता है कि अच्छे-बुरेके साधारण नियमोंको खूब पक्का करके बाँध देनेपर भी बहुधा वह 'नियम' ही हो जाते हैं—धर्म नहीं।"

कुमुदने मासिक पत्रकी ओर नीचेको निगाह किये हुए ही कहा—"जैसे मीरा बाईका जीवन।"

अपने भीतर कर्तव्य-अकर्तव्यका द्वन्द्व जब कभी भी कठिन हो उठा है, उसी समय कुमुदको मीरा बाईकी बात याद आई है। एकाग्र चित्तसे वह चाहती है कि कोई उसे मीरा बाईके आदर्शको अच्छी तरह समझा दे।

कुमुद जरा कोशिश करके सकोचको दूरकर कहने लगी—"मीरा बाई अपने यथार्थ स्वामीको अपने हृदयमें ही पा गई थीं—इसीसे सामाजिक स्वामीको वह इस तरह मनसे छोड सकी थीं, लेकिन घर-गिरस्तीको छोडनेका उतना बड़ा हक़ क्या मुझे है ?"

विप्रदासने कहा—"कुमुद, अपने भगवानको तूने तो सम्पूर्ण मनसे ही पाया है ?"

"किसी समय ऐसा भी समझती थी, मगर जब संकटमें पड़ी,

तो देखा कि प्राण मेरे कैसे सूख-से गये हैं, इतनी कोशिश की, लेकिन किसी भी तरह अपने आगे उन्हें मैं सत्य रूपमें नहीं ला पाई। मुझे सबसे बड़ा दुःख तो यही है।"

"कुमुद, मनके अंदर ज्वार-भाटा खेला करता है। कुछ डर मत कर, बीच-बीचमें रात आती है, यह ठीक है, लेकिन इससे दिनका नाश तो नहीं होता। जो कुछ पाया है, तेरे प्राणोंके साथ वह एक हो गया है।"

"यही असीस दो, भइया, जिससे उन्हें न भूल जाऊँ। निर्दयी हैं ये, दुःख देते हैं—अपनेको देंगे इसीलिए।"

"भइया, अपने लिए सोच करा-कराकर मैं तुम्हें थकाये देती हू।"

"कुमू, तेरे बचपनसे ही तेरे लिए सोचनेका मुझे जो अभ्यास पड़ गया है। आज अगर तेरी बात जानना बन्द हो जाय—तेरे लिए सोच न पाऊ, तो मुझे सूना मालूम पड़ता है। उस शून्यताको टटोलते-टटोलते ही तो मेरा मन थक गया है।"

कुमुद विप्रदासके पैरोंपर हाथ फेरती हुई कहने लगी—"मेरे लिए तुम कुछ सोच मत करो, भइया। मेरी जो रक्षा करनेवाले हैं, वह मेरे भीतर ही हैं, मुझपर विपद क्यों आने लगी।"

"अच्छा, जाने दे ये सब बातें। तुझे मैं जिस तरह गान सिखाता था, जी चाहता है, उसी तरह आज भी तुझे सिखाऊँ।"

"बड़े भाग्य थे जो तुमने सिखाया था, भइया, वही तो मुझे बचाता है, पर आज नहीं, पहले तुम जरा ठीक हो लो। आज बल्कि मैं तुम्हें एक गान सुनाऊँ।"

भइयाके सिरहानेके पास बैठकर कुमुद आहिस्ते-आहिस्ते गाने लगी:—"पिय घर आये, सोई प्यारी पिय प्यार रे।

मीराके प्रभु गिरिधर नागर,

चरण-कमल बलिहार रे!"

विप्रदास आँखें मीचकर सुनने लगे। गाते-गाते कुमुदकी दोनों आँखें भर आईं—एक अपूर्व दर्शनसे। भीतरका आकाश प्रकाशमय हो उठा। प्रियतम घर आये हैं, हृदयमे चरण-कमलोका स्पर्श पा रही है। अत्यन्त सत्य हो उठा अन्तरलोक—जहाँ मिलन होता है। गान गाते-गाते वहाँ पहुच गई है। "चरण-कमल बलिहार रे।"—सारे जीवनको भर दिया उन चरण-कमलोंने, अन्त नहीं है उनका—ससारमें दुःख अपमानके लिए जगह रही कहाँ। "पिय घर आये"—इससे ज्यादा और क्या चाहिए। यह गान कभी भी अगर खतम न हो, तब तो चिरकालके लिए बच गई कुमुद।

तिपाईपर कुछ रोटी-टोस्ट और एक प्याला बार्ली रखकर गोकुल चला गया। कुमुदने गाना रोककर कहा—"भइया, कुछ दिन पहले मन-ही-मन में गुरु ढूँढ रही थी, मुझे जरूरत क्या है? तुमने तो मुझे गानका मन्त्र दे ही दिया है।"

"कुमू, मुझे शर्मिन्दा न कर। मुझ जैसे गुरु गली-गली मिलते हैं, वे दूसरोंको जो मन्त्र देते हैं, खुद उसके मानी ही नहीं जानते। कुमू, कितने दिन यहाँ रह सकती है, ठीकसे बता तो?"

"जितने दिन बुलावा न आवे।"

"तूने यहाँ आना चाहा था?"

"नहीं, मैंने नहीं चाहा।"

"इसके मानी ?"

"मानी की बात सोचनेसे कोई लाभ नहीं, भइया। कोशिश करनेसे भी न समझ सकोगे। तुम्हारे पास आ सकी हूं, यही बहुत है। जितने दिन रह सकूं, उतना ही अच्छा है। भइया, तुम्हारा खाना तो हो ही नहीं रहा, खा लो पहले।"

नौकरने आकर खबर दी—"मुकर्जी साहब आये हैं।"

विप्रदासने मानो जरा व्यस्त होकर कहा—"बुला लाओ यहां।"

[४७]

कालूके घरमें घुसते ही कुमुदने उसे प्रणाम किया। कालूने कहा—"छोटी लछी, आ गई ? अब भाई साहबके आराम होनेमे देर न लगेगी।"

कुमुदकी आंखें भर आईं। आंसू सम्हालकर बोली—"भइया बार्लीमे नीबू नहीं निचोडोगे ?"

विप्रदासने उदासीनता दिखलाते हुए हाथ उलटा, अर्थात् न सही, क्या हर्ज है। कुमुद जानती है कि भइयाको बार्ली भाती नहीं, इसीसे वह जब कभी उन्हें बार्ली खिलाती, बार्लीमें नीबूका रस और थोडा-सा गुलाबजल और बर्फ डालकर उसे शरबत-सा बना देती थी। उतना आयोजन आज नहीं है, फिर भी विप्रदासने अपनी इच्छा किसीको जताई नहीं—जो कुछ सामने आ गया, उसीको अरुचिके साथ खा लिया है।

"सो मैं नहीं कह सकती, पर यह बात मुझे जाननी ही होगी। तुम्हें रुपये उधार नहीं मिले ?"

"न, नहीं मिले।"

"आसानीसे नहीं मिलेंगे ?"

"मिलेंगे जरूर, लेकिन आसानीसे नहीं।—बहन, तुम्हारी बातोंका जवाब देनेकी कोशिश न करके अगर रुपयोंकी खोजमें निकलूँ, तो काम शायद कुछ आगे बढ़ सकता है। मैं चला अब।"

थोडी दूर आगे जाकर कालू लौट पडा, कुमुदसे कहा—"लली, तुम जो आज यहाँ चली आई हो, इसमें तो कोई गडबड नहीं है ? ठीक सच-सच कहना।"

"है कि नहीं, मैं खूब स्पष्टतया नहीं जानती।"

"पतिकी सम्मति मिल गई थी ?"

"बिना माँगे ही उन्होंने सम्मति दे दी थी।"

"गुस्सेमें ?"

"सो मुझे ठीक नहीं मालूम, कहा है—बुलानेसे पहले तुम्हारे आनेकी जरूरत नहीं।"

"यह कोई कामकी बात नहीं, उससे पहले ही चली जाना, अपनेसे ही जाना।"

"ऐसे जानेसे हयमउद्‌ली होगी।"

"अच्छा, सो मैं देख लूँगा।"

भइया आज जो ऐसी विपत्तिमें पड़े हैं, इसका सारा अपराध कुमुदपर है—इस बातकी याद किये बिना उससे रहा नहीं गया।

अपनेको मारनेकी इच्छा होती है—खूब कड़ी मार। सुना है, ऐसे साधु-सन्त हैं, जो कंटक-शय्यापर सोते हैं, कुमुद ऐसी शय्यापर सोनेको राजी है, अगर उसका कुछ फल मिले। कोई योगी—कोई सिद्ध पुरुष यदि उसे रास्ता दिखा दे, तो हमेशाके लिए वह उसके हाथ बिक सकती है। जरूर ऐसा कोई होगा, पर वह मिले कहाँ ? यदि अबला न होती, तो कोई-न-कोई उपाय वह करती ही करती, पर मझले भइया क्या कर रहे हैं। अकेले बड़े भइयापर सारा बोझ लादकर किस हृदयसे इंग्लैंडमें बैठे हुए हैं ?

कुमुदने कमरेमें घुसकर देखा कि विप्रदास ऊपर खूँटोंकी ओर ताकते हुए चुपचाप बिस्तरपर पड़े कुछ सोच रहे हैं। ऐसा करनेसे क्या शरीर सुधर सकता है। विरुद्ध भाग्यके दरवाजेपर सिर धुन डालनेकी इच्छा होती है।

भइयाके सिरहनेके पास बैठकर उनके माथेपर हाथ फेरते हुए कुमुदने कहा—"मझले भइया कब आयेंगे ?"

"मालूम नहीं कब आयेगा।"

"उन्हें आनेके लिए लिखो न।"

"किस लिए ?"

"काम-काजका सारा बोझ अकेले तुम्हारे ही सिरपर आ पड़ा है, इसे तुम ढोओगे किस तरह ?"

"कोई दावादार होता है, कोई जिम्मेदार, इन्हीं दोनोंसे संसार चलता है। जिम्मेदारीको ही मैंने अपना लिया है, इसे मैं दूसरेको क्यों दूँ ?"

"मैं अगर पुरुष होती, तो जबरदस्ती तुमसे छीन लेती।"

"तब तो तू समझ सकती है कुमुद, जिम्मेदारीको सिरपर लादनेका एक लालच है, तू खुद लेनेमे असमर्थ है इसीलिए मझले भइयापर लादकर अपनी साध मिटाना चाहती है। क्यों, मैंने ही ऐसा कौनसा कसूर किया है।"

"भइया, तुम कर्ज लेने आये हो ?"

"कैसे समझ लिया ?"

"तुम्हारा चेहरा देखकर ही मैं समझ गई। अच्छा, मैं क्या कुछ भी नहीं कर सकती ?"

"कैसे, बता ?"

"ऐसे ही, मान लो, किसी दस्तावेजपर दस्तखत करके। मेरे दस्तखतकी क्या कुछ भी कीमत नहीं ?"

"बहुत ही ज्यादा कीमत है, लेकिन वह मेरे लिए, महाजनके लिए नहीं।"

"तुम्हारे पैरों पडती हूं भइया, बताओ, मैं क्या कर सकती हूं।"

"लच्छिमी-बिटिया होकर शान्त बनी रह, धीरज धरकर प्रतीक्षा करती रह। याद रख, ससारमें यह भी एक बडा भारी काम है। तूफानके सामने नावको ठीक रखना जैसे एक काम है, माथेको ठीक रखना भी वैसा ही एक काम है। मेरा इसराज उठा ला, ज़रा बजा।"

"भइया, मेरी बडी इच्छा होती है कि कुछ करूँ।"

"बजाना क्या 'कुछ' नहीं है।"

"मैं चाहती हूं कोई खूब कठिन काम।"

"दस्तावेज़पर दस्तखत करनेकी अपेक्षा इसराज बजाना बहुत ज्यादा कठिन है। उठा ला बाजा।"

[४८]

किसी दिन, मधुसूदनसे और सब जैसे डरते थे, श्यामासुन्दरीको भी उतना ही डर था। भीतर-ही-भीतर कभी मधुसूदन मानो उसकी ओर झुका-सा है, श्यामासुन्दरीने इस बातका अन्दाज़ा लगा लिया था, परन्तु किस तरफसे घेरा लाँघकर उसके पास जाया जाय, इस बातका उसे अन्दाज नहीं मिलता था। अँधेरेमे टटोल-टटोलकर बीच-बीचमे इसकी कोशिश भी की है, पर हर बार लौटी है धक्का खाकर। मधुसूदन एकनिष्ठ होकर व्यवसायको बनाकर तैयार कर रहा था, काचनकी साधनामे कामिनीको उसने बहुत ही तुच्छ समझा है, स्त्रियां इसीलिए उससे बहुत डरा करती थीं, परन्तु इस डरनेमे भी एक आकर्षण है। डरके मारे काँपती हुई छाती और सकुचित व्यवहारको लिए हुए श्यामासुन्दरी जरा-से एक आवरणकी आड़मे मुग्ध मनसे मधुसूदनके आसपास फिरती रही है। बीच-बीचमे जब कभी असावधान दशामें मधुसूदनने उसे थोड़ी-बहुत सह ली है, दरअसल उसी समय डरनेकी बात हुई है। उसके बाद शीघ्र ही कुछ दिन विपरीत दिशासे मधुसूदनने इस बातको प्रमाणित करनेकी कोशिश की है कि उसके जीवनमें स्त्रियाँ बिल्कुल ही हेय हैं। इसीसे श्यामासुन्दरीने अब तक अपनेको बहुत ही संयत रखा था।

मधुसूदनके ब्याहके बादसे, उससे अब रहा नहीं जाता था। मधुसूदन अगर और-और साधारण स्त्रियोंकी तरह कुमुदकी भी अवज्ञा करता, तो वह किसी तरह सहन भी होता, लेकिन श्यामाने जब देखा कि मधुसूदन सरीखा आदमी भी रास ढीली करके किसी स्त्रीको लेकर अन्ध-वेगसे उन्मत्त हो सकता है, तब तो भयमकी रक्षा करना उसके लिए आसान न रहा। इन दिनों वह हिम्मत बाँधकर जब-तब जरा-जरा आगे बढ़ रही थी, देख रही थी—आगे बढ़ा जा सकता है। बीच-बीचमें जरा-जरा बाधा आई है, परन्तु वह भी, देखा कि, कट जाती है। मधुसूदनकी कमजोरी पकड़ाई दे गई, इसीलिए अब श्यामाके अपने अन्दर भी धैर्य बन्धन नहीं मानना चाहता। कुमुदके चले आनेकी पूर्व-रात्रिको मधुसूदनने श्यामाको अपनी ओर जितना खींचा था, वैसा तो और कभी हुआ ही नहीं। उसके बाद ही श्यामाको डर मालूम हुआ—कहीं उलटा धक्का जोरसे आकर न लगे, मगर श्यामा समझ गई है कि कायरता अगर न दिखावे, तो भयका कारण आपसे आप दूर हो जायगा।

मधुसूदन सवेरे ही बाहर चला गया था, दोपहरको एक बजे बाद घर लौटा है। इधर बहुत दिनोंसे उसके स्नानाहारके नियमका ऐसा व्यतिक्रम नहीं हुआ है। आज वह बहुत ही हारा-थका और अलसाया हुआ अभी घर आया। आते ही पहली बात उसे याद आई कुमुदकी—कुमुद अपने भइयाके घर चली गई है और खुश होकर ही गई है। अब तक मधुसूदन अपने पैरोंपर खड़ा था, मालूम नहीं कब जरा ढील दी है—शरीर और मनकी आतुरताके समय किसी

चुननीके प्रेमको शरण देनेकी शुभ इच्छा हृदयमे जाग उठी—इसीसे अनायास ही कुमुदके चले जानेसे उसे अपने ऊपर एसा विकार आया। आज भोजनके समय श्यामा जान-बूझकर ही पास आकर नहीं बैठी, क्या मालूम, कल रातमे अपनेको पकड़ाई देनेके बाद मधुसूदन अपने ऊपर नाराज हुआ हो तो। खानेके बाद मधुसूदन ऊपरके अपने सूने कमरेमे जाकर थोडी देर तक चुपचाप बैठा रहा, उसके बाद खुद ही उसने श्यामाको बुला भेजा। श्यामा लाल रंगका एक विलायती दुशाला ओढे, मानो कुछ सकुचित भावसे, कमरेमे घुसकर एक किनारेसे नीचेको निगाह किये खडी रही। मधुसूदनने बुलाया—“आओ, यहा आओ, बैठो।”

श्यामा सिरहानेके पास बैठकर—“तुम तो आज बडे दुबले-से दिखाई पडते हो।”—कहकर जरा झुककर उसके माथेपर हाथ फेरने लगी।

मधुसूदनने कहा—“ओ हो, तुम्हारा हाथ बडे ठडे है।”

रातको मधुसूदन जब सोने आया, श्यामासुन्दरीने बिना बुलाये ही कमरेमे घुसकर कहा—“ओ, तुम अकेले हो।”

श्यामासुन्दरीने, मानो कुछ स्पर्द्धाके साथ, किसी प्रकारका आवरण नहीं रहने दिया। मानो सबको साक्षी रखकर बिना किसी सकोचके वह अपना अधिकार पक्का कर लेना चाहती है। समय भी ज्यादा नहीं है, जाने कब कुमुद आ जाय, उसके पहले ही दखल पूरा हो जाना चाहिए। दखल चोडेमे होनेसे

उसका जोर रहता है, कहीं कुछ कच्चा रह गई तो ठीक नहीं। हाल देखते-देखते दासियों और नौकर-चाकरोंमें भी बात फैल गई। मधुसूदनके अदर बहुत दिनोंकी प्रवृत्तिकी आग जितने ज्यादा जोरसे दबी हुई थी, उतने ही ज्यादा जोरसे वह बेरोक हो गई, उसने किसीकी पर्वाह नहीं की, घरमे खुलमखुला अपनी उन्मत्तता जाहिर कर दी।

नवीन और मोतीकी मा दोनो हो समझ गये कि इस बाढको अब रोका नहीं जा सकता।

"जीजीको बुलाओगे नहीं? अब और देर करना क्या अच्छा है?"

"यही तो सोच रहा हू। भाई साहबके बिना हुक्मके तो कोई चारा नहीं। देखू कोशिश करके।"

जिस दिन सवेरे नवीन कौशलसे भाई साहबके सामने इस बातको छेडनेके लिए उनके पास गया, देखा तो भाई साहब कहीं बाहर जानेके लिए तैयार हैं—दरवाजेके सामने गाडी तैयार खडी है।

नवीनने पूछा—"कहीं जा रहे हो क्या?"

मधुसूदनने जरा संकोचको दूर करते हुए कहा—"उसी ज्योतिषी वेंकटस्वामीके पास।"

नवीनके सामने अपनी कमजोरीको दबाये रखना चाहता था। सहसा याद उठ आई, उसे साथ ले चलनेसे कुछ सहूलियत हो सकती है। इसीमे बोला—"चलो मेरे साथ।"

नवीनने सोचा—बुरी तरह फँसे। बोला—"पहले देख आऊँ जाकर, वह घरपर है या नहीं। मुझे तो मालूम पड़ता है, वह देश चला गया, कम-से-कम जानेकी बात तो थी।"

मधुसूदनने कहा—"अच्छी बात है, चलो देख आवें।"

नवीन निरुपाय होकर साथ चल दिया, लेकिन मनमें उसके प्रमाद भरा था।

ज्योतिषीके मकानके सामने गाड़ी ठहरते ही नवीनने झटपट उतरकर जरा उझका-उझकी करके कहा—"मालूम होता है, कोई है नहीं मकानमें।"

ज्यों ही कहा कि उसी क्षण स्वयं वेंकटस्वामी दतौन चबाते-चबाते दरवाजेके पास आ गये। नवीनने जल्दीसे आगे बढ़कर उनके पास जाकर प्रणाम किया, और कहा—"सावधानीसे बात कहियेगा।"

उस अँधेरे पुराने घरमें एक तख्तपर सब बैठ गये। नवीन बैठा मधुसूदनके पीछे। मधुसूदनके कुछ कहनेके पहले ही नवीन कह बैठा—"महाराजा साहबके दिन आजकल बहुत खराब आ रहे हैं, ग्रह कब शान्त होंगे, बताइये शास्त्रीजी।"

मधुसूदनने नवीनके ऐसे ढीले-ढाले प्रश्नसे जरा नाखुश होकर उसकी जाँघको अँगूठेसे जोरसे दबा दिया।

वेंकटस्वामीने राशिचक्रसे बिलकुल स्पष्ट दिखा दिया कि मधुसूदनके धन-स्थानमें शनिकी दृष्टि पड़ी है।

ग्रहका नाम जानकर मधुसूदनको कोई लाभ नहीं—उसके साथ

समझौता करना कठिन है। जो-जो आदमी उसके साथ शत्रुता कर रहे हैं, साफ तौरसे उन्हींका परिचय चाहिए, वर्णमालाके किसी भी वर्गमे हो, नाम निकालना ही होगा। नवीनको यह फिक्र थी कि वह मधुसूदनके आफिसका हाल बिलकुल नहीं जानता था। इशारेसे भी सहायता नहीं पहुचा सकता। वेंकटस्वामी 'मुग्धबोध'के रटे हुए सूत्र दुहराते जाते और तिरछी निगाहसे मधुसूदनके चेहरेकी ओर देखते जाते। आज तो नाम बतानेमे भृगुमुनि बिलकुल चुपकी साध गये हैं। सहसा शास्त्रीजी कह बैठे—"शत्रुता कर रही है एक स्त्री।"

नवीनकी जानमे जान आई। वह स्त्री श्यामासुन्दरी ही है, किसी कदर यह कहला लिया जाय, बस, फिर कोई फिकर नहीं। मधुसूदन नाम चाहता है। शास्त्रीजीने अब वर्णमालाके वर्ग कहने शुरू किये। 'कवर्ग' शब्द कहकर मानो वे भृगुमुनिकी ओर कान लगाये रहे—कटाक्षसे देखने लगे मधुसूदनकी ओर। 'कवर्ग' सुनते ही मधुसूदनके चेहरेपर जरा कुछ चमक-सी दौड गई। उधर पीछेसे 'नहीं' का इशारा करनेके लिए नवीन दाए-बाए गरदन हलाने लगा। नवीनको क्या मालूम कि मदरासमे इस इशारेका उल्टा अर्थ होता है। वेंकटस्वामीको अब सन्देह न रहा—गलेपर जरा जोर देकर बोले—"क-वर्ग।" मधुसूदनका मुँह देखकर ठीक समझ लिया था कि कवर्गका पहला वर्ण ही है। इसीसे उसकी जरा और भी व्याख्या करके कहा—'क' मे ही मधुसूदनका सारा 'कु' है—अर्थात् बुराई या अशुभ।

इसके बाद पूरा नाम जाननेके लिए आग्रह न दिखाकर व्यग्रताके साथ मधुसूदनने पूछा—"इसका प्रतिकार क्या है?"

वेंकटस्वामीने गंभीरता-पूर्वक कहा—"कटकेनैव कटक"—अर्थात् उद्धार भी कोई स्त्री ही करेगी।

मधुसूदन चकित हो उठा। वेंकटस्वामीने मानव चरित्र-विद्याका अध्ययन किया है।

नवीनन चंचल होकर पूछा—"स्वामीजी, घुड़दौड़में महाराजका घोड़ा क्या जीत गया?"

वेंकटस्वामी जानते हैं कि रेसमें अधिकांश घोड़े जीतते नहीं, ज़रा हिसाब लगानेका-सा बहाना बनाकर कह दिया—"हानि दिखाई देती है।"

कुछ ही दिन पहले मधुसूदनके घोड़ेने बड़ी जबरदस्त बाजी मारी है। मधुसूदनको कोई बात कहनेका मौका न देकर, मुँहपर अत्यन्त विमर्षता लाकर नवीन पूछने लगा—"स्वामीजी, मेरी लड़की कब पार उतरेगी?" कहना न होगा कि नवीनके कोई लड़की है ही नहीं।

वेंकटस्वामीने ठीक अन्दाजा लगा लिया कि वरकी तलाशमें है। नवीनके चेहरेसे ही समझ लिया कि लड़की अप्सरा न होगी। कह दिया—"पात्र जल्दी नहीं मिलेगा, बहुत रुपये देने पड़ेंगे।"

मधुसूदनको जरा भी मौका न देकर तर-ऊपर दस-बारह ऊटपटांग प्रश्न करके और उनका विचित्र उत्तर दिलवाकर नवीनने कहा—"भाई साहब, अब क्या? चलो।"

गाड़ीपर सवार होते ही नवीन कहने लगा—"भाई साहब, इसकी सब चालाकी है। ढोंगी कहींका।"

"मगर उस दिन तो—"

"उस दिन उसने पहलेसे ही पता लगा लिया था।"

"जाना कैसे कि मैं आऊँगा।"

"मेरी ही बेवकूफी थी। मेरा क़सूर हुआ कि मैं उसके पास तुम्हें ले आया था।"

ज्योतिषीकी ढकोसलेबाजी कितनी ही क्यों न साबित हो, लेकिन कवर्गका 'क' मधुसूदनके मनमें चुभा ही रहा। सोच-विचारकर देखा कि नक्षत्रोंका अनादर करके फुटकर प्रश्नोंका अटसट जवाब देता है, मगर असली प्रश्नोंके उत्तरमें भूल नहीं होती। मधुसूदनने जिसकी कभी आशा नहीं की थी, वही दु समय उसके विवाहके साथ-ही-साथ आया। इससे बढ़कर स्पष्ट प्रमाण और क्या होगा?

नवीनने धीरे-धीरे जिक्र छेड़ा—"भाई साहब, दो सप्ताह तो हो गये, अब बऊरानीको बुला लें।"

"क्यों, ऐसी जल्दी क्या है?—देखो नवीन, तुम्हें कहे देता हूँ, ये सब बातें आइन्दा कभी हमारे सामने न छेड़ा करो। जिस दिन हमारी खुशी होगी, बुला लेंगे।"

नवीन भाई साहबको पहचानता है, समझ गया कि यह बात यहीं खतम हो चुकी। फिर भी, हिम्मत बाँधकर पूछ ही बैठा—"मझली-बऊ अगर बऊरानीसे मिलने जाना चाहे, तो कोई हर्ज है?"

मधुसूदनने अवज्ञाके साथ संक्षेपमें कहा—"चली न जाय।"

[४९]

विप्रदासने बड़ी उतावलीके साथ सामनेकी आरामकुर्सीकी ओर इशारा करके कहा—"आइये नवीन बाबू, आइये, यहाँपर बैठिये।"

नवीनने कहा—"शायद आपको मेरा परिचय नहीं मिला। आप समझते होंगे, मैं कोई राज-घरानेका लाडला लड़का हूगा, मगर यह बात नहीं, म तो आपकी जो छोटी बहन हैं, उनका अधम सेवक हू। मेरा सम्मान करके आप तो मेरा आशीर्वाद ही हड़प लेना चाहते हैं,—लेकिन आपको हो क्या गया? आपका ऐसा अच्छा शरीर—अब तो छाया-ही-छाया रह गई है।"

"शरीर सत्य नहीं—छाया है, बीच-बीचमें इस बातका भान होते रहना अच्छा ही है। इससे अन्तका पाठ सुगम हो जाता है।"

इतनेमें कुमुद आ गई, घरमें घुसतेके साथ ही बोली—"देवरजी, चलो कुछ खा लो।"

"खाऊंगा, मगर एक शर्त है,—जब तक वह पूरी न हो जायगी, तब तक यह ब्राह्मण अतिथि तुम्हारे द्वारपर भूखा ही पड़ा रहेगा।"

"क्या शर्त, सुनू तो सही?"

"जब तक हमारे यहाँ थीं, अरजी पेश कर रखी थी, वहा

बस नहीं चलता था। भक्तको एक तसवीर देनी होगी तुम्हें। उस दिन कहा था, नहीं है, आज यह बात नहीं कह सकोगी। तुम्हारे भइयाके घरमे सामने ही तो टगी है दीवालपर।"

अच्छी तसवीर दैवात् कभी उतर आती है। कुमुदकी वह तसवीर इसी तरहकी मानो दैवकी रचना है। माथेपर जिस उजालेके पडनेसे कुमुदके मनका चेहरा मुँहपर खिल उठता है, वही उजाला पडा था उस चित्रमे। ललाटपर निर्मल बुद्धिकी दीप्ति है और आंखोंमे गम्भीर सरलताकी सकरुणता। तसवीरमें खडी है वह। उसका सुन्दर दाहना हाथ एक सूनी कुर्सीके हत्थेपर रखा हुआ है। मालूम होता है, मानो वह अपनी ही एक दूरकी छाया देखकर ठिठक गई है।

अपनी इस तसवीरपर कुमुदकी दृष्टि नहीं पडी है। उसके भइयाने कलकत्तेसे चित्रकार बुलाकर ब्याहके कई रोज पहले यह चित्र खिचवाया था। इसके बाद अपने कमरेमें उसे लगवाया है, इससे कुमुदका हृदय पिघल गया। यह जानकर कि फोटोकी कापी और भी जरूर होगी, भइयाके मुँहकी ओर देखा। नवीनने कहा—"समझ गये, विप्रदास बाबू, बऊरानीकी कृपा हुई है। देखिये न, उनकी आंखोकी ओर देखिये। अयोग्य होनेकी वजहसे ही उनकी विशेष करुणा है मुझपर।"

विप्रदासने मुस्कुराकर कहा—"कुमुद, मेरे उस चमडेके बक्समें और भी कई तसवीरें रखी हैं, अपने भक्तको तू वरदान देना चाहे, तो कोई कमी न होगी।"

कुमुद जब नवीनको जिमानेके लिए भीतर ले गई, तो कालू आया घरमें। बोला—'मने छोटे बाबूको तार दिया है, जल्दी आनेके लिए।"

"मेरे नामसे ?"

"हाँ, तुम्हारे ही नामसे, भाई साहब। मुझे मालूम है, तुम अन्त तक 'हाँ' 'ना' करते रहोगे, इधर समय बड़ा कठिन आ रहा है। डाक्टरसे जो कुछ सुना, उससे मालूम होता है, तुम्हारे ऊपर अब ज्यादा बोझ नहीं डाला जा सकता।"

डाक्टरका कहना है कि हृदय-विकारके लक्षण दिखाई दे रहे हैं, शरीर और मनको शान्त रखना चाहिए। किसी समय विप्रदासको हदसे ज्यादा कुश्तीका नशा था, यह उसीका फल है, उसके साथ मिल गया है मनका उद्वेग।

सुबोधको इस तरह जबरदस्ती बुलाना अच्छा होगा या नहीं, विप्रदासकी कुछ समझमें न आया। चुपचाप सोचने लगे। कालूने कहा—"बड़े बाबू, व्यर्थ सोचमें पड़े हो, जमींदारीकी कोई-न-कोई अन्तिम व्यवस्था अभीसे हो जानी चाहिए, और यह काम बिना उनके पूरा हो नहीं सकता। बारह पर-सेन्ट ब्याजपर मारवाड़ीके हाथ सिर नहीं बेच सकते। जिसमें वह दो लाख रुपये तो पहलेसे ही ब्याजके काट लेगा, उसके ऊपर फिर दलाली न्यारी है।"

विप्रदासने कहा—"अच्छा, आने दो सुबोधको। लेकिन आयेगा तो ?"

"कितने ही बड़े साहब क्यों न हों, तुम्हारा तार पाते ही उनसे रहा न जायगा। इसके लिए तुम खातिर जमा रखो, लेकिन भाई साहब, अब देर करना ठीक नहीं, बिटियाको ससुराल भेज दो।"

विप्रदास कुछ देर चुपचाप बैठे रहे, फिर बोले—"बिना मधुसूदनके बुलाये भेजनेमें बाधा है।"

"क्यों, बिटिया क्या मधुसूदनके कारखानेकी मज़दूरिन है? अपने घर जायगी, उसमें हुक्म किस बातका?"

भोजन समाप्त करके नवीन अकेला ही विप्रदासके कमरेमें आया। विप्रदासने कहा—"कुमुदका तुमपर बड़ा स्नेह है।"

नवीनने कहा—"हाँ, शायद मैं अयोग्य हू, इसीसे उनका इतना ज्यादा स्नेह है।"

"उसके बारेमें तुमसे कुछ कहना चाहता हू, तुम मुझसे कोई बात छिपाना नहीं।"

"ऐसी मेरी कोई भी बात नहीं, जो आपसे नहीं कही जा सके।"

"कुमुद जो यहाँ आई है, मुझे मालूम होता है, उसमें कुछ गड़बड़ है।"

"आपने ठीक ही समझा है। जिसके अनादरकी कल्पना भी नहीं की जा सकती, ससारमें उसका भी अनादर होता है।"

"तो अनादर हुआ है?"

"इसी लिहाज़से तो आया हू। और तो कुछ कर नहीं सकता, चरणोंकी धूल लेकर मन-ही-मन माफी चाहता हू।"

"कुमुद अगर आज ही ससुराल लौट जाय, तो उसमें कोई हानि है?"

"सच कह दूं, वहां जानेके लिए कहनेकी मेरी हिम्मत नहीं पडती।"

दरअसल बात क्या है, इस बारेमें विप्रदासने नवीनसे कुछ पूछ-ताछ नहीं की। समझा कि पूछना बेजा होगा। कुमुदसे भी कोई बात पूछकर भेद जाननेकी उनकी रुचि न हुई। भीतर ही भीतर छटपटाने लगे। कालूको बुलाकर पूछा—"तुम तो उनके यहां आया-जाया करते हो, मधुसूदनके बारेमें तुम शायद कुछ जानते होगे।"

"कुछ-कुछ आभास मिला है, लेकिन पूरा हाल जाने बिना तुमसे कुछ कहूंगा नहीं। और दो दिन सब्र करो, पूरा हाल तुम्हें दूंगा।"

आशंकासे विप्रदासका हृदय व्यथित हो उठा। प्रतिकार करनेका कोई उपाय उनके पास नहीं था, इसीलिए दुश्चिन्तासे उनका हृदय मारे दर्दके रह-रहकर चीख मारने लगा।

[४०]

कुमुद बहुत दिनोंसे जो बात एकान्त-मनसे चाह रही थी, वह पूरी हो गई। उसी परिचित घरमें, अपने भइयाके स्नेहके उसी परिवेष्टनमें वह लौट आई, परन्तु यहां आकर

देखा कि उसका वह स्वाभाविक स्थान अब नहीं रहा। रह-रहकर अभिमानसे उसके मनमें आता है कि लौट जाय, क्योंकि वह स्पष्ट समझ रही है कि सभीके मनमें हमेशा प्रश्न उठ रहा है—'वह वापस क्यों नहीं जाती, क्या हुआ है उसे ?' भइयाके गहरे स्नेहमें वही एक उत्कंठा है, इस बारेमें उनमें स्पष्ट आलोचना नहीं चल सकती। उसका विषय वह स्वयं है और उसीसे वह बात छिपाई जाती है।

शाम हो चली, धूप उतर रही है। सोनेके कमरेमें खिड़कीके पास कुमुद बैठी है। कौए कांव-कांव कर रहे हैं। बाहर रास्तेमें गाड़ियोंके आने-जानेका शब्द और बस्तीके लोगोंका नाना प्रकारका कलरव हो रहा है। नूतन वसन्तकी हवा शहरके ईंट-पत्थरोंपर रंग नहीं ला सकी है। सामनेके मकानको अपनी आड़में छिपाये हुए एक बादामका पेड़ खड़ा है, अस्थिर हवा उसीके घने हरे पत्तोंको हिला-डुलाकर तीसरे पहरकी धूपके टुकड़े-टुकड़े करके उसे छितरा देने लगी। ऐसे ही समयमें पालतू हरिणी अपने अनजाने जंगलकी ओर भाग जाना चाहती है। जिस दिन हवामें वसन्तका स्पर्श होता है, मालूम होता है, मानो पृथ्वी उत्सुक होकर ताक रही है नील आकाशके सुदूर मार्गकी ओर। जो कुछ चारों ओर घेरे हुए है, वही मिथ्या मालूम होने लगता है, और जिसका पता नहीं लगा है, जिसकी तसवीर खींचते समय रंग आसमानमें बिखर जाता है, तसवीर झांककर जल-स्थलके इशारोंपर भाग जाती है, मन उसीको समझता है सबसे

बढ़कर सच। कुमुदका मन हाँप रहा है और भागना चाहता है सब-कुछ छोड़कर, अपनेको भी छोड़कर, परन्तु यह फँसी दीवार है। आज इस घरमें भी मुक्ति नहीं। कल्पनामें मृत्युको इसने मधुर बना लिया। मन-ही-मन बोली—'साँवरे जमुनाके किनारे खड़े हैं, वे ही साँवरे, उन्हींके अभिसारमें चली हूँ, दिनपर दिन—कितना लम्बा सफर है—कितने दुःखका सफर है।' याद उठ आई—भइयाकी बीमारी बढ़ रही है—उनकी सेवा करने आई थी मैं, मैंने ही आकर बीमारी बढ़ा दी, अब मैं जो-कुछ करूँगी, सब उल्टा होगा। दोनों हाथोंसे मुँह दबाकर कुमुद जी खोलकर रो ली। रोनेका वेग थमनेपर निश्चय किया कि घर लौट जायगी, जो होगा सो देखा जायगा—सब सह लेगी—अन्तमें तो मुक्ति है ही शीतल, गम्भीर, मधुर। उसी मृत्युकी कल्पना ज्यों-ज्यों उसके मनके अंदर अपना घर बनाने लगी, त्यों-त्यों अपने जीवनका भार उसे हलका मालूम होने लगा। मन-ही-मन गुनगुनाने लगी —

पथपर रयन अँधेरी,
कुंजपर दीप उजियारा।

दोपहरको कुमुद भइयाको सुलाकर चली आई थी, अब दवा और पथ्य देनेका समय हो गया। कमरेमें आकर देखा, विप्रदास उठकर बैठे हुए गोदपर पोर्टफोलिओ रखकर सुबोधको अँगरेजीमें चिट्ठी लिख रहे हैं। फटकारनेके सुरमें कुमुदने कहा—"भइया, आज तुम अच्छी तरह सोये भी नहीं।"

विप्रदासने कहा—"तूने समझ रखा है कि सोनेसे ही विश्राम होता है। मन जब चिट्ठी लिखनेकी जरूरत समझता है, तब चिट्ठी लिखनेसे ही विश्राम मिलता है।"

कुमुदने समझा कि जरूरत उसीकी वजहसे है। समुद्रके इसपार एक भाईको व्याकुल कर दिया है, समुद्रके उसपार और एक भाईको विकल करने चली है, क्या ही तकदीर लेकर जनमी थी उनकी यह बहन। भइयाको चाय पिलानेके बाद धीरे-धीरे उसने कहा—"बहुत दिन हो गये, अब घर जाना ठीक होगा।"

विप्रदासने कुमुदके मुँहकी ओर देखकर समझनेकी कोशिश की कि कहनेका भाव क्या है। इतने दिनोंसे भाई-बहन दोनोंमे जो स्पष्ट समझने-समझानेका भाव था, वह अब नहीं रहा, अब तो मनकी बातके लिए अँधेरेमे टटोलना पड़ता है। विप्रदासने लिखना बंद कर दिया। कुमुदको पास बिठाकर, बिना कुछ कहे, उसके हाथपर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगे। कुमुदने उस भाषाको समझा। गिरस्तीकी गाँठ कड़ी हो गई है, परन्तु प्रेममे जरा भी कमी नहीं आई है। आँखोंसे आँसू टपकना चाहते थे, जबरदस्ती उन्हें रोक लिया। कुमुदने मन-ही-मन कहा—'इस प्रेमपर भार नहीं लादूँगी।' इसीसे फिरसे उसने कहा—"भइया, मैंने जानेका निश्चय कर लिया है।"

विप्रदास क्या जवाब दें, कुछ सोच न सके, सम्भव है कुमुदके जानेमे ही भलाई हो, कम-से-कम कर्तव्य तो यही है। चुप बैठे रहे। इतनेमे कुत्ता जाग गया, और वह कुमुदकी

गोदपर दोनों पैर रखकर विप्रदासकी छोडी हुई गोटीके टुकड़ेके लिए प्रार्थना करने लगा।

रामस्वरूप नौकरने आकर खबर दी कि चटर्जी महाशय आये हैं। कुमुदने उद्विग्न होकर कहा—"आज दिनमें तुम सोये नहीं हो, इसपर कालू-भइयासे बहस करके थक जाओगे। बल्कि मैं जाती हू, कोई बात होगी तो सुने आती हू, फिर तुमसे आकर कहूगी, ठीक समयपर।"

"तू बडी कहाँकी डाक्टर बन गई है। एक आदमीकी बात कोई दूसरा आदमी सुन आवे, इससे रोगीका मन बहुत सुस्थिर होगा, यही सोचा है तूने।"

"अच्छा, मैं नहीं सुनूँगी, लेकिन आज रहने दो।"

"कुमुद, किसी अगरेज कविने कहा है—'सुना हुआ सगीत मधुर होता है, किन्तु अश्रुत सगीत उससे भी मधुर।' उसी तरह सुना हुआ समाचार थकावट ला सकता है, मगर बिना सुना समाचार और भी ज्यादा थकावट लाता है, इसलिए जल्दी ही सुन लेना अच्छा है।"

"लेकिन मैं पन्द्रह मिनट बाद ही आ जाऊगी, और तब भी अगर तुम लोगोंकी बातचीत खतम न हो, तो मैं बीचमें ही इसराज बजाना शुरू कर दूगी—भीमपलश्री।"

"अच्छा, मजूर है।"

आध घटे बाद इसराज हाथमें लिये ही कुमुद कमरेमें घुसी, परन्तु विप्रदासके चेहरेका भाव देखकर उसी समय इसराज

दीवालके सहारे एक कोनेमे रखकर भइयाके पास आकर बैठ गई और उनका हाथ पकडकर पूछने लगी—"क्या हुआ, भइया ?"

कुमुद इतने दिनोसे विप्रदासमे जो अस्थिरता देख रही थी, उसमे एक तरहका गंभीर विषाद था। विप्रदासके जीवनमे दुःख-सताप बहुत आये है, किसीने भी उन्हें जल्दी विचलित होते नहीं देखा। पुस्तक पढना, गाना-बजाना, दूरबीन लेकर तारे देखना घोडेपर चढना, जगह-जगहसे नये-नये विना आने पेड-पौधे मगाकर उनसे बगीचा लगाना इत्यादि नाना विषयोमे उनकी उत्सुकता रहनेसे अपने विषयके दुःख-कष्टोंको अपने अन्दर कभी उन्होने जमने नहीं दिया। अबकी बार रोगकी दुर्बलताने अपनी छोटी-सी परिधिके भीतर उन्हें बहुत ज्यादा बाँध लिया है। अब वे बाहरसे सेवा और सग पानेके लिए उन्मुख रहते हैं, चिट्ठी-पत्री ठीक समयपर न मिलनेसे उद्विग्न हो जाते हैं, दुश्चिन्ताएँ देखते-देखते काली हो उठती हैं। इसीसे भइयापर कुमुदका जो स्नेह है, उसने आज मानो मातृस्नेहके समान रूप धारण किया है—उसके ऐसे धीर गभीर आत्म-संयमी भइयाके अन्दर न जाने कहाँसे बालकोंका-सा भाव आ गया है,—इतना अनादर, इतनी चचलता, इतनी जिद। और उसीके साथ इतना गंभीर विषाद और उत्कठा।

परन्तु कुमुदने आकर देखा कि भइयाका वह आवेश दूर हो गया है। उनकी आँखोंमे जो आग जल रही है, मानो वह महादेवके तृतीय नेत्रके समान है,—अपनी किसी वेदनाके लिए नहीं—अपनी दृष्टिके सामने वह विश्वके किसी पापको देख रहा है, उसे जलाकर

भस्म करना चाहता है। कुमुदकी बातका कोई उत्तर न देकर सामनेकी दीवालपर एकटक देखते हुए विप्रदास चुपचाप बैठे रहे।

कुमुदने कुछ देर बाद फिर पूछा—"भइया, क्या हुआ, बताओ न ?"

विप्रदासने मानो किसी दूरके लक्ष्यकी ओर दृष्टि रखते हुए कहा—"दु:खसे बचनेकी कोशिश करनेसे वह और भी धर दबाता है। उसे ज़ोरके साथ स्वीकार करना होगा।"

"तुम उपदेश दो, मैं स्वीकार करूँगी भइया।"

"मैं देख रहा हूं, स्त्रियोंका जो अपमान है, वह किसी एकका नहीं, बल्कि सारे समाजके भीतर है।"

कुमुद अच्छी तरह भइयाकी बातका अर्थ न समझ सकी।

विप्रदासने कहा—"दर्दको सिर्फ अपना ही समझकर अब तक कष्ट सह रहा था, आज समझमे आया कि इसके साथ लड़ना होगा सबकी तरफसे।"

विप्रदासके सफेद फक गोरे चेहरेपर लाल आभा दौड़ गई। उनकी गोदमे रेशमी बेल-बूटेदार चौखूँटा तकिया था, उसे धक्का देकर सहसा अलग कर दिया। बिस्तरसे उठकर बगलकी कुर्सीपर बैठना ही चाहते थे कि कुमुदने उनका हाथ थामकर कहा—"शान्त होओ भइया, उठो मत, तबीयत और भी खराब हो जायगी।" कहकर ऊँचे तकियेके सहारे उन्हें लिटा दिया।

विप्रदासने अपने ओढ़नेके चद्दरेको मुट्ठीमें दबाकर कहा—"सहनेके सिवा स्त्रियोंके लिए और कोई रास्ता नहीं, इसीसे उनके

ऊपर बार-बार मार आकर पडती है। अब कहनेके दिन आ गये कि 'नहीं सहेंगी'। कुमुद, यहीं तू अपना घर समझकर रह सकेगी? उनके यहाँ अब तेरा जाना नहीं होगा।"

कालूसे आज विप्रदासने बहुतसी बातें सुनी हैं।

श्यामासुन्दरीके साथ मधुसूदनका जो सम्बन्ध हुआ है, उसमें दबा ढका कुछ नहीं था। दोनों निःसंकोच हो गये हैं। लोग उन्हें अपराधी समझ रहे हैं, इसीसे दोनों गर्वित हो उठे हैं। इस सम्बन्धमें बारीक काम कुछ भी न था, इसीसे उनके लिए परस्पर बचना और लोकमतकी परवाह करना अनावश्यक था। सुना गया है कि मधुसूदनने श्यामाको कभी-कभी मारा-पीटा भी है। श्यामाने जब शोर मचाकर प्रतिवाद किया है, तब मधुसूदनने उसे सबके सामने ही कहा है—"जा, दूर हो यहाँसे, बदजात कहींकी, निकल जा हमारे घरसे।" मगर इससे भी कुछ बना-बिगडा नहीं है। श्यामाके सम्बन्धमें मधुसूदनने अपना कर्तृत्व ज्योंका त्यों रखा है, अपनी इच्छासे मधुसूदनने अपने आप जो कुछ दिया है, उससे ज्यादा लेनेके लिए श्यामाने जब कभी हाथ बढाया है, फौरन उसने फटकार खाई है। श्यामाकी इच्छा थी कि घर-गिरस्तीके काममें मोतीकी माके स्थानपर वह दखल जमावे, मगर उसमें भी बाधा आई, मधुसूदनका मोतीकी मापर पूर्ण विश्वास है, श्यामापर उसका विश्वास नहीं। श्यामाके विषयमें उसकी कल्पनामें रंग नहीं लगा, मगर उसपर खूब जबरदस्त आसक्ति पैदा हो गई है। मानो वह जाडेमें हर वक्त काम आनेवाली मैली रजाई है, उसपर

बेल-बूटोंका बिलकुल अभाव है, वह कोई खास सम्हालनेकी चीज़ नहीं, खाटसे नीचे धूलमें गिर जानेपर भी कुछ बनता-बिगडता नहीं, मगर उससे आराम बहुत है। श्यामाको सम्हालकर चलनेकी तनिक भी जरूरत नहीं। इसके सिवा, श्यामा जो उसे सारे मनसे बडा मानती है, उसके लिए वह सब-कुछ सहनेको—सब कुछ करनेको राज़ी है, इस बातका निःसंशय भरोसा होनेसे मधुसूदनका आत्म सम्मान स्वस्थ है। कुमुदके रहते उसके आत्म-सम्मानने प्रतिदिन बहुत ज्यादा धक्के खाये हैं।

मधुसूदनके इस आधुनिक इतिहासको जाननेके लिए कालूको बहुत ज्यादा खोज नहीं करनी पडी। उनके घरके नौकर-चाकरोंमें इस विषयकी काफ़ी चर्चा हो चुकी है, अन्तमें अत्यन्त अभ्यस्त हो जानेसे चर्चाका जमाना भी एक तरहसे बीत चुका है।

खबर सुनते ही विप्रदासके कलेजेमें मानो आगका तीर लगा। मधुसूदनने कुछ दाबने-ढकनेकी कोशिश भी नहीं की, अपनी स्त्रीको खुली तौरसे अपमानित करना इतना सहज है—स्त्रीपर अत्याचार करनेमें बाहरकी बाधा इतनी कम है। स्त्रीको निरुपाय बनाकर पतिके अधीन करनेमें समाजने हजारों तरहके यन्त्र और यन्त्रणाओंकी सृष्टि की है, और मजा यह कि उस शक्तिहीन स्त्रीको पतिके उपद्रवसे बचानेके लिए कोई भी—आवश्यक मार्ग ही नहीं रखा गया। इसीका कठिन दुःख और असम्मान घर घरमें युग-युगमें किस प्रकार व्याप्त हो गया है, एक क्षणमें विप्रदासने मानो उसे देख लिया। सतीत्वकी गरिमाका गाढा प्रलेप देकर इस व्यथाको

दबानेकी कोशिश होती है, परन्तु उस वेदनाको असम्भव करनेकी—उसका अस्तित्व मिटानेकी—ज़रा भी कोशिश नहीं की जाती। हाँ, स्त्रियाँ इतनी सस्ती हैं—इतनी नाचीज़ हैं।

विप्रदासने कहा—"कुमुद, अपमान सहते जाना कोई कठिन काम नहीं, मगर सहना अन्याय है। तमाम स्त्रियोंकी तरफ़से तुझे अपने सम्मानका दावा करना होगा, इसपर समाज तुझे जितना दुःख दे सके, देने दे।"

कुमुदने कहा—"भइया, तुम किस अपमानकी बात कह रहे हो, मैं ठीक समझ नहीं सकी।"

विप्रदासने कहा—"तो क्या तूने सब बातें नहीं सुनीं?"

कुमुदने कहा—"नहीं तो।"

विप्रदास चुप हो रहे। थोड़ी देर बाद बोले—"स्त्रियोंके अपमानका दुःख मेरी छातीके अंदर जमा हो रहा है। क्यों, तुझे मालूम है?"

कुमुद कुछ न कहकर भइयाके मुँहकी ओर देखती रही। थोड़ी देर बाद, विप्रदास कहने लगे—"ज़िन्दगी-भर माने जो कष्ट उठाये थे, उसे मैं किसी तरह भूल नहीं सकता, हमारा धर्म-बुद्धि-हीन समाज उसके लिए जिम्मेवार है।"

यहींपर भाई-बहनमें भेद है। कुमुदका अपने पितासे बहुत ज्यादा प्रेम था, वह जानती थी कि उनका हृदय कितना कोमल था। समस्त अपराधोंके होते हुए भी उसके बाबूजी बहुत बड़े थे, इस बातको याद किये बिना उससे रहा नहीं जाता, यहाँ तक कि

मोतीकी माने कहा—"घरको भूत लग गया है, बऊरानी। वहाँ टिकना अब मुश्किल ही है, तुम क्या नहीं जाओगी ?"

"मेरा क्या बुलावा आया है ?"

"नहीं, बुलानेकी शायद याद भी नहीं रही होगी, लेकिन तुम्हारे बिना जाये तो काम ही नहीं चल सकता।"

"मैं क्या कर सकती हू ? मैं तो उन्हें तृप्त नहीं कर सकूँगी। विचार कर देखा जाय तो मेरे ही कारण सब-कुछ हुआ है, मगर कोई उपाय भी नहीं था। मैं जो कुछ दे सकती थी, उसे वे ले नहीं सके। आज मे रीते हाथ जाकर क्या करूगी ?"

"कहती क्या हो बऊरानी, घर तो तुम्हारा ही है, वह तो तुम्हारे छोड देनेसे चल ही नहीं सकता।"

"घरसे क्या मतलब समझती हो बहन ? घर द्वार, चीज-वस्त, नौकर-चाकर ? मुझे शर्म आती है यह कहनेमें कि उसपर मेरा अधिकार है। खास महलमे ही जब अधिकार खो बैठी हू, तो क्या अब बाहरकी उन सब चीजोंपर लोभ हो सकता है ?"

"क्या कह रही हो, बऊरानी ? तुम क्या अब घर जाओगी ही नहीं बिलकुल ?"

"सब बातें अच्छी तरह समझमे नहीं आ रही हैं। और कुछ दिन पहले होता, तो भगवानसे—सकेन ... देवताके

"नहीं कुमुद, ठीक इससे उल्टा होगा। इतने दिनोंसे दुःखोंकी थकावटसे शरीर अलसा-सा गया था। लेकिन आज तो मन कह रहा है कि जीवनके अन्तिम दिन तक लडाई लडनी होगी, मेरे शरीरके भीतरसे ताकत आ रही है।"

"किस बातकी लडाई भइया।"

"जिस समाजने नारीको उसका मूल्य देनेमे इतना ज्यादा धोखा दिया है, उसके साथ लडाई लडनी है।"

"तुम उसका क्या कर सकते हो, भइया?"

"मैं उसे मानूँगा नहीं। इसके सिवा और भी क्या कर सकता हूं, सोचना होगा,—आजसे ही शुरू करता हू, कुमुद। इस घरमें तेरे लिए जगह है, वह बिलकुल तेरी निजी जगह है, और किसीके साथ समझौता करके नहीं। यहींपर तू अपने जोरसे रहना।"

"अच्छा भइया, सो सब हो जायगा, लेकिन अब तुम बातें मत करो भइया।"

इतनेमे खबर आई कि मोतीकी मा आई है।

[४१]

मोतीकी माको लेकर कुमुदिनी सोनेके कमरेमे जा बैठी। बातचीत करते करते अंधेरा हो आया, बैरा आया बत्ती जलाने, कुमुदने मना कर दिया।

कुमुदने सभी बातें सुनीं, चुपचाप बैठी रही।

कुमुदने प्रसगको सहज कर देनेके लिए कहा—"भइया, खासकर ये यही पूछने आई हैं कि मेरे बारेमे तुम्हारी क्या राय है।"

मोनीकी माने कहा—"नहीं, नहीं, राय पूछना पीछेकी बात है, मैं आई हू उनके चरणोके दर्शनके लिए।"

कुमुदने कहा—"ये जानना चाहती है कि उनके घर मुझे जाना चाहिए या नहीं।"

विप्रदास उठकर बैठ गये, बोले—"वह तो पराया घर है, वहाँ जाकर कुमुदसे रहा कैसे जायगा?"

यदि यह बात क्रोधके स्वरमे कहते, तो उसके भीतरकी आग ऐसी न धधक उठती। शान्त कठस्वर था, चेहरेपर उत्तेजनाका कोई लक्षण ही न था।

मोनीकी माने फुसफुस करके कुछ कहा, जिसका अभिप्राय था कि कुमुद उनके पास बैठकर उसकी बातें विप्रदासके कानो तक पहुचा दे। कुमुद राजी नहीं हुई, बोली—"तुम्हीं कहो न, गला खोलकर।"

मोनीकी माने स्वरको और भी जरा स्पष्ट करके कहा—'जो उनका अपना है, उसे कोई पराया नहीं कर सकता, फिर चाहे वह कोई भी क्यो न हो।"

"यह बात ठीक नहीं। कुमुद तो आश्रित-मात्र है। उसे अपने अधिकारका जोर नहीं है। उसे घरसे अलग कर देनेसे शायद लोग निन्दा ही करेंगे, पर कोई बाधा नहीं देगा। जो कुछ दड है, सो सब उसीके लिए है। फिर भी, अनुग्रहका आश्रय भी सहन कर लिया जाता, यदि वह महद् आश्रय होता।"

ठीक न बैठा। आज कितनी वार बैठी-बैठी सोचती रही हू कि देवताकी अपेक्षा भइयाके विचारपर भरोसा रखती, तो इतनी विपत्ति न आती, मगर फिर भी तो मनमें जो देवताके बारेमे एक दुविधा उठ खडी हुई है, हृदयके अन्दर उससे छुटकारा नहीं मिल रहा। घूम-फिरकर वहीं आकर लोटने लगती हू।"

"तुम्हारी बातें सुनकर तो मुझे डर लगता है। घर क्या जाओगी ही नहीं ?"

"यह सोचना तो कठिन है कि कभी जाऊँगी ही नहीं, मगर यह भी आसान नहीं कि जाऊँगी ही।"

"अच्छा, तुम्हारे भइयासे एक वार पूछ देखूँ। देखें वे क्या कहते हैं। उनके दर्शन तो हो जायँगे ?"

"चलो, अभी लिये चलती हू।"

मोतीकी मा विप्रदासके कमरेमें पैर रखते ही, उनका चेहरा देखकर, ठिठककर खडी रह गई, मालूम हुआ मानो वह अपने सामने एक भूकम्पके बादका मन्दिर देख रही है—जिसकी बत्तियाँ बुझ गई है, शिखर टूट गया है। भीतर अन्धकार और सन्नाटा है। मोतीकी मा उनके पैर छूकर जमीनपर बैठ गई।

विप्रदासने ज़रा कुछ उतावलीके साथ कहा—"यह है तो सही चौकी।"

मोतीकी माने सिर हिलाकर कहा—"नहीं, यहीं ठीक है।"

घूंघटके भीतर उसकी आँखोंमे आँसू छलकने लगे। समझ गई कि भइयाकी यह हालत ही कुमुदको व्यथित किये हुए है।

करे, फिर भी वह है तो पुरुष ही, एक जगह वह अपनी स्त्रीसे आप ही बड़ा है, वहाँ किसी तरहका विचार चल ही नहीं सकता। विधाताके साथ मामला चलाकर जीतेगा कौन?

मोतीकी माने कहा—"आखिर किसी-न-किसी दिन तो वहाँ जाना ही पड़ेगा, इसके सिवा कोई रास्ता ही नहीं।"

"जाना ही पड़ेगा, यह बात तो खरीदे हुए गुलामके सिवा और किसी आदमीके लिए लागू ही नहीं हो सकती।"

"मन्त्र पढ़कर स्त्रीको तो खरीद ही लिया जाता है। सात फेरे जिस दिन पड़ गये, उसी दिन वह तो शरीर और मनसे बँध ही गई, अब तो भागनेका कोई रास्ता ही नहीं रहा। यह बंधन तो मौतसे भी बढ़कर है। स्त्री होकर जब पैदा हुई हैं, तो इस जन्मके लिए तो स्त्रीके भाग्यको किसी तरह फिराया नहीं जा सकता।"

विप्रदास समझ गये कि स्त्रियोंका सम्मान स्त्रियोंमे ही सबसे कम है। वे जानती ही नहीं कि इसीलिए घर-घर स्त्रियोंके भाग्यसे अपमानित होना इतना सहज है। वे अपनी रोशनी आप ही बुझा बैठी हैं। उसपर हमेशा मरती हैं डरके ही मारे, हर वक्त चिन्ता उन्हें खाये ही जाती है, अयोग्य पुरुषके हाथमें पड़कर खाती हैं मार, और समझती हैं कि उसे चुपचाप सह लेना ही स्त्री-जन्मकी सर्वोच्च सार्थकता है। नहीं,—मनुष्य अपमानको इतना सिर-माथे नहीं ले सकता। समाजने जिन्हें इतना नीचे डाल दिया है, वे ही तो समाजको प्रतिदिन नीचे ले जा रही हैं।

ऐसी बातका क्या जवाब दे, मोतीकी मा कुछ सोच न सकी। पतिके आश्रयमें विघ्न होनेसे लडकीवाले ही तो हाथ-पैर छूकर खुशामद किया करते हैं, यहाँ तो उल्टी बात है।

कुछ देर चुप रहकर बोली—"लेकिन अपनी घर-गिरस्तीके बिना स्त्रियाँ जो जी ही नहीं सकतीं, पुरुषोंका जीवन तो बहावमें बहते-बहते बीत जाता है, मगर स्त्रियोंको तो कहीं-न-कहीं स्थिति चाहिए ही ?"

"स्थिति कहाँ है ? असम्मानमें ? मैं तुमसे कहे देता हूं, कुमुदको जिसने गढा है, उसने शुरूसे अन्त तक बडी श्रद्धासे गढा है। ऐसी योग्यता किसीमें नहीं जो कुमुदकी अवज्ञा कर सके—चक्रवर्ती सम्राट्में भी नहीं।"

कुमुदपर मोतीकी माका बहुत ही ज्यादा प्रेम है, भक्ति है, मगर फिर भी किसी स्त्रीका इतना मूल्य हो सकता है कि जिसका गौरव पतिको भी लाघ जाय, यह बात मोतीकी माको ठीक नहीं जँची। घर-गिरस्तीमें पतिके साथ झगडा-टंटा हो सकता है, स्त्रीके भाग्यमें अनादर-अपमान भी काफ़ी बदा हो सकता है, यहाँ तक कि उससे छुटकारा पानेके लिए स्त्री अफीम खाकर या गलेमें फाँसी लगाकर मर जाती है, यहा तक तो उसकी समझमें आता है, लेकिन इसके मानी यह नहीं कि पतिको बिलकुल त्यागकर स्त्री अपने जोरसे रहेगी चाहे जहाँ, इस बातको तो मोतीकी मा दर्प ही समझती है। स्त्री होकर इतना घमंड क्यों! मधुसूदन चाहे जितना अयोग्य हो, चाहे जैसा अन्याय

"नहीं, अन्याय अतिक्रमको तो मैं बुरा समझता हूं। पर पति भी स्त्रीको अतिक्रम न करे—मेरे कहनेका मतलब यही है।"

"यदि करे, तो क्या स्त्रीको भी—"

कुमुदकी बात खतम होनेसे पहले ही विप्रदास कहने लगे—"स्त्री यदि उस अन्यायको मान ले, तो वह सब स्त्रियोंपर अन्याय करना होगा। इसी तरह प्रत्येक स्त्रीके द्वारा दुःख बढ़ता ही जाता है। तभी तो अत्याचारका रास्ता पक्का हो गया है।"

मोतीकी माने ज़रा-कुछ अधैर्यके स्वरमे ही कहा—"हमारी ठकुरानी सती-लक्ष्मी हैं, उनका कोई अपमान करे, तो वह अपमान उन्हे छू भी नहीं सकता।"

विप्रदासका कंठ अब जरा उत्तेजित हो उठा—"तुम लोग सती-लक्ष्मीकी बात ही सोचती रहती हो। और जो कापुरुष बेधड़क उसे अपमानित करनेका अधिकार पाकर प्रतिदिन उसका दुरुपयोग करता रहता है, उसकी दुर्गतिकी बात क्यों नहीं सोचती?"

कुमुद उसी समय उठकर खड़ी हो गई और विप्रदासके बालोंमे उँगलियाँ फेरती हुई बोली—"तुम अब बात मत करो, भइया, थक जाओगे। तुम जिसे मुक्ति कहते हो, जो ज्ञान द्वारा प्राप्त होती है, उसके लिए हमारा खून ही बाधक है। हम आदमीसे भी लिपटी रहती हैं और विश्वाससे भी, किसी भी तरह उसकी उलझन नहीं सुलझा सकतीं। जितनी चोट खाती

विप्रदासकी खाटके पास ही कुमुद सिर झुकाये जमीनपर बैठी थी। विप्रदासने मोतीकी मासे कुछ न कहकर कुमुदके माथेपर हाथ रखकर कहा—"एक बात तुमसे कहता हूं, कुमुद, समझनेकी कोशिश करना। सामर्थ्य जहाँ पाई-चीज है, जिसकी कोई परख नहीं, अधिकार बनाये रखनेके लिए जिसे योग्यताका कोई प्रमाण नहीं देना पडता, वहाँ वह संसारमे सिर्फ हीनताकी ही सृष्टि करती है। यह बात मैंने तुमसे बहुत बार कही है, अपने सस्कारको तू छोड नहीं सकी—कष्ट झेले हैं। तू जब खास तौरसे ब्राह्मण-भोजन कराती थी, तब किसी दिन तुझे बाधा नहीं दी, सिर्फ बार-बार समझानेकी कोशिश की है, बिना विचारे किसी मनुष्यकी श्रेष्ठता मान लेनेसे सिर्फ उसीका अनिष्ट होता हो, सो नहीं, उससे समाजकी श्रेष्ठताके आदर्शको छोटा किया जाता है। इस तरहकी अन्ध-श्रद्धाके द्वारा अपने ही मनुष्यत्वका अनादर किया जाता है, इस बातको कोई सोचता क्यों नहीं ? तूने तो अंगरेजी साहित्य कुछ-कुछ पढा है, समझी नहीं, ऐसी जितनी भी दल-गढन्त और शास्त्र-गढन्त निरंकुश शक्तियाँ हैं, उन सबके विरुद्ध सारे संसारमे आज लडाईकी हवा बह रही है। दुनिया-भरकी मनगढन्त अन्ध-दासताओंको बडा नाम देकर मनुष्य दीर्घकाल तक उनका पोषण करता आया है, आज उन्हें निर्मूल करनेका दिन आ गया है।"

कुमुदने सिर नीचा किये हुए ही कहा—"भइया, तुम्हारे कहनेका मतलब क्या, स्त्री स्वामीसे भी बढ जाय ?"

मालूम हुआ। कुमुद जानती है कि बोलनेकी अपेक्षा इस चुप्पीका वजन और भी ज्यादा है।

घरमें घूम-फिरकर मोतीकी माने कुमुदसे आकर पूछा—"क्या ठीक किया बऊरानी?"

कुमुदने कहा—"नहीं जा सकूँगी। और, मुझे तो उन्होंने आनेके लिए हुक्म नहीं दिया है।"

मोतीकी मा भीतर-ही-भीतर कुछ खीझ उठी। ससुरालके प्रति उसकी अधिक श्रद्धा हो, सो बात नहीं, फिर भी ससुरालके बारेमें बहुत दिनोंका ममत्व-बोध उसके हृदयपर अधिकार किये हुए है। वहांकी कोई भी बहू उसे लंघन कर जाय, यह बात उसे किसी भी तरह अच्छी नहीं लगी। कुमुदको उसने जो कुछ कहा, उसका भाव यह था कि पुरुषोंकी प्रकृतिमें हमदर्दी कम होती है और असयम ज्यादा, यह तो बनी-बनाई बात है। सृष्टि तो हमारे हाथमें नहीं है, जो मिला है उसीके साथ निभाकर चलना होगा। "ये लोग ऐसे ही हैं"—कहकर मनको तैयार करके जैसे बने वैसे घर-गिरस्तीको चलाना ही चाहिए। क्योंकि घर-गिरस्ती ही स्त्रियोंकी अपनी चीज है। पति अच्छे हों या बुरे, घर-गिरस्तीको तो अंगीकार करना ही होगा। अगर यह बात बिलकुल असम्भव हो, तो मरनेके सिवा और कोई गति ही नहीं।

कुमुदने हँसकर कहा—"और नहीं तो यही सही। इसमें मौतका क्या दोष?"

हैं, उतनी ही घूम-फिरकर उसीमे फँसती जाती हैं। तुम लोग बहुत जानते हो, उसीसे तुम लोगोंका मन छुटकारा पा जाता है, हम लोग बहुत मानती हैं, उसीसे हमारे जीवनका शून्य भरता है। तुम जब समझा देते हो, तो समझ जाती हू कि शायद मेरी ग़लती है, लेकिन गलती समझ लेना और ग़लती छोड देना, क्या एक ही बात है? लताकी तरह हमारी ममता सब कुछको जकड-जकड़कर लिपट जाती है, चाहे उसमें भलाई हो या बुराई, फिर उसे छोड नहीं सकती।"

विप्रदासने कहा—"इसीलिए तो संसारमे कापुरुषोंकी पूजाको पुजारिनोंको कमी नहीं होती। वे जानते वक्त तो अपवित्रको अपवित्र ही जानती हैं, लेकिन मानते वक्त उसे पवित्र-सा बनाकर ही मानती हैं।"

कुमुदने कहा—"क्या करू भइया, घर-गिरस्तीको दोनों हाथोंसे जकडे रहनेके लिए ही हमारी सृष्टि हुई है। इसीसे हम पेडको भी जकडे रहती हैं और सूखे ठूँठको भी। जितनी देर हमें गुरुको माननेमे लगती है—उतनी ही देर पाखंडीको माननेमें। जाल तो हमारे अपने ही भीतर है। दुःखसे हमें बचावे कौन? इसीलिए सोचती हू कि दुःख यदि पाना ही है, तो उसे मानकर ही उससे बचनेकी कोशिश करनी चाहिए। इसीसे तो स्त्रियाँ इतनी ज्यादा धरमकी शरण लिया करती हैं।"

विप्रदासने कुछ नहीं कहा, चुपचाप बैठे रहे।

किन्तु उनका चुपचाप बैठा रहना भी कुमुदको कष्टकर

मोतीकी माने कहा—"यह क्या बात, बहन? यह तीसरा व्यक्ति कौन है? तुम या मैं? तुम क्या समझती हो कि गाड़ीका किराया खर्च करके वे मुझे देखने आये हैं यहाँ?"

"नहीं, अब जाती हूँ, इनके लिए ब्यालू भेज दूँ।"

कहकर कुमुद चली गई।

[५२]

मोतीकी माने पूछा—"कुछ खबर है क्या?"

"है। देर न कर सका, तुम्हारे साथ सलाह करने आया हूँ। तुम तो चली आईं, उसके बाद अचानक भाई साहब चले आये मेरे कमरेमें। मिजाज था उस समय बहुत खराब। मामूली कीमतका एक गिल्टी किया हुआ चुरटका ऐस्ट्रे (राखदान) टेबिलसे गायब हो गया है। फिलहाल जिसने उसे लिया है, उसने अवश्य ही उसे सोना समझा है, नहीं तो क्यों व्यर्थ अपना सत्यानास करने बैठता। जानती तो हो, मामूली-सी कोई चीज़ इधर-उधर हो जानेसे भाई साहबकी विपुल सम्पत्तिकी भीत मानो हिल जाती है, यह उनसे सहा नहीं जाता। आज सवेरे आफिस जाते वक्त मुझसे कह गये थे—श्यामाको देश भेज देनेके लिए। मैं खूब उत्साहके साथ ही इस पवित्र कार्यमें लग गया था। मैंने ठीक किया था कि आफिससे उनके लौटनेके पहले ही इस कामको पूरा कर

मोतीकी माने उद्विग्न होकर कहा—"ऐसी बात मत कहो।"

कुमुद नहीं जानती कि कुछ दिन हुए, उसके मुहल्लेमे ही एक सत्रह-अठारह वर्षकी बहूने कार्बोलिक ऐसिड खाकर आत्महत्या कर ली थी। उसका एम० ए० पास पति है—गवर्मेन्ट आफिसमें ऊँची नौकरी करता है। स्त्रीने चाँदीकी एक कंघी खो दी थी, माने उसकी शिकायत की, पतिने उठाकर स्त्रीके एक लात जमा दी। मोतीकी माके रोंगटे खड़े हो गये उसकी याद आते ही।

इतनेमें ही नवीन आ गया। कुमुद प्रसन्न हो उठी। बोली—"मैं तो जानती थी, लालाजीके आनेमें ज्यादा देर न लगेगी।"

नवीनने मुस्कराकर कहा—"न्यायशास्त्रपर बऊरानीका दखल है। पहले देखा श्रीमती धुम्रांको, उससे श्रीमान् अग्निके आविर्भावका अन्दाज लगानेमें कठिनता नहीं मालूम हुई होगी।"

मोतीकी माने कहा—"बऊरानी, तुम्हींने इनको शह दे-देकर सिरपर चढाया है। मनमें वो समझते हैं कि तुम उन्हें देखकर खुश होती हो, इसी मिजाजमें—"

"मुझे देखकर भी जो खुश हो सकती हैं, उसमे क्या कुछ कम सामर्थ्य है? जिन्होंने मुझे बनाया है, उन्हे भी अपने हाथका काम देखकर अनुताप हुआ है, और जिन्होने मेरा पाणिग्रहण किया, उनके मनका भाव तो 'देवा न जानन्ति कुतो मनुष्या'।"

"लालाजी, तुम दोनों मिलकर शास्त्रार्थ करो, तीसरा व्यक्ति रहकर छन्दोभंग नहीं करना चाहता, अब मैं जाती हू।"

मोतीकी माने कहा—"यह क्या बात, बहन? यह तीसरा व्यक्ति कौन है? तुम या मैं? तुम क्या समझती हो कि गाडीका किराया खर्च करके वे मुझे देखने आये हैं यहाँ?"

"नहीं, अब जाती हूं, इनके लिए ब्यालू भेज दूं।"

कहकर कुमुद चली गई।

[५२]

मोतीकी माने पूछा—"कुछ खबर है क्या?"

"है। देर न कर सका, तुम्हारे साथ सलाह करने आया हूं। तुम तो चली आईं, उसके बाद अचानक भाई साहब चले आये मेरे कमरेमें। मिजाज था उस समय बहुत खराब। मामूली कीमतका एक गिल्टी किया हुआ चुरटका ऐस्ट्रे (राखदान) टेबिलसे गायब हो गया है। फिलहाल जिसने उसे लिया है, उसने अवश्य ही उसे सोना समझा है, नहीं तो क्यों व्यर्थ अपना सत्यानास करने बैठता। जानती तो हो, मामूली-सी कोई चीज़ इधर-उधर हो जानेसे भाई साहबकी विपुल सम्पत्तिकी भीत मानो हिल जाती है, यह उनसे सहा नहीं जाता। आज सवेरे आफिस जाते वक्त मुझसे कह गये थे—श्यामाको देश भेज देनेके लिए। मैं खूब उत्साहके साथ ही उस पवित्र कार्यमें लग गया था। मैंने ठीक किया था कि आफिससे उनके लौटनेके पहले ही इस कामको पूरा कर दूंगा।

इतनेमें दोपहरको डेढ़ बजे भाई साहब अचानक आ धमके सीधे मेरे कमरेमे। बोले—'अभी रहने दो।' कहकर बाहर जा रहे थे कि इतनेमे उनकी निगाह पड गई डेस्कपर रखी हुई बऊरानीकी उस तसवीरपर। ठिठक गये। मैं ताड गया कि तिरछी नजरको सीधी करके तसवीर देखनेमे भाई साहबको शरम मालूम होती है। मैंने कहा—'भाई साहब जरा बैठिये, ढाकेकी एक साडी तुम्हे दिखाना है। मोतीकी माकी छोटी भौजाईका चौक है, सो उसे भेजनी है। लेकिन गणेशराम कीमतमें मुझे ठग रहा है, ऐसा मालूम होता है। तुमसे जरा उसकी कीमत जँचवानी है। मेरी समझमे तो तेरह रुपये उसकी क़ीमत नहीं हो सकती। ज्यादासे ज्यादा होगी, तो नौ साढे-नौ रुपयेके भीतर होनी चाहिए।"

मोतीकी मा दंग रह गई, बोली—"यह बात तुम्हारे दिमाग़मे कहाँसे आई? मेरी छोटी भौजाईके चौकेकी तो अभी कोई सम्भावना ही नहीं। उसके गोदके बच्चेकी उमर तो कुल डेढ महीनेकी है। बात बनाकर कहनेमे आजकल तुम बड़े चलते-पुर्जे हो गये हो, मालूम होता है। यह नई विद्या तुम्हें कहाँसे मिल गई?"

"जहाँसे कालिदासको कवित्व मिला था—वाणी वीणापाणिसे।"

"वीणापाणि जब तक तुम्हें छोड़ न दें, तब तक तुम्हारे साथ घर-गिरस्ती चलाना मुश्किल होगा।"

'प्रतिज्ञा की है, स्वर्गारोहणके समय नरकके दर्शन करता जाऊँगा, बऊरानीके चरणोंमें यही मेरा दान ।"

"मगर साढ़े-नौ रुपये कीमतकी ढाकेकी साड़ी हाल-की-हाल तुम्हे मिल कहांसे गई ?"

"कहीं भी नहीं। बीस मिनट बाद वापस आकर कह दिया कि गणेशराम वह साड़ी मुझसे बिना कहे ही वापस ले गया है। भाई साहबके चेहरेको देखकर समझ गया कि इस बीचमे तसवीरने उनके दिमागमें घुसकर स्वप्नका रूप धारण कर लिया है। न मालूम क्यों, ससारमें मेरे ही सामने भाई साहबको जरा-कुछ आंखोंकी शरम है, और किसीकी होती तो तसवीरको झटसे उठाकर चल देनेमें उन्हे जरा भी सकोच न होता।"

"तुम भी तो कम लोभी नहीं हो। भाई साहबको उसे दे ही देते तो तुम्हारा क्या बिगड़ जाता।"

"सो दे दी,—मगर ऐसे नहीं दी। मैंने कहा—'भाई साहब, इस तसवीरपर-से आयल-पेन्टिंग कराके उसे तुम अपने सोनेके कमरेमे लगवा लो तो ठीक हो न ?' भाई साहबने मानो उदासीन भावसे कहा—'अच्छा, देखा जायगा।' कहकर वे तसवीर लेकर ऊपरके कमरेमे चले गये। उसके बाद क्या हुआ, ठीक मालूम नहीं। शायद उनका आफिस जाना नहीं हुआ, और उस तसवीरके वापस मिलनेकी मैंने आशा भी नहीं रखी।"

"तुम अपनी बऊरानीके लिए जब स्वर्ग ही खोनेको राजी हो, तो साथमें एक तसवीर और भी सही।"

"स्वर्गके विषयमें सन्देह है, तसवीरके बारेमें जरा भी

सन्देह नहीं था। ऐसी तसवीर जब कभी उतरती है—दैवसे। जिस दुर्लभ लग्नमे उनके मुँहपर लक्ष्मीका प्रसाद पूर्ण-रूपसे उतर आया था, ठीक वही शुभ योग उस तसवीरमें आ बैठा है। किसी-किसी दिन रातको सोतेसे उठकर बत्ती जलाकर मैंने उस तसवीरको देखा है। दियाके उजालेमें उसके भीतरका रूप मानो और भी ज़्यादा होकर दिखाई देता है।"

"क्यो जी, मेरे सामने तुम्हें इतनी ज्यादती करते जरा भी डर नहीं लगता ?"

"डर अगर हो तो तुम्हारे सोचनेकी बात भी होती। उन्हें देखकर मेरा आश्चर्य किसी तरह जाता ही नहीं। सोचता हू, हम लोगोंके भाग्यमे यह सम्भव हुआ कैसे ? मेरे तो रोंगटे खडे हो जाते है—जब मैं सोचता हू कि मुझे उनसे बऊरानी कहनेका हक है। और वे इस तुच्छ नवीन जैसे आदमीको पास बिठाकर हँसती हुई खिला-पिला सकती है, संसारमें यह इतना सहज हुआ कैसे ? हमारे घरानेमे सबसे बढकर अभागे भाई साहब है। जो चीज उन्हे सहज-स्वभाव मिली, उसे ऐसी कठिनतासे बाँधने चले कि उसे खो ही बैठे।"

"क्यों जी, बऊरानीकी बातोंमे जब तुम्हारा मुंह खुल जाता है, तो फिर बन्द ही नहीं होता।—बात क्या है।"

"मझली बऊ, मुझे मालूम है, तुम्हें जरा यह खटकना है।"

"नहीं, हर्गिज नहीं।"

"हाँ, थोडा-सा। मगर इसी प्रसंगमे एक बातकी याद

दिला देना ठीक होगा। नूरनगर स्टेशनपर पहले बऊरानीके भइयाको देखकर तुमने जो बातें कहीं थीं, चलती बोलीमे उसे भी ज्यादती कहा जा सकता है।"

"अच्छा, अच्छा, उन सब तर्कोंको रहने दो, तुम क्या कहना चाहते थे, कहो।"

"मुझे तो मालूम पडता है कि भाई साहब आज-ही-कलमे बऊरानीको बुलवा भेजेंगे। मुझे मालूम है, बऊरानी इतने आग्रहसे मायके चली आईं, उसके बाद फिर इतने दिन हो गये—जानेका नाम तक नहीं, इससे भाई साहबका अभिमान हद दर्जे तक पहुच गया है। यह बात किसी तरह भाई साहबकी समझमें ही नहीं आती कि सोनेके पिंजडेसे चिडियाको लोभ क्यो नहीं। अबोध चिडिया है, अकृतज्ञ है।"

"यह तो अच्छी बात है, जेठजी ही बुला लें। बात तो यही थी।"

"मेरी समझसे बुलानेके पहले ही अगर बऊरानी चली जायँ, तो अच्छा हो। भाई साहबके उतने अभिमानकी जीत ही सही। इसके सिवा विप्रदास बाबू भी चाहते हैं कि बऊरानी अपने घर जायँ, मैंने ही मना कर दिया था।"

विप्रदासके साथ इस बारेमें आज क्या-क्या बातें हुई हैं, मोतीकी माने उसका कुछ भी आभास नहीं दिया, बोली—"विप्रदास बाबूके पास जाकर कहो तो सही।"

"मैं जाता हू, सुनकर वे प्रसन्न होंगे।"

इतनेमे कुमुदने दरवाजेके पास आकर वाहरसे ही कहा—"भीतर आ सकती हू।"

मोतीकी माने कहा—"तुम्हारे लालाजी तो प्रतीक्षामे बैठ ही हैं।"

"जन्म-जन्मसे प्रतीक्षा कर रहा था, अव दर्शन मिले हैं।"

"उंह, लालाजी, इतनी वात वना-वनाकर कहना तुम सीखे कहांसे ?"

"मुझे खुद ही आश्चर्य होता है, समझमे नहीं आता।"

"अच्छा, चलो अव खाने चलो।"

"खानेसे पहले एक वार तुम्हारे भइयासे मिल लूं—वातचीत करनी है।"

"नहीं, सो नहीं होगा।"

"क्यों ?"

"आज भइया वहुत वोले हैं, अव आज रहने दो।"

"अच्छी खवर है।"

"सो होने दो, कल चले आना वल्कि। आज कोई भी वात नहीं।"

"कल शायद छुट्टी न मिले, शायद कोई विघ्न आ जाय। दुहाई है तुम्हारी, आज वस एक वार पाँच मिनटके लिए। तुम्हारे भइया खुश होगे, कोई हानि नहीं पहुचेगी उन्हें।"

"अच्छा, पहले तुम व्यालू कर लो, उसके वाद।"

व्यालू करनेके वाद कुमुद नवीनको विप्रदासके कमरेमें ले

गई। देखा कि भइया उस समय भी सोये नहीं हैं। घरमें अँधेरा था, दियाकी लौ मन्द पड़ गई थी। खुले हुए जंगलेमेंसे तारे दिखाई दे रहे हैं, रह-रहकर जोरोंसे दखिनी हवा चली आ रही है, घरके पर्दे, बिछौनेकी झालर, अलगनीपर टंगे विप्रदासके कपड़े तरह-तरहकी छाया फैलाते हुए काँप रहे हैं। जमीनपर अखबारका एक पन्ना इधरसे उधर उड़ा-उड़ा फिरता है। विप्रदास अधलेटी हालतमें निश्चल होकर चुपचाप बैठे हैं। आगे बढ़नेमें नवीनके पैर नहीं उठते। सन्ध्याकी छाया और रोगकी शीर्णताने विप्रदासको एक आवरण दे डाला है, मालूम होता है, मानो वह संसारसे बहुत दूर हैं, मानो अन्य लोकमें हैं। मालूम हुआ—उनके समान इस तरहका अकेला आदमी संसारमें और कोई नहीं।

नवीनने आगे बढ़कर विप्रदासके पैर छुए, कहा—"विश्राममें खलल नहीं डालना चाहता। एक बात कहकर चला जाऊँगा। समय हो गया, बड़ुरानी अब घर चलें, इसके लिए हम लोग बाट जोह रहे हैं।"

विप्रदासने कोई उत्तर नहीं दिया, चुपचाप बैठ रहे।

कुछ देर बाद नवीनने कहा—"आपकी आज्ञा पाते ही उन्हें लिवा जानेकी तैयारी करूँ—"

इतनेमें कुमुद धीरेसे आकर भइयाके पैरोंके पास बैठ गई। विप्रदासने उसके मुहकी ओर देखते हुए कहा—"अगर तू समझे कि तेरे जानेका समय हो गया, तो जा कुमू।"

कुमुदने कहा—"नहीं, भइया, नहीं जाऊँगी।" कहकर वह विप्रदासके घुटनोंपर औंधी होकर झुक पडी।

घरमे सन्नाटा था, सिर्फ बीच-बीचमे रह-रहकर जोरोंकी हवा आती और एक ढीली खिडकीको खडखड़ा जाती, साथ ही पाहरके बगीचेके पेडके पत्ते भी अकुला उठते।

कुमुद थोडी देर बाद उठ खडी हुई, नवीनसे बोली—"चलो, अब देर मत करो। भइया, तुम सोओ।"

मोतीकी माने घर आकर नवीनसे कहा—"इतनी ज्यादती लेकिन अच्छी नहीं होती।"

"यानी, आँखोंमे सुई चुभाना चाहे जैसा हो, मगर आँखोंका लाल हो उठना बिलकुल ही ठीक नहीं।"

"नहीं जी, नहीं, यह उनका घमंड है। ससारमे उनके योग्य कुछ मिलेगा ही नहीं, वे सबके ऊपर हैं।"

"मझली बऊ, इतना बडा घमड सबको नहीं सोभता, पर उनकी बात न्यारी है।"

"इसका मतलब यह थोडे ही है कि नाते-रिश्तेदारोंसे बिगाडते फिरें?"

"नाते-रिश्तेदार कहनेसे ही नाते-रिश्तेदार थोडे ही हो जाते हैं। वे हम लोगोंसे बिलकुल अलग श्रेणीके आदमी हैं। नातेके हिसाबसे उनके साथ व्यवहार करनेमे मुझे संकोच होता है।"

"कोई चाहे कितना ही बड़ा आदमी क्यों न हो, फिर भी नातेदारीका ज़ोर होता है, यह याद रखना।"

नवीन समझ गया कि इस आलोचनामें कुमुदपर मोतीकी माकी ईर्ष्याकी भी बू मौजूद है। इसके सिवा यह भी सच है कि स्त्रियोंके लिए पारिवारिक बन्धनका मूल्य बहुत ज्यादा होता है। इसीसे नवीनने इस विषयमें वृथा तर्क न करके कहा—"और कुछ दिन देख लें। भाई साहबके आग्रहको भी जरा बढ़ जाने दो, इसमें हर्ज क्या है।"

[५३]

मधुसूदनके घरमें श्यामाका स्थान पक्का हो गया है, इससे वह प्रत्याशा कर सकती थी, किन्तु उस स्वत्वका उसे अनुभव तो होता ही नहीं। पहले तो उसे ऐसा मालूम हुआ था कि घरके नौकर-चाकरोंपर उसको कर्तृत्व प्राप्त हो गया है, किन्तु अब पद-पदपर समझ रही है कि वे उसे मालिकिनके आसनपर बिठानेको मनसे राजी नहीं हैं। हिम्मत करके प्रकट रूपसे उसकी अवज्ञा कर सकें तो मानो वे सुखकी नींद सोयें—ऐसी हालत है। इसीलिए श्यामा जब-तब बेमतलब उन्हें डाँटती-फटकारती और बिना कारण फरमाइश करके उनके दोष पकड़ती है। खिच-खिच करती रहती है। बाप-महतारी तकको गाली-गलौज देती है। कुछ दिन पहले इस घरमें

श्यामा किसी गिनतीमे न थी,—लोगोंकी इस धारणाको धोकर पोंछ डालनेके लिए उसने बड़ी कड़ाईसे मांजने-घिसनेका काम शुरू किया था, लेकिन उसका कुछ परिणाम न निकला। घरके एक पुराने नौकरने श्यामाकी फटकार न सह सकनेके कारण कामसे इस्तीफा दे दिया। इसपर श्यामाको बुरी तरह सिर झुकाना पड़ा था। उसकी वजह यह कि अपने धन-भाग्यके विषयमे मधुसूदनमे कुछ अन्ध-संस्कार मौजूद हैं। जो नौकर उसकी आर्थिक उन्नतिके समयके हैं, उनकी मृत्यु या पदत्यागको भी वह असगुन समझता है। यही कारण है कि उस समयका एक स्याही-लगा भद्दा पुराना डेस्क आफिस-रूममे हालके कीमती असबाबोंके बीचमे बिना किसी संकोचके ज्यो-का-त्यो विराजमान है, और उसपर उसी जमानेकी जस्तेकी दावात और एक सस्ते दामकी विलायती काठकी कलम अभी तक रखी हुई है। उस कलमसे उसने अपने व्यापारके पहले और बड़े एक दस्तावेजपर दस्तखत किये थे। उस समयके उड़िया नौकर दधियाने जब कामसे इस्तीफा दिया, तो मधुसूदनने उसपर ध्यान ही नहीं दिया, उल्टी उसकी तकदीरसे बख्शीश और मिल गई। इसपर श्यामासुन्दरीने घोरतर अभिमान करना चाहा, मगर वहा किसकी दाल गल सकती थी। दधियाका हास्यपूर्ण चेहरा उसे देखना पड़ा। श्यामाके लिए एक मुश्किल है कि वह मधुसूदनको सचमुच ही चाहती है, इसीसे मधुसूदनके मिजाजपर ज्यादा दबाव डालनेकी उसकी हिम्मत नहीं पड़ती। सुहाग किस सीमा तक आकर स्पर्धाका रूप धारण करेगा,

बहुत डरते-डरते उसका अन्दाज करके चलती है। मधुसूदन भी निश्चित समझता है कि श्यामाके बारेमे चिन्ता करने या समय नष्ट करनेकी जरूरत नहीं। लाड-प्यारसे होनेवाले अपव्ययका परिमाण घटा देनेपर भी दुर्घटनाकी आशका बहुत कम है। फिर भी श्यामाके बारेमे उसका एक स्थूल मोह है, परन्तु उस मोहको सोलहो आना भोगमे लाते हुए भी आसानीसे उसे सम्हालते हुए चला जा सकता है;—इस आनन्दसे मधुसूदनको उत्साह मिलता है, इसका व्यतिक्रम होनेसे बन्धन टूट जाता। मधुसूदनके लिए कामसे बढकर और कोई चीज नहीं। उस कामके लिए सबसे ज्यादा जरूरी है उसका अविचलित कर्तृत्व। उसकी सीमाके भीतर श्यामाका कर्तृत्व प्रवेश करनेसे डरता है, जरासा पैर बढाया था कि ठोकर खाकर लौट आया। इसीसे श्यामा अपनेको बार-बार दान ही करती है, दावा करते ही ठगा जाती है। रुपये-पैसे चीज-वस्त आदिसे श्यामा हमेशा ही वचित है—जिसपर उसके लोभका अन्त नहीं। उसमें भी उसे एक हद तक चलना पडता है। इतने बडे धनीसे जिस चीजकी अनायास ही आशा की जा सकती थी, वह भी उसके लिए दुराशा हो गई। मधुसूदन बीच-बीचमें किसी-किसी दिन खुश होकर उसे कुछ-कुछ कपडा-लत्ता और गहना-गुरिया ला देता है, लेकिन उससे उसकी सग्रह करनेकी भूख मिटती नहीं। छोटी-मोटी लोभकी चीज हडप करनेके लिए बार-बार उसका हाथ चचल हो उठता है, किन्तु उसमें भी बाधा है। इसी तरहकी

एक मामूली घटनाके लिए कुछ दिन पहले उसके निर्वासनकी व्यवस्था हुई थी, लेकिन श्यामाके संग और सेवाका मधुसूदन आदी हो गया था—उसकी वह आदत पान-तमाखूके अभ्यासकी तरह सस्ती, पर जबरदस्त थी। उसमें व्याघात होनेसे मधुसूदनके काममें ही बाधा आयेगी, इस आशंकासे ही अबकी वार श्यामाका दंड रद हो गया, परन्तु दंडका भय सिरके ऊपर लटकता रहा।

अपने इस तरहके कमज़ोर अधिकारके अंदर श्यामासुन्दरीके मनमें एक आशंका लगी ही रहती है—जाने कब आकर कुमुद अपना सिंहासन अधिकार कर बैठे। इस ईर्ष्याकी पीडासे उसके मनमें जरा भी शान्ति नहीं। वह जानती है कि कुमुदके साथ उसकी प्रतियोगिता चल ही नहीं सकती, दोनोंका क्षेत्र एक नहीं है। कुमुद मधुसूदनके अधिकारके बाहर है—वही उसका बेहद जोर है, और श्यामा बहुत रोई-बिलखी है। कितनी ही वार सोचा है—'मैं मर जाऊं तो अच्छा।' तकदीर ठोंककर उसने कहा है—'इतनी सस्ती मैं हुई क्यों ?' उसके बाद सोचा है—'सस्ती हू, इसीसे जगह मिल गई है, जिसकी कीमत ज़्यादा है, उसका आदर ज़्यादा है, जो सस्ती है, वह शायद सस्तेपनके कारण ही जीत जाती है।'

मधुसूदनने जब श्यामाको ग्रहण नहीं किया था, तब श्यामाको इतना असह्य दुःख नहीं था। उसने अपने उपवासी भाग्यको एक तरहसे स्वीकार ही कर लिया था। कभी-कभी मामूली खुराकको ही उसने काफी समझा है। आज अधिकार पाने और

न पानेमें किसी भी तरह सामजस्य नहीं हो रहा। 'अब खोया, अब खोया' के डरसे मन आतंकित हो उठा है। भाग्यकी रेल-लाइन ऐसी कच्ची तौरसे बिछाई गई है कि 'डिरेल' (पटरीसे उतरने) का भय सर्वत्र और प्रति क्षणमे ही है। मोतीकी माके पास जाकर एक बार साफ मनसे बातचीत करके सान्त्वना पानेकी उसने कोशिश की थी। लेकिन वह ऐसी झुंझलाहटके साथ सिर हिलाकर अलग ही से बचकर निकल गई कि उसका अगर वह कोई घातक बदला ले सकती, तो तुरन्त लेती, परन्तु वह जानती है कि घरके इन्तजामके विषयमे मधुसूदन मोतीकी माकी क़दर करता है, वहा जरा भी धका नहीं सह सकता। तभीसे दोनोंकी बोल-चाल बद है, जहा तक बनता है, मुंह देखादेखी भी नहीं। इस तरह इस घरमे श्यामाका स्थान पहलेसे भी सकीर्ण हो गया है। कहीं भी उसे जरा स्वच्छदता नहीं।

इतनेमें, एक दिन उसने शामको सोनेके कमरेमे आकर देखा टेबिलपर दीवालसे सटा हुआ कुमुदका फोटोग्राफ। जो वज्र उसके सिरपर आकर गिरता, उसकी विद्युत्‌शिखा उसकी आंखोंके सामने दिखाई दी। कांटेमें फँसी हुई मछलीकी तरह भीतरसे उसका दिल फड़फड़ाने लगा। मनमे आई कि तसवीरसे निगाह हटा ले, लेकिन नहीं हटा सकी। एकटक देखती रही, चेहरा फ़क पड गया, आंखें जलने लगीं, मुट्ठी मजबूतीसे बांध ली। कोई चीज तोड डालनेकी—फाड-चीर डालनेकी इच्छा होती है। इस डरसे कि इस घरमे रहनेसे कोई चीज नुक़सान कर डालेगी, भागकर

वह बाहर निकल आई। अपने घरमे जाकर बिस्तरपर औंधी पड रही और बिछौनेकी चादरको चोथ-चोथकर टुकडे-टुकडे कर डाले।

रात हो आई। वाहरसे बैराने खबर दी कि महाराज ऊपर बुला रहे हैं। कहनेकी सामर्थ्य नहीं कि 'नहीं जाती'। झटपट उठ कर मुंह-हाथ धोकर बूटीदार ढाकेकी साडी पहनकर ऊपरसे जरा खुशबू छिडककर गई ऊपर—मधुसूदनके कमरेमें। वह भरसक इस बातकी कोशिशमे रही कि तसवीरपर उसकी निगाह न जाय। लेकिन ठीक तसवीरके सामने ही बत्ती है—उसके सारे प्रकाशने मानो किसीकी दीप्त दृष्टिकी तरह उस तसवीरको उद्भासित कर रखा है। घर-भरमे वह तसवीर ही सबसे बढकर देखने-लायक चीज बन गई है। श्यामाने नियमानुसार पनबट्टामेसे पान निकालकर मधुसूदनको पान दिया। उसके बाद पैरोंके पास बैठकर उसके पैरोंपर हाथ फेरने लगी। किसी भी कारणसे हो, आज मधुसूदन प्रसन्न था। विलायती दुकानसे चाँदीका एक फोटोग्राफका फ्रेम खरीद लाया था। गंभीरताके साथ श्यामासे उसने कहा—"यह लो।" श्यामाको लाड़ करते समय भी मधुसूदन मधुर रसकी अवतारणामें काफी कंजूसी किया करता है। क्योंकि वह जानता है कि उसे जरा भी शह देनेसे फिर वह उसकी मर्यादा नहीं रख सकती। फ्रेम एक ब्राउन कागजमें मुडा हुआ था। श्यामाने आहिस्तेसे कागज खोल डाला, बोली—"क्या होगा इसका?"

मधुसूदनने कहा—"नहीं जानतीं, इसमें फोटोग्राफ रखा जाता है।"

श्यामाको छातीके भीतर मानो किसीने हनके हंटर मारा, बोली—"किसका फोटोग्राफ रखोगे ?"

"तुम खुद अपना रखना। उस दिन वो जो फोटो उतरवाया था।"

"मुझे इतने सुहागका क्या करना है।"—कहकर उसने फ्रेम उठाकर धरतीसे दे मारा।

मधुसूदनको बड़ा आश्चर्य हुआ, बोला—"इसके मानी क्या ?"

"इसका माने कुछ नहीं।"—कहकर हाथोंसे मुँह ढककर रोने लगी। उसके बाद बिछौनेसे उठकर जमीनपर पड़कर सिर धुनने लगी। मधुसूदनने सोचा—कम दामकी चीज़ उसे पसन्द नहीं आई, शायद उसकी इच्छा थी एक कीमती गहनेके लिए। दिन-भर आफिसका काम करनेके बाद शामको घर आकर उसे यह उपद्रव जरा भी अच्छा न लगा। यह तो लगभग हिस्टीरिया है। हिस्टीरियासे उसे बड़ी चिढ़ है। बड़े जोरसे कड़ककर बोला—"उठो जल्दी, जल्दी उठो।"

श्यामा उठकर तेजीके साथ घरसे बाहर चली गई। मधुसूदनने कहा—"यह सब यहाँ किसी तरह नहीं चल सकता।"

मधुसूदन श्यामाको अच्छी तरह जानता है। वह निश्चित समझता था कि अभी आती है, आकर पैरों पड़कर माफी माँगेगी,—उस समय जरा डाँटकर दो बातें सुना देनी हैं।

दस बज गये, मगर श्यामा नहीं आई। और एक बार श्यामाके दरवाजेके बाहरसे आवाज आई—"महाराज बुलाते हैं।"

वह बाहर निकल आई। अपने घरमे जाकर बिस्तरपर औंधी पड रही और बिछौनेकी चादरको चोथ-चोथकर टुकडे-टुकडे कर डाले।

रात हो आई। बाहरसे बैराने खबर दी कि महाराज ऊपर बुला रहे हैं। कहनेकी सामर्थ्य नहीं कि 'नहीं जाती'। झटपट उठ कर मुंह-हाथ धोकर बूटीदार ढाकेकी साडी पहनकर ऊपरसे जरा खुशबू छिडककर गई ऊपर—मधुसूदनके कमरेमें। वह भरसक इस बातकी कोशिशमे रही कि तसवीरपर उसकी निगाह न जाय। लेकिन ठीक तसवीरके सामने ही बत्ती है—उसके सारे प्रकाशने मानो किसीकी दीप्त दृष्टिकी तरह उस तसवीरको उद्भासित कर रखा है। घर-भरमे वह तसवीर ही सबसे बढकर देखने-लायक चीज बन गई है। श्यामाने नियमानुसार पनबट्टामेसे पान निकालकर मधुसूदनको पान दिया. उसके बाद पैरोंके पास बैठकर उसके पैरोंपर हाथ फेरने लगी। किसी भी कारणसे हो, आज मधुसूदन प्रसन्न था। विलायती दुकानसे चाँदीका एक फोटोग्राफका फ्रेम खरीद लाया था। गंभीरताके साथ श्यामासे उसने कहा—"यह लो।" श्यामाको लाड करते समय भी मधुसूदन मधुर रसकी अवतारणामे काफी कंजूसी किया करता है। क्योंकि वह जानता है कि उसे जरा भी शह देनेसे फिर वह उसकी मर्यादा नहीं रख सकती। फ्रेम एक ब्राउन कागजमे मुडा हुआ था। श्यामाने आहिस्तेसे कागज खोल डाला, बोली—"क्या होगा इसका ?"

मधुसूदनने कहा—"नहीं जानतीं, इसमे फोटोग्राफ रखा जाता है।"

श्यामाकी छातीके भीतर मानो किसीने हनके हटर मारा, बोली—"किसका फोटोग्राफ रखोगे ?"

"तुम खुद अपना रखना। उस दिन वो जो फोटो उतरवाया था।"

"मुझे इतने सुहागका क्या करना है।"—कहकर उसने फ्रेम उठाकर धरतीसे दे मारा।

मधुसूदनको बड़ा आश्चर्य हुआ, बोला—"इसके मानी क्या ?"

"इसका माने कुछ नहीं।"—कहकर हाथोंसे मुँह ढककर रोने लगी। उसके बाद बिछौनेसे उठकर जमीनपर पड़कर सिर धुनने लगी। मधुसूदनने सोचा—कम दामकी चीज उसे पसन्द नहीं आई, शायद उसकी इच्छा थी एक क्रीमती गहनेके लिए। दिन-भर आफिसका काम करनेके बाद शामको घर आकर उसे यह उपद्रव जरा भी अच्छा न लगा। यह तो लगभग हिस्टीरिया है। हिस्टीरियासे उसे बड़ी चिढ़ है। बड़े जोरसे फड़ककर बोला—"उठो जल्दी, जल्दी उठो।"

श्यामा उठकर तेजीके साथ घरसे बाहर चली गई। मधुसूदनने कहा—"यह सब यहाँ किसी तरह नहीं चल सकता।"

मधुसूदन श्यामाको अच्छी तरह जानता है। वह निश्चित समझता था कि अभी आती है, आकर पैरों पड़कर माफी माँगेगी,—उस समय जरा डाँटकर दो बातें सुना देनी हैं।

दस बज गये, मगर श्यामा नहीं आई। और एक बार श्यामाके दरवाज़ेके बाहरसे आवाज़ आई—"महाराज बुलाते हैं।"

श्यामाने कह दिया—"महाराजको कह दो कि मेरी तबीयत खराब है।"

मधुसूदन सोचने लगा—इतनी हिमाकत। बड़ी हिम्मत बढ़ गई है, हुक्म पाकर भी नहीं आती।

मनमे सोचा था कि और थोडी देर बाद आवेगी। सो भी नहीं आई। ग्यारह बजनेमे पंद्रह मिनट बाकी हैं। बिस्तरसे उठकर तेज़ीके साथ वह श्यामाके पास चल दिया। घरके भीतर घुसते ही देखा कि अंधेरा पडा है। अँधेरेमें साफ दिखाई दिया—श्यामा जमीनपर पडी है। मधुसूदनने सोचा—यह सब नखरे हैं, सिर्फ मनवानेके लिए।

गरजकर बोला—"उठके चलो सीधेसे, जल्दी उठो। नखरे मत दिखाओ।"

श्यामा बिना कुछ कहे उठकर चल दी पीछे-पीछे।

[५४]

दूसरे दिन, मधुसूदन आफिस जानेसे पहले खा-पीकर जब ऊपर आराम करने गया, तो देखा कि टेबिलसे तसवीर गायब। और दिनकी तरह श्यामा आज पान लेकर मधुसूदनकी सेवाके लिए तैयार न थी। आज वह गैरहाज़िर थी। उसे बुलवाया गया। चली तो आई, पर साफ मालूम हुआ कि आज वह ज़रा ऐंठ है। मधुसूदनने पूछा—"टेबिलपर तसवीर थी, कहाँ गई?"

श्यामाने अत्यन्त आश्चर्यका बहाना करके कहा—"तसवीर ! कैसी तसवीर।"

बहानेकी हद जरा जरूरतसे ज्यादा बढ़ गई। साधारणत पुरुषोंकी बुद्धिपर स्त्रियोंकी अश्रद्धा होती है, इसीसे ऐसा हुआ।

मधुसूदनने गुस्सेमें आकर कहा—"तसवीर देखी नहीं तुमने।"

श्यामाने निहायत भलो-मानसकी तरह मुह बनाकर कहा—"नहीं तो।"

मधुसूदन गरज उठा—"झूठ बोल रही हो।"

"झूठ क्यों बोलूंगी, तसवीर लेकर में करूंगी क्या?"

"कहाँ रखी है, जाओ निकालकर लाओ जल्दी। नहीं तो अच्छा नहीं होगा।"

"हे भगवान, कैसी आफत है। तुम्हारी तसवीर मैं कहाँ पाऊंगी, जो निकाल लाऊं?"

बैरा बुलाया गया। मधुसूदनने उससे कहा—"मझले बाबूको बुलाओ।"

नवीन आया। मधुसूदनने कहा—"बड़ी बहूको बुला लो।"

श्यामा मुंह बनाकर काठकी पुतलीकी तरह चुपचाप खड़ी रही।

नवीनने कुछ देर बाद सिर खुजलाते हुए कहा—"भाई साहब, एक दफे तुम खुद वहाँ जाओ तो कैसा? तुम्हीं जाकर अगर लिवा लाओ तो बड़रानीको खुशी होगी।"

मधुसूदन कुछ देर गम्भीरताके साथ हुक्का पीता रहा, फिर बोला—"अच्छा, कल इतवार है, कल जाऊंगा।"

नवीनने अपनी स्त्रीसे जाकर कहा—"एक काम कर आया हूं।"

"मेरी सलाह लिये बिना ही?"

"सलाह लेनेका वक्त नहीं था।"

"तब तो मालूम होता है तुम्हें पछताना पड़ेगा।"

"ताज्जुब नहीं। जन्मपत्रीमें बुद्धि-स्थानमें और कोई ग्रह नहीं है, है सिर्फ अपनी स्त्री, इसीलिए हमेशा तुम्हें अपने आसपास रखकर चलता हूं। बात यह है—भाई साहबने आज हुक्म दिया कि बऊरानीको बुला लो। मैं चटसे कह बैठा—तुम खुद जाकर अगर लिवा लाओ तो अच्छा हो। भाई साहब न मालूम कैसे मिज़ाजमें थे, राजी हो गये। तभीसे सोच रहा हूं, इसका नतीजा क्या होगा।"

"अच्छा नहीं होगा। विप्रदास बाबूका जैसा मिजाज देखा, क्या कहते, क्या कह बैठेंगे—कुछ ठीक नहीं। अन्तमें जाकर कहीं महाभारतकी लड़ाई न छिड़ जाय। तुमने ऐसा क्यों किया?"

पहला कारण यह है कि बुद्धिका कोठा ठीक उसी समय सूना था—तुम थीं दूसरी जगह। दूसरी बात यह कि उस दिन बऊरानीने जब कहा था कि 'मैं नहीं जाऊंगी', तो मैं उसके भीतरी मानीको समझ गया था। उनके भइया बीमार हालतमें कलकत्ते आये, फिर भी एक दिनके लिए महाराज उनसे मिलने नहीं गये,—उनकी यह उपेक्षा उन्हें बहुत खटक रही थी।"

सुनकर मोतीकी मा जरा चौंक उठी, उसे आश्चर्य हुआ कि अब तक इस बातपर उसका ध्यान क्यों नहीं गया।

दर असल वात यह है कि समुगलके बड़प्पनपर उसे ज़रा अहंकार है—यद्यपि वह खुद इस वातको नहीं जानती। उसका मन इस वातकी गवाही नहीं देता कि अन्य साधारण आदमियोंकी तरह महाराजा मधुसूदनपर भी नातेदारीकी जिम्मेवारी है।

उस दिनके तर्कका दुहराते हुए नवीनने जरा चुटकी ली, कहा—"अपनी बुद्धिसे शायद यह बात याद नहीं आता, तुम्हींने मुझे याद दिला दी थी।"

"कैसे, सुनूं?"

"उस दिन तुम्हींने कहा था कि नातेदारीकी जिम्मेवारी आत्म-अभिमानसे भी बढ़कर है। इससे मुझे यह समझनेकी हिम्मत आ गई कि 'महाराज' जैसे इतने बड़े आदमीको भी विप्रदास बावूसे मिलने जाना चाहिए था।"

मोतीकी मा हार माननेको तैयार नहीं, बात ही उड़ा दी—"कामके वक्त इतनी फाल्तू बातें करते हो, जिसका ठीक नहीं। पहले यह सोचो कि करना क्या चाहिए।"

"पहलेसे ही सब बातोंमें शुरूसे अन्त तक सोचनेसे पीछे धोखा खाना पड़ता है। पहले सोचना चाहिए हालकी बात—विप्रदास बावूसे भाई साहबका मिलने जाना। मिलने जानेपर उसका नतीजा क्या हो सकता है, अभीसे इस बातकी चिन्ता करना अपनी चिन्ताशीलताका परिचय देना है, परन्तु वह होगी अति-चिन्ताशीलता।"

"क्या जानें, मुझे मालूम होता है, बड़ी मुश्किल होगी।"

[५५]

उस दिन सवेरे बहुत देर तक कुमुद अपने भइयाके कमरेमें बैठकर गाती-बजाती रही है। सवेरेके सुरमे अपनी व्यक्तिगत वेदना विश्वकी चीज़ बनकर असीम रूपमे दिखाई देती है। बन्धनसे उसकी मुक्ति होती है। महादेवकी जटामे सर्प मानो भूषण होकर शोभा पाते हैं। व्यथाकी नदियाँ व्यथाके समुद्रमें जाकर बडा विराम पाती हैं। उसका रूप बदल जाता है, चंचलता लुप्त हो जाती है गम्भीरतामें। विप्रदासने उसास भर कर कहा—"संसारमें क्षुद्र काल ही सत्य होके दिखाई देता है कुमू, चिरकाल रहता है ओटमें, गानमे चिरकाल ही आता है सामने, क्षुद्र काल हो जाता है तुच्छ, इसीसे मनको मुक्ति मिलती है।"

इतनेमे खबर आई—"महाराज मधुसूदन आये हैं।"

क्षणमे कुमुदका चेहरा फक पड गया, उसे देखकर विप्रदासके हृदयको बडी चोट पहुची, बोले—"कुमू, तू भीतर जा। तेरी शायद जरूरत नहीं होगी।"

कुमुद जल्दीसे चली गई। मधुसूदन जान-बूझकर ही आया है बिना खबर दिये। इस पक्षवालोंको आयोजनके दैन्य ढकनेका अवकाश न मिले, यह थी उसके मनमें। मधुसूदनकी धारणा है कि बडे घरके आदमी होनेके कारण विप्रदासके एक तरहका बडप्पन है। यह कल्पना उससे सही नहीं ज

इसीलिए आज वह इस तरह आया कि मानो मिलने नहीं आया, दर्शन देने आया है।

मधुसूदनकी पोशाक थी विचित्र,—घरके नौकर-चाकर, दास-दासियाँ उसके प्रभावमें मुग्ध हो जायं—ऐसा वेश था। धारीदार विलायती शर्टके ऊपर एक रंगीन फूलदार सिल्ककी वास्कट है, कँधेपर तह की हुई चद्दर, पहनावेमे अच्छी तरह हिफ़ाजतसे चुनी हुई काली किनारीकी शान्तिपुरी धोती, पैरोंमें वार्निशदार काले दरबारी जूते, बड़े-बड़े हीरे-पन्नोंकी अगूठियोंसे अगुलियाँ झिलमिला रही हैं। प्रशस्त उदरकी परिधि वेष्टन किये हुए घड़ीकी मोटी सोनेकी चेन पड़ी है, हाथमें एक शौक़ीनी छड़ी है—हाथीके मुहकी शकलका उसका हत्था है, उसपर तरह-तरहके रत्न जड़े हुए हैं। मधुसूदन जल्दीसे असमाप्त नमस्कारका आभास देकर पलगके पास एक आराम-कुर्सीपर बैठ गया, बोला—"कैसी तबीयत है विप्रदास बाबू, शरीर तो उतना अच्छा नहीं मालूम होता।"

विप्रदासने उसका कुछ उत्तर न देकर कहा—"तुम्हारा शरीर तो अच्छा ही मालूम होता है।"

"खूब अच्छा हो, सो तो नहीं कह सकता—रोज़ शामको सिरमें दर्द होने लगता है, और भूख भी अच्छी तरह नहीं लगती। खाने-पीनेकी ज़रा भी बदपरहेज़ी हुई कि तकलीफ हुई। और फिर कभी-कभी रातको नींद नहीं आती, यह सबसे ज्यादा दुखदायी है।"

शुश्रूषाके लिए हरदम किसीकी ज़रूरत है, इस बातकी भूमिका बाँधी गई।

विप्रदासने कहा—"शायद आफिसके काममे ज्यादा परिश्रम करना पडता है।"

"ऐसा कुछ नहीं। आफिसका काम अपने ही आप चला जाता है, मुझे विशेष कुछ नहीं देखना पडता। मैक्नटन साहबपर ही ज्यादातर कामका भार है, सर आर्थर पीबडी भी मुझे बहुत कुछ सहायता पहुचाते हैं।"

पेचवान आया, पानका डिब्बा और सुपारी-इलायची-जर्दा आदि लिये नौकर आ खडा हुआ, उसमें से एक इलायची उठाकर मुँहमे डाल ली, और कुछ नहीं लिया। पेचवानका नल हाथमे लेकर दो-एक बार मुँहमे दिया, फिर वह बाएँ हाथमें गोदके ऊपर ही लटकता रहा। फिर उसका व्यवहार नहीं हुआ। भीतरसे खबर आई—नाश्ता तैयार है। मधुसूदनने जरा उतावलीके साथ कहा—"यह तो नहीं होगा। पहले ही कह चुका हू, खाने-पीनेके सम्बन्धमे बडे परहेजसे चलना पडता है।"

विप्रदासने फिर दूसरी बार अनुरोध नहीं किया। नौकरसे कहा—"बुआजीको कह दे, उनकी तबीयत ठीक नहीं, कुछ खायेंगे नहीं।"

विप्रदास चुप बने रहे। मधुसूदनने आशा की थी, कुमुदका जिक्र वे खुद ही करेंगे। इतने दिन हो गये, अब कुमुदको ससुराल लिवा ले जानेके लिए विप्रदास आप ही प्रसग छेड़ेंगे, मगर कुमुदका तो नाम भी नहीं लेते। भीतर-ही-भीतर उसे जरा-जरा गुस्सा आने लगा। सोचने लगा, यहाँ आकर भूल की। यह सब नवीनकी

ही शरारत है। अभी जाकर उसे खूब कडी सज़ा देनेके लिए उसका मन छटपटाने लगा।

इतनेमे एक मामूली-सी काली किनारीकी सफेद साडी पहने, आँखो तक घूँघट किये हुए कुमुद आ पहुची। विप्रदासको ऐसी उम्मेद न थी। वे आश्चर्यमे आ गये। पहले पतिके, फिर भइयाके पाँव छूकर कुमुदने मधुसूदनसे कहा—"भइयाकी तबीयत खराब है, कमज़ोर हैं, उन्हे ज्यादा बात करनेकी मनाई कर दी है डाक्टरने। तुम इस बगलके कमरेमे आ जाओ।"

मधुसूदनके चेहरेपर सुर्खी आ गई। जल्दीसे उठ खडा हुआ। पेचवानकी नली गोदसे धरतीपर गिर पडी। विप्रदासके मुँहकी ओर बिना देखे ही कहा—"अच्छा, तो अब चलता हू।"

पहले तो मनमें आई कि दनदनाता हुआ सीधा जाकर गाडीपर सवार हो और घर चला जाय, परन्तु मन जो खिंच गया है। बहुत दिन बाद आज कुमुदको देखा है। मामूली सीधे-सादे कपडे पहने हुए उसने आज ही देखा है उसे पहले-पहल। कुमुदको इतना सुन्दर पहले कभी नहीं देखा उसने। इतनी संयत, इतनी सरल। मधुसूदनके घर वह थी बनी-ठनी बहू—जैसे बाहरकी लडकी। आज मानो वह बहुत पाससे दिखाई दी। कैसी सरल सौम्य मूर्ति है। मधुसूदनका जी चाहने लगा—ज़रा भी देर न करके अभी उसे ले जाय। 'वह मेरी है, मेरी ही है, मेरे घरकी है, मेरे ऐश्वर्यकी है, मेरे सारे तन और मनकी है'—हेर-फेरकर यही कहनेको जी चाहता है उसका।

विप्रदासने कहा—"शायद आफिसके काममे ज्यादा परिश्रम करना पडता है।"

"ऐसा कुछ नहीं। आफिसका काम अपने ही आप चला जाता है, मुझे विशेष कुछ नहीं देखना पडता। मैक्नटन साहबपर ही ज्यादातर कामका भार है, सर आर्थर पीबडी भी मुझे बहुत कुछ सहायता पहुचाते हैं।"

पेचवान आया, पानका डिब्बा और सुपारी-इलायची-जर्दा आदि लिये नौकर आ खडा हुआ, उसमें से एक इलायची उठाकर मुँहमे डाल ली, और कुछ नहीं लिया। पेचवानका नल हाथमे लेकर दो-एक बार मुँहमे दिया, फिर वह बाएँ हाथमे गोदके ऊपर ही लटकता रहा। फिर उसका व्यवहार नहीं हुआ। भीतरसे खबर आई—नाश्ता तैयार है। मधुसूदनने जरा उतावलीके साथ कहा—"यह तो नहीं होगा। पहले ही कह चुका हूं, खाने-पीनेके सम्बन्धमे बडे परहेजसे चलना पडता है।"

विप्रदासने फिर दूसरी बार अनुरोध नहीं किया। नौकरसे कहा—"बुआजीको कह दे, उनकी तबीयत ठीक नहीं, कुछ खायेंगे नहीं।"

विप्रदास चुप बने रहे। मधुसूदनने आशा की थी, कुमुदका ज़िक्र वे खुद ही करेंगे। इतने दिन हो गये, अब कुमुदको ससुराल लिवा ले जानेके लिए विप्रदास आप ही प्रसग छेडेंगे, मगर कुमुदका तो नाम भी नहीं लेते। भीतर-ही-भीतर उसे ज़रा-ज़रा गुस्सा आने लगा। सोचने लगा, यहां आकर भूल की। यह सब नवीनकी

"जानती हो, पुलिस बुलाकर तुम्हें ले जा सकता हूं चुटिया पकड़कर। 'नहीं' कहनेसे ही हो गया।"

कुमुद चुप बनी रही। मधुसूदनने गरजकर कहा—"भइयाके स्कूलमें फिर नूरनगरी चाल सीखना शुरू कर दिया मालूम होता है।"

कुमुदने एक बार तिरछी नजरसे भइयाके कमरेकी तरफ देखा, फिर बोली—"चुप हो जाओ, इस तरह चिल्लाकर बात मत करो।"

"क्यों? तुम्हारे भइयासे डरते हुए बात करना होगा क्या? मालूम है, इसी घड़ी उन्हें मैं घरसे निकालकर रास्तेमें खड़ा कर सकता हूं।"

दूसरे ही क्षणमें कुमुदने देखा कि उसके भइया दरवाज़े पर आकर खड़े हो गये हैं। लम्बा कद है, दुबला-पतला शरीर, पाण्डुवर्ण मुख, बड़ी-बड़ी आंखोंसे ज्वाला निकल रही है, एक मोटा सफेद चदरा ओढ़े हुए हैं—छोर उसका जमीनपर लोट रहा है, कुमुदको बुलाकर कहा—"आ कुमू, मेरे कमरेमें आ जा।"

मधुसूदन चिल्ला उठा, बोला—"याद रहेगी तुम्हारी यह हिमाक़त। तुम्हारे नूरनगरका नूर न मिटा दिया तो मेरा नाम मधुसूदन नहीं।"

अपने कमरेमें पहुचते ही विप्रदास बिछौनेपर लेट गये। आंखें बन्द कर लीं, नींदसे नहीं—थकावट और चिन्तासे ~~~ सिरके पास बैठकर पंखासे हवा करने लगी'

बगलके कमरेमें सोफेकी ओर इशारा करके कुमुदने जब बैठनेके लिए कहा, तो उसे बैठना ही पडा। बिलकुल बाहरका कमरा न होता, तो हाथ पकडकर कुमुदको अपने पास सोफेपर बिठा लेता। कुमुद बैठी नहीं, एक कुर्सीके पीछे उसकी पीठपर हाथ रखकर खडी रही। बोली—"मुझसे कुछ कहना चाहते हो?"

ठीक इस सुरमें यह प्रश्न मधुसूदनको अच्छा न लगा, कहा—"चलोगी नहीं घर?"

"नहीं।"

मधुसूदन चौंक पडा, बोला—"बात क्या है।"

"मेरी तो तुम्हें जरूरत नहीं।"

मधुसूदनने समझा—श्यामासुन्दरीकी बात सुन ली होगी, यह उसीका अभिमान है। यह अभिमान उसे अच्छा ही लगा। कहने लगा—"क्या बात कहती हो, जिसका ठीक नहीं। जरूरत नहीं तो क्या है? सूना घर किसे अच्छा लगता है?"

इस विषयमें वाद-विवाद करनेकी कुमुदकी प्रवृत्ति न हुई। सक्षेपमें फिरसे उसने कहा—"मैं नहीं जाऊंगी।"

"इसके मानी? घरकी बहू घर नहीं जाओगी—?"

कुमुदने सक्षेपमें कहा—"नहीं।"

मधुसूदन सोफेसे उठ खडा हुआ, बोला—"क्या! जाओगी नहीं! जाना ही होगा।"

कुमुदने कुछ जवाब नहीं दिया। मधुसूदन कहने लगा—

है, आयगा कहा। मैं तो जानता हू, तुम्हारे पिताजीने मजिस्ट्रेटको नीचा दिखानेके लिए कम-से-कम दो लाख रुपयेका नुकसान उठाया था। छाती ठोककर विपत्ति बुलाना, यह तो तुम लोगोंका पैत्रिक शौक है। यह बात कम-से-कम हमारे खानदानमें नहीं है, इसीसे तुम लोगोंका पागलपन मुझसे चुपचाप नहीं सहा जाता।—मगर अब बचें कैसे?"

विप्रदास ऊंचे उठे हुए बाएँ घुटनेपर दाहना पैर रखकर तकियेके सहारे लेट गये और आँखें मींचकर कुछ सोचने लगे। अन्तमें सोच-साचकर आँखें खोलकर बोले—"लिखा-पढ़ीकी शर्तके अनुसार मधुसूदन छः महीनेका नोटिस बिना दिये हमसे रुपया मांग ही नहीं सकता। इतनेमें सुबोध आ जायगा असाढ़ महीनेमें—तब कोई-न-कोई उपाय हो जायगा।"

काल्लूने जरा गुस्सेमें ही कहा—"हाँ, उपाय तो हो ही जायगा। बत्तियाँ एक साथ बुझतीं, सो न बुझकर एक-एक करके भद्रतासे बुझेंगी।"

"बत्ती बिलकुल नीचेके खानेमें आकर जल रही है, अब फर्राश उसे चाहे जैसे फूँककर बुझावे—इसमें ज्यादा हाय-तोबा मचानेकी कोई बात नहीं। उस अन्तिम उजालेके लिए तरकीब ढूँढ़ना अब अच्छा नहीं लगता, उससे तो पूरा अन्धकार ही भला है—उसमें शान्ति मिलती है।"

काल्लूके हृदयको चोट पहुंची। उसने समझा—ये अस्वस्थ आदमीके विचार हैं, विप्रदास तो ऐसे निराशावादी नहीं हैं।

देर हो जानेपर क्षेमा-बुआने आकर कहा—"आज क्या खायेगी नहीं कुमू ? रात तो बहुत हो गई ?"

विप्रदासने आँखें खोलकर कहा—"कुमू, जा खा आ।—ज़रा अपने काल्लू-भइयाको भेज देना।"

कुमुदने कहा—"भइया, तुम्हारे पैरों पड़ती हू, अभी काल्लू भइयाको रहने दो, जरा सोनेकी कोशिश करो।"

विप्रदास मुहसे कुछ न कहकर गहरी वेदनाकी दृष्टिसे कुमुदके मुहकी ओर देखते रहे। थोड़ी देर बाद गहरी सांस लेकर फिर आखें मीच लीं। कुमुद धीरेसे उठकर बाहर निकल आई, और दरवाजा भेड़ दिया।

थोडी देर बाद ही काल्लूने खबर भेजी कि वह मिलना चाहते हैं। विप्रदास उठकर तकियेके सहारे बैठ गये।

काल्लूने कहा—"जमाई आकर थोडी देर बाद ही चल दिये—क्या, बात क्या है ? कुमुदको विदाके बारेमें कुछ कहा था क्या उन्होंने ?"

"हां, कहा तो था। कुमुदने इसका जवाब दे दिया है,—नहीं जायगी वह।"

काल्लू बहुत डर गया, बोला—"कहते क्या हो, भाई साहब ! तब तो सत्यानास हो गया।"

"सत्यानाससे हम लोग कभी भी नहीं डरे, डरते हैं असम्मानसे—अपमानसे।"

"तो, तैयार हो जाओ, देर करना ठीक नहीं। सुनमें भरा

"इसलिए पूछ रहा हू कि अन्तमे यदि तुझे वहा जाना ही पडा, तो जितनी देर करके जायगी उतना ही वह भद्दा होगा, उन लोगोंके साथ रहते हुए उनके सम्बन्ध-सूत्रसे तेरा मन कहींसे भी कुछ बँधा है क्या?"

"जरा भी नहीं। सिर्फ नवीनसे, मोतीकी मासे और हाबलूसे मेरा प्रेम हो गया है। मगर वे ठीक दूसरे घरके मालूम होते हैं।"

"देख कुमू, वे ऊधम मचायेंगे। समाजके जोरसे, कानूनके जोरसे उपद्रव करनेका अधिकार उन्हें है। इसीलिए, उसकी उपेक्षा करनी ही होगी। और ऐसा करनेमे लज्जा, संकोच, भय—सबको तिलाजलि देकर मनुष्य-समाजके सामने खडा होना होगा, भीतर-बाहर चारों ओर बदनामीका तूफान उठ खडा होगा, उसके बीचमे सिर उठाकर खडा रहना ही होगा तुझे।"

"भइया, उससे तुम्हारा अनिष्ट और अशान्ति तो न होगी?"

"अनिष्ट और अशान्ति तू कहती किसे है कुमू? तू अगर असम्मानके अदर डूबी रहे, तो उससे बढकर मेरा अनिष्ट और क्या हो सकता है? यदि समझू कि जिस घरमें तू है वह तेरा अपना घर नहीं हो सका—तुझपर जिसका एकमात्र अधिकार है, वह तेरे लिए बिलकुल पराया है, तो मेरे लिए उससे बढ़कर अशान्ति और क्या हो सकती है—मै नहीं सोच सकता। बाबूजी तुझे बहुत प्यार करते थे, लेकिन उस

परिणामको रोकनेके लिए विप्रदास अब तक तरह-तरहके प्लैन सोचते रहते थे। उन्हें आशा थी कि बचा लेंगे। आज उस बातको वे सोच भी नहीं सकते,—आशा करनेका भी ज़ोर नहीं।

कालूने करुण दृष्टिसे विप्रदासके मुंहकी ओर देखते हुए कहा—"तुम्हें चिन्ता करनेकी कोई ज़रूरत नहीं, भाई साहब, जो कुछ करना होगा, मैं ही कर लूगा। जाऊं एक बार दलालोंके यहा घूम आऊं।"

दूसरे दिन विप्रदासके नाम एक अंगरेजीमे लिखी हुई चिट्ठी आई—मधुसूदनकी। उसकी भाषा थी वकीली ढगकी—शायद अटर्नीसे लिखाई होगी। वह निश्चित रूपसे जानना चाहता है कि कुमुदको वे भेजेंगे या नहीं, उसके बाद उचित कार्रवाई करना चाहता है।

विप्रदासने कुमुदसे पूछा—"कुमू, अच्छी तरह सब सोच-समझ लिया है तूने ?"

कुमुदने कहा—"सोचना मैंने खतम कर दिया है, इसीसे मेरा मन आज खूब निश्चिन्त है। ठीक मालूम होता है कि जैसी मैं यहा थी वैसी ही हू—बीचमे जो कुछ हुआ, सब सपना था।"

"अगर तुझे ज़बरदस्ती ले जानेकी कोशिश हुई, तो, तू ज़ोरके साथ अपनेको सम्हाल सकेगी ?"

"तुम्हारे ऊपर अगर ज़ुल्म न हुआ, तो अपनेको मैं खूब अच्छी तरह सम्हाल सकती हू।"

अकेले पढनेमें जी नहीं लगता। तुझे साथी बना लूंगा, ज़रूर तू मुझसे आगे बढ़ जायगी, मैं तुझसे ज़रा भी ईर्ष्या नहीं करूंगा—देख लेना तू।"

सुनते-सुनते कुमुदका हृदय पुलकित हो उठा, इससे बढ़कर जीवनमें और क्या सुख हो सकता है।

थोडी देर बाद विप्रदास फिर कहने लगे—"और एक बात तुझसे कहे देता हू कुमू, बहुत जल्दी ही हम लोगोंका जमाना बदलनेवाला है, हमारा रहन-सहन भी बदल जायगा। हमें रहना होगा गरीबोंकी तरह। तब तू ही होगी हम गरीबोंका ऐश्वर्य।"

कुमुदकी आंखोंमें आंसू भर आये, बोली—"मेरे ऐसे भाग्य हों, तो मैं जी जाऊं।"

विप्रदास मधुसूदनकी चिट्ठीको पी गये, कुछ उत्तर नहीं दिया।

[५६]

दो दिन बाद ही मोतीकी मा और हाबलूको साथ लिये नवीन आ पहुचा। हाबलू ताईकी गोदमें जाकर उसकी छातीसे सिर लगाकर ज़रा रो लिया। उसका यह रोना किस लिए है, मुश्किल है बताना,—अतीतके लिए अभिमान है, या वर्तमानके लिए लाड या भविष्यके लिए चिन्ता?

" छातीसे लगाकर कहा—"कहिन ...

ज़मानेमे मालिक लोग रहते थे दूर-ही-दूर। तेरे लिए पढना-लिखना भी जरूरी है, इस बातको वे कभी सोचते ही न थे। मैंने ही खुद शुरूसे तुझे सिखाया है, तुझे बडा किया है। तेरे लिए मैं पिता-मातासे किसी भी अंशमे कम नहीं हू। सिखा सिखा कर बडा करनेकी जिम्मेदारी कितनी बढ़ जाती है, आज मैं समझ रहा हू। अगर तू और लडकियोंकी तरह होती, तो कहीं भी तुझे बाधा नहीं आती। आज जहा तेरी स्वाधीनताको कोई समझता नहीं—उसकी कोई क़द्र नहीं—वहा तो तेरे लिए नरक है। मैं किस कलेजेसे तुझे वहा निर्वासित करके रहूगा? अगर तू छोटी बहन न हो कर भाई होती, और उस हालतमे तू यहां जैसे रहती, उसी तरह हमेशा तू रह न मेरे पास।"

भइयाकी छातीके पास खाटके किनारे सिर रखकर दूसरी ओर मुह फेरकर कुमुदने कहा—"लेकिन मैं तुम लोगोंपर भार बनकर तो नहीं रहूगी? ठीक कह रहे हो?"

कुमुदके माथेपर हाथ फेरते हुए विप्रदासने कहा—"भार क्यों होने लगी, बहन? तुमसे खूब मेहनत करा लूगा। मेरा सब काम रहेगा तेरे जुम्मे। कोई प्राइवेट-सेक्रेटरी भी इस तरहका काम नहीं कर सकेगा। तुझे बाजा सुनाना पडेगा, मेरा घोडा तेरे जुम्मे रहेगा। इसके सिवा, तुझे मालूम है कि मैं पढाना बहुत पसद करता हू। तुझ जसी छात्रा मिलेगी कहा, बता? ...काम करेंगे, बहुत दिनोंसे मुझे फारसी पढनेका शौक़ है।

अकेले पढ़नेमें जी नहीं लगता। तुझे साथी बना लूंगा, ज़रूर तू मुझसे आगे बढ़ जायगी, मैं तुझसे ज़रा भी ईर्ष्या नहीं करूंगा—देख लेना तू।"

सुनते-सुनते कुमुदका हृदय पुलकित हो उठा, इससे बढ़कर जीवनमें और क्या सुख हो सकता है।

थोड़ी देर बाद विप्रदास फिर कहने लगे—"और एक बात तुझसे कहे देता हूं कुमू, बहुत जल्दी ही हम लोगोंका जमाना बदलनेवाला है, हमारा रहन-सहन भी बदल जायगा। हमें रहना होगा गरीबोंकी तरह। तब तू ही होगी हम गरीबोंका ऐश्वर्य।"

कुमुदकी आंखोंमे आंसू भर आये, बोली—"मेरे ऐसे भाग्य हों, तो मैं जी जाऊं।"

विप्रदास मधुसूदनकी चिट्ठीको पी गये, कुछ उत्तर नहीं दिया।

[५६]

दो दिन बाद ही मोतीकी मा और हाबलूको साथ लिये नवीन आ पहुंचा। हाबलू ताईकी गोदमें जाकर उसकी छातीसे सिर लगाकर ज़रा रो लिया। उसका यह रोना किस लिए है, मुश्किल है बताना,—अतीतके लिए अभिमान है, या वर्तमानके लिए लाड या भविष्यके लिए चिन्ता?

कुमुदने हाबलूको छातीसे लगाकर कहा—"कठिन संसार है, गोपाल, रोनेका अन्त नहीं। क्या है मेरे पास, क्या दे सकती हूं

में, जिससे मनुष्यकी सन्तानका रोना कम हो जाय। रोनेसे रोना मिटाना चाहती हू, उससे ज्यादा शक्ति नहीं मुझमे। जो प्रेम अपनेको देता है—उससे ज्यादा और कुछ दे नहीं सकता—वेटा, वह प्रेम तुम लोगोंको मिला है, ताई तेरी हमेशा नहीं रहेगी, पर इस वातको याद रखना, याद रखना, याद रखना।" कहकर कुमुदने उसकी मिट्ठी ली।

नवीनने कहा—"बऊरानी, अब रजबपुर जा रहे हैं—पैत्रिक घरमें, यहाकी वारी खतम हुई।"

कुमुदने व्याकुल होकर कहा—"मुझ अभागिनने आकर तुम लोगोंपर यह आफत ला दी।"

नवीनने कहा—"ठीक इससे उल्टी बात है। बहुत दिनोंसे जानेके लिए जी चाहता था। वोरिया-बसना बाँधकर तैयार हो रहा था, इतनेमें तुम आ गईं हमारे घर। घरकी आस खूब अच्छी तरहसे ही मिट गई थी, पर विधातासे सहा नहीं गया।"

उस दिन मधुसूदनने घर जाकर एक बडा-भारी कांड रच डाला था—यह पता लगा।

नवीन चाहे कुछ भी कहे, मोतीकी माको सन्देह न रहा कि कुमुदने ही उनकी घर-गिरस्तीको इस तरह उलट-पुलट दिया है, और उस अपराधको वह सहजमें भूलना नहीं चाहती। उसका कहना यह है कि अब भी कुमुदको वहां जाना चाहिए सिर झुकाकर, उसके बाद चाहे जितना अपमान हो, उसे सह लेना चाहिए। उसने स्वरको जरा कठोर करके

ही पूछा—"तुम क्या सासुरेको कभी जाओगी ही नहीं, निश्चय कर लिया है ?"

कुमुदने उसके उत्तरमें कठोरतासे ही कहा—"नहीं, नहीं जाऊँगी।"

मोतीकी माने पूछा—"तो फिर तुम क्या करोगी, गति कहा है तुम्हारी ?"

कुमुदने कहा—"इतनी बडी पृथ्वी है, इसमे कहीं-न-कहीं मेरे लिए भी थोड़ासा ठौर हो सकता है। जीवनमे बहुत-कुछ खो जाता है, लेकिन फिर भी कुछ बाकी रहता है।"

कुमुद समझ रही थी कि मोतीकी माका मन उससे बहुत-कुछ दूर हट गया है। नवीनसे उसने पूछा—"लालाजी, तो क्या करोगे अब ?"

"नदी-किनारे थोडीसी ज़मीन है, उससे रूखा-सूखा खानेको भी मिल जाया करेगा, और कुछ-कुछ हवा भी खानेको मिला करेगी।"

मोतीकी माने जरा गरमीके साथ कहा—"अजी जनाब, इसके लिए तुम्हें फिकर नहीं करनी होगी। उस मिर्जापुरके अन्न-जलपर हक रखती हैं हम भी, उसे कोई छीन नहीं सकता। हम लोग तो उतने ज्यादा इज्ज़तदार आदमी नहीं हैं कि जेठजीके निकाल देनेसे ही चटसे वैरागी होकर चल देंगे। वे ही फिर आज नहीं, कल बुलावेंगे, तब फिर चले भी आवेंगे, तब तकके लिए सब्र है हममें—बस, कहे देती हूँ मैं।"

नवीनने ज़रा क्षुण्ण होकर कहा—"इस बातको मैं जानता हूँ मझली बऊ, लेकिन इसकी मैं बड़ाई नहीं करता। पुनर्जन्म

पतिके साथ कुमुदके तीन महीनेके परिचयने दिनों दिन भीतर-ही-भीतर कैसा विकृत रूप धारण किया है, गर्भकी आशंकासे उसके हृदयपर वह बिलकुल स्पष्ट हो उठा। आदमी आदमीमे जो भेद सबसे अधिक दुरतिक्रमणीय है, उसके उपादान बहुधा अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। भाषामें, भावमें, व्यवहारके छोटे-छोटे इशारोंमें, जब कुछ भी न कर रहा हो उस समयके अव्यक्त इङ्गितमें, गलेके स्वरमें, रुचिमें, रीतिमें, जीवन-यात्राके आदर्शमे उस भेदके लक्षण आभास-रूपमें फैले रहते हैं। मधुसूदनके अंदर ऐसी कोई चीज़ है, जिसने कुमुदको केवल चोट ही पहुंचाई हो, सो नहीं, उसे बहुत ज्यादा शर्मिन्दा भी किया है। उसे वह अश्लील-सा मालूम हुआ है। मधुसूदन अपने जीवनके प्रारम्भमें एक दिन बहुत ज्यादा ग़रीब था, इसीलिए 'पैसे' के माहात्म्यके विषयमे वह बात-बातमें अपनी जो राय ज़ाहिर करता था, उस गर्वोक्तिके अंदर उसकी रक्तगत दरिद्रताकी एक हीनता भरी रहती थी। बार-बार इस 'पैसा-पूजा' का ज़िक्र वह कुमुदके मायकेवालोंपर चुटकी लेनेके लिए ही करता था। उसके उस स्वाभाविक ओछेपनने, भाषाकी कर्कशताने, दाम्भिक असौजन्यने कुल मिलाकर मधुसूदनके शारीरिक और मानसिक, गार्हस्थिक और आन्तरिक भद्देपनने प्रतिदिन कुमुदके सम्पूर्ण शरीर और मनको संकुचित कर दिया है। उसने जितनी ही इनको दृष्टिके सामनेसे, चिन्ताके भीतरसे दूर हटा देनेकी कोशिश की है, उतने ही वे पृष्ठ-स्थानमें जाकर चारों ओर जमा हो गये हैं। अपने मनके इस

घृणा-भावके साथ कुमुद स्वयं जी-जानसे लड़ती आई है। पति-पूजाकी कर्त्तव्यताके विषयमें संस्कारको शुद्ध रखनेके लिए उसकी कोशिशका अन्त न था, परन्तु उसकी कितनी बड़ी हार हुई है—इस बातको उसने इससे पहले इस तरह कभी नहीं समझा है। मधुसूदनके साथ उसके रक्त-मांसका बन्धन अविच्छिन्न हो गया, उसकी बीभत्सता उसे बड़ी भारी पीड़ा देने लगी। कुमुदने अत्यन्त उद्विग्न होकर मोतीकी मासे पूछा—"कैसे तुमने निश्चय जान लिया?"

मोतीकी माको बहुत गुस्सा आया, अपनेको सम्हाल कर बोली—"लड़केकी मा हूं मैं, मैं नहीं जानूंगी तो जानेगा कौन? तो भी अभी बिलकुल निश्चयके साथ कहनेका समय नहीं हुआ। किसी अच्छी दाईको बुलवाकर परीक्षा करा लेना अच्छा है।"

नवीन, मोतीकी मा और हाबलूके जानेका समय हो गया, परन्तु दैवके इस चरम अन्यायकी बातको छोड़कर आज कुमुद और किसी विषयमें सोच ही नहीं सकती थी। इसीसे सासुरेके इन मित्रोंको उसने बहुत ही साधारण भावसे विदा किया। नवीनने जाते समय कहा—"बऊरानी, संसारमें सभी वस्तुओंका अवसान है, पर तुम्हारी सेवा करनेका जो अधिकार मुझे सहसा एक ही दिनमें मिल गया था, उसका इस ढंगसे अचानक एक दिन अन्त हो जायगा—इस बातकी मैंने कल्पना भी नहीं की। फिर कभी भेंट होगी।" नवीनने प्रणाम किया, हाबलू चुपचाप रोने लगा, मोतीकी मा मुँहको कठोर बनाये रही, एक बात भी नहीं की।

विप्रदास बिस्तरसे उठकर चौकीपर आ बैठे। मरीजकी तरह सोते रहनेसे मन कमज़ोर रहता है। अपने सामने कुमुदके लिए एक छोटीसी चौकी रख छोडी है। बत्ती घरके एक कोनेमे ज़रा ओटमें रखवा दी है। सिरके ऊपर एक पखा चल रहा है। बैसाख-जेठके आकाशमे उस समय भी गरमी इकट्ठी हो रही थी, दखिनी हवा बीच-बीचमे जरा सांस छोडती और थककर रह जाती, पेडके पत्ते मानो कान लगाकर कुछ सुन रहे हो—ऐसा सन्नाटा है। समुद्रके मुहानेपर गंगाने जहां नीले जलको फीका कर दिया है, ठीक वैसा ही है मानो आजका यह अन्धकार। लम्बा फैला हुआ गोधूलिका अन्तिम प्रकाश उस समय भी सन्ध्याकी उस कालिमामे मिला हुआ है। बगीचेका तालाब छायासे अदृश्य रहता था, किन्तु आज खूब चमकते हुए एक तारेका स्थिर प्रतिबिम्ब आकाशकी अंगुली बनकर इशारेसे उसे दिखा रहा है। पेडोंके नीचेसे लालटेन हाथमें लिये नौकर-चाकर जा-आ रहे हैं, और बीच-बीचमें उल्लू बोल रहे हैं।

कुमुद शायद कुछ इधर-उधर करने लगी—उसे आनेमे ज़रा देर लग गई। विप्रदासके पास चौकीपर बैठते ही उसने कहा—"भइया, मुझे अब कुछ भी अच्छा नहीं लगता, मानो मेरी कहीं जानेकी इच्छा होती है।"

विप्रदासने कहा—"गलत समझा है तूने कुमू, तुझे अच्छा लगने लगेगा। और कुछ दिन बाद ही तेरा मन भर उठेगा।"

"मगर फिर—" कहकर कुमुद चुप रह गई।

"सो तो मैं समझता हूं,—अब तेरा बंधन तोड कौन सकता है?"

"अच्छा,—पहले होने दे लडका, उसके बाद कहना।"

"तुम्हें विश्वास नहीं होता, लेकिन माकी बात याद है तो? उनकी तो हुई थी इच्छा-मृत्यु। उस दिन ससारमें उन्हें अपने लिए स्थान नहीं मिल रहा था, इसीसे वे अपने लडके-बालोंको अनायास ही छोडकर जा सकी थीं। मनुष्य जब मुक्ति चाहता है, तब कोई भी उसे रोक नहीं सकता। मैं तुम्हारी ही बहन हू भइया, मुक्ति चाहती हू मैं। एक दिन, जिस दिन बन्धन टूटेगा, मा उस दिन मुझे आशीर्वाद देंगी, यह मैं तुमसे कहे रखती हू।"

फिर बहुत देर तक दोनों चुप रहे। सहसा ज़ोरकी हवा आई, तिपाईपर विप्रदासकी पढनेकी किताब रखी थी, फर्र-फर्र उसके पन्ने उलट जाने लगे। बगीचेसे बेलाकी सुगन्ध आने लगी—कमरा महक उठा।

कुमुदने कहा—"मुझे उन लोगोंने जान-बूझकर कष्ट दिये हों, यह मत समझना। वे मुझे सुख दे नहीं सकते—मैं इसी ढंगसे बनाई गई हू। मैं भी उन्हें सुखी नहीं कर सकती। जो आसानीसे उन्हें सुखी बना सकते हैं, उनकी जगह घेर लेनेसे एक-न-एक सकट आनेकी ही सम्भावना है। तो फिर यह विडम्बना क्यों। समाजकी तरफसे अपराधका सारा अपमान मैं ही अकेली झेल लूँगी, उनपर किसी तरहका कलंक न लगने दूंगी। परन्तु एक दिन उन्हें भी मुक्ति दूगी, मैं भी लूँगी, चली आऊगी ही—देख लेना तुम। असत्य होकर